ज्योति-पुरुष

और टूट गया माला का ही सुन्दर मोती है !
कौन कह रहा—'गंगा-जमुना आज विलखती है' ?
सावन में भी प्यासी कोई कली चटखती है !
खिलने से पहिले ही कैसे पाटल मुरझाया ?
कौन साँस के बचपन में ही पतझर ले आया ?
मैं पतझर से कैसे मधु-ऋतु का शृंगार करूँ ?
कैसे मैं अपने अधरों पर ये अंगार धरूँ ?
कोई ऐसा दर्द भला सह कैसे जी लेगा ?
अपने हाथों कोई कैसे विषघट पी लेगा ?

रो मत मेरे देश !

—अशोक जैन 'रश्मि'

रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल ।
लहराये जब तक कल-कल कर गंगा औ' यमुना का पानी ।
परिलक्षित हो इस देश में स्वतन्त्रता की अमर निशानी ।।
भारत की नौका पर जब तक तना शान्ति का पाल ।
रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल ।।
जब तक हँसता रहे सलौना शशि-मुख नील गगन में ।
स्वतन्त्रता की महके सुरभि नित्यप्रति मस्त पवन में ।।
जब तक भारत का रहेगा शस्त्र अहिंसा ढाल ।
रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल ।।

वीर जवाहर

—शिवनारायण भटनागर 'साक़ी'

विश्व मन हरता
नयनों का तारा

पथ-प्रदर्शक
प्रिय जन-जन का

सिसकी भरती मातृ-भूमि
पंछी उड़ चला नीड़ से !
हिमालय रह गया अवाक्
देख कालिमा मन में !
कल-कल करती नदियाँ स्तब्ध
श्रवण कर
"छोड़ चला धरती को
भारत का वीर जवाहर"
कौन जाने
कब हों दर्शन
ऐसे महामानव के

कठिन साधना से

—सतीशकुमार अवस्थी

जब वर्षा के जौहर हृदय हिला देते हैं
भीम, भयावह गर्जन प्रलय बुला लेते हैं
व्याकुल अम्बर का उर पूर्ण शांति पाने को—
आकुल हो उठता, मधुर कांति पाने को
तब फिर तम की सीमाओं का स्वत्व मिटाकर
स्वर्ण-छटा से तिमिर-आवरित तत्व हटाकर
सतरंगी पलकों से चाप निहारा करता
जो कि गगन में सुन्दर रूप निखारा करता
शांतिपरक प्रिय इन्द्र-धनुष जब जब उगता है
सुमधुर, सरस, नवल सौंदर्य तभी जगता है
लगता है सुषमा आरती उतार रही हो
और अभ्र के उलझे केश सँवार रही हो
शांति-सुन्दरी आत्म-तुष्टि का प्रथम चरण है
आत्म-तोष का क्षण ही एक प्रबलतम क्षण है

यों ही वसुधा पर जब ज्वार जगा करते हैं
उर दहलाने को अंगार जगा करते हैं
इन्द्र-धनुष की प्रत्यंचा को तभी चढ़ाने
तथा शिवम् के आराधन हित कदम बढ़ाने
कोटि युग-पुरुष भू पर जन्म लिया करते हैं

तुम मरे नहीं, बस मौन हुए !

सम्पादकीय

विश्व के इतिहास में ऐसे महापुरुषों की संख्या गिनी-चुनी होती है जो अपने निर्लिप्त गुणों के द्वारा युगव्यापी प्रभाव छोड़कर अमरता का पद प्राप्त कर सकें। हमारे देश में गौतम बुद्ध, अशोक और गांधी की परम्परा में पं० जवाहरलाल नेहरू ऐसे ही कालजयी पुरुष हुए हैं। राजनीति के कर्दम में रहते हुए भी उन्होने आजीवन अपने व्यक्तित्व को कमल के समान स्वच्छ बनाये रखा।

सन् १९४७ से सन् १९६४ तक की भारतीय राजनीति के संचालक नेहरू जी अब नही रहे। उनके पार्थिव शरीर को समाप्त हुए लगभग तीन वर्ष हो गए है, किन्तु लगता है कि जैसे यह कल की ही बात है। समय की तेज गति उन पर विस्मृति की धूल नही चढ़ा सकी। देश के सुयोग्य प्रधानमत्री के रूप में वर्तमान उन्हें जीवित रखने के लिए निरन्तर सचेष्ट है।

जन्म और मृत्यु जीवन के शाश्वत सत्य है। सृष्टि के आदि से अब तक न जाने कितने मनुष्य प्रकाश-किरण के समान इस संसार में आए और अनायास काल-रात्रि के अंधकार में पर्यवसित हो गए। उनका अभाव आत्मीयो के लिए भी अनुभूति और व्यापकता की दृष्टि से स्थायी न बन सका। पं० नेहरू इसके पवाद है। उनके स्वर्गवास पर देश-विदेश के राजनीतिज्ञों, साहित्यकारों तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा भाषणों और पत्र-पत्रिकाओं में, लेख व कविताओं आदि के माध्यम से, जितने शोकोद्गार व्यक्त किए गये है उनसे नेहरू जी की विश्वव्यापी लोकप्रियता का सहज अनुमान किया जा सकता है। 'ज्योति-पुरुष' इन्ही में से कुछ शोकाञ्जलियों का संकलन है।

'ज्योति-पुरुष' के सम्पादन का कार्य नेहरू जी के स्वर्गवास के ठीक एक वर्ष पश्चात्, अर्थात् २७ मई १९६५, को दिल्ली की साहित्य-संस्था 'आराधना' की ओर से प्रारम्भ किया गया था। जिन कवियों ने अपनी रचनाएँ इस स्मृति-ग्रन्थ में संकलित करने की अनुमति दी है उनके प्रति मै आभारी हूँ। निरन्तर पत्र-व्यवहार करने पर भी कुछ कवियों का उत्तर प्राप्त नही हो सका था, किन्तु ग्रन्थ की गौरव-रक्षा के लिए उनकी रचनाएँ भी संकलित कर ली गई

हैं। इस ग्रन्थ की आय 'आराधना' के स्थायी कोष में दी जाएगी—अतः आशा है कि उन कवियों को कोई आपत्ति न होगी।

प्रस्तुत स्मृति-ग्रन्थ की विषय-सूची वर्णानुक्रम से तैयार की गई है, किन्तु कविताओं का प्रकाशन कवि-विशेष को दृष्टि में न रख कर कविता के आन्तरिक मूल्यों के आधार पर ही किया गया है। मूल्यांकन का सम्पूर्ण दायित्व मेरा रहा है—और इसी कारण मैं इस संकलन के सभी कवियों से क्षमा-प्रार्थी हूँ। कलेवर की वृद्धि के कारण लगभग तीन सौ कविताओं का उपयोग इस ग्रन्थ में नहीं किया जा सका है। आशा है उनके रचयिता कवि परिस्थिति की विवशता को देखते हुए अन्यथा न समझेंगे।

३ सी—१४ रोहतक रोड,
करौल बाग, नई दिल्ली—५

—रमेशचन्द्र गुप्त

नामानुक्रमणिका

कवि	पृष्ठ संख्या

कवि	पृष्ठ संख्या

कवि	पृष्ठ संख्या	कवि	पृष्ठ संख्या

———

जय जवाहरलाल की !

—मैथिलीशरण गुप्त

हम कोटि कोटि कुटुम्बियों की, और विश्व विशाल की,
सुख-शांति-चिन्ता थी तुम्हारी सहचरी चिरकाल की !
तुम जागते थे रात में भी जबकि सोते थे सभी,
जनमात्र की सच्ची विजय है, जय जवाहरलाल की !!

शांतिसूर्य वह

—सुमित्रानन्दन पन्त

कहते, सूरज अस्त हो गया !
सूरज कभी न उदय-अस्त होता प्रिय बच्चो,
उसका उदय अनन्त उदय है—
नए-नए अरुणोदय लाता वह भू-पथ पर,
नई सुनहली किरण बिखेर नए क्षितिजों में !
सूरज अस्त नहीं होता है !
महापुरुष भी कभी नहीं मरते
प्रिय बच्चो,
मृत्यु-द्वार कर पार अमर बन जाते हैं वह,
और युगों तक जीवित रहते जन गण मन में !
मृत्यु गुहा के अंधकार का द्वार पार कर
अगणित सूर्यों का यह कौन सूर्य हँसता अब ?—
भारत के आकाश दीप में !—
युग जीवन का नव प्रभात ला
भू आँगन पर !
उदित हुआ स्वातंत्र्य सूर्य नव,
स्वर्णिम किरणों का जगमग
टँग गया चंदोवा नील मुक्ति पर !
वह अमरत्व भरी तन की रज
बरस रही अब चिद् अंबर से धरा धूलि पर—
गिरि शिखरों, सर-सरिताओं-सागर-लहरों से
खेल रही वह—
लोट रही भू के खेतों में

नर रत्नों की पीढ़ी को
नया जन्म देने को !—
नव आशा उल्लास, नई शोभा संपद् को
जीवन हरियाली में
अक्षय शौर्य-वीर्य की
स्वर्णिम मंजरियों में फिर-फिर मुसकाने को।
अंध मृत्यु-भय की खोहों को आलोकित कर
एक समूचे कर्म जागरित लोक राष्ट्र की
आत्मा का रस-सूर्य
सांस्कृतिक स्वर्णोदय बन
जाग उठा अब
अस्त कर तमस !
मृत्यु सिन्धु को तिर, मानवता का प्रकाश नव
उतर रहा जन भू जीवन के
मंगल तट पर !
उसके मस्तक को छू हिमगिरि ऊँचा लगता,
उसके पदतल धो सागर जल पावन बनता;
उसकी बाँहें निखिल दिशाओं को समेटतीं,
उसका मानस विश्व मनस बन
जग जीवन में मुखरित होता !
जन्म मृत्यु भी तो है,
अविनश्वर आत्मा का
सित स्फुलिंग बुझता रहता फिर-फिर जल उठने !
आकाशों की ऊँचाई में
अंतरिक्ष के विस्तारों में
मनुज हृदय की गहराइयाँ उँड़ेल निरंतर,
शांति सूर्य वह
भू को स्वर्णिम पंखों की छाया में लिपटा
नव जीवन सन्देश दे रहा
निखिल विश्व को !
ताल ठोंकता अणु दानव
गिरि शृंग पर खड़ा—

गत युग का वर पशु
लोहे के पंजे फैला
बिजली की टाँगों पर दौड़
दहाड़ रहा है—
हिंसा के मुखड़े से भीषण अट्टहास भर,
अणु बम का मोदक दबोच बाईं मुट्ठी में !
सावधान, आने वाली पीढ़ी के बच्चो,
सावधान भारत के युवको,
राष्ट्र शक्ति के जीवन स्तंभो,
आज तुम्हारे ही कंधों पर लेटा है वह अमृत पुरुष
द्यावा पृथ्वी तक—
ध्यानमग्न गौतम समाधि में।
योग्य बनो तुम,
वहन कर सको साहस से दायित्व देश का,
नए राष्ट्र का,
नए विश्व, नव मनुष्यत्व का !

सत्ताईस मई

— डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन'

चाल काल की
कितनी तेज कभी होती है !
अभी प्रात ही तो हमने प्रस्थान किया था
और दोपहर आते-आते
जैसे हम युग एक पार कर खड़े हुए है !
आसमान का रंग,
धरा का रूप
अचानक बदल गया है।
वह पर्वत जो साथ हमारे चलता-सा था
ओझल सहसा,

देवदार वन झाड़ी-झुरमुट में परिवर्तित,
धूलि-धुन्ध में खोई-खोई हुई दिशाएँ,
रुकी हवाएं,
सारा वातावरण
अनिश्चय, आश्चर्य, आशंका विजड़ित !

स्पष्ट परिस्थिति।
फूट पड़ा कोलाहल-क्रन्दन,
आँख-आँख में विगलित जल-कण,
जन-जन विचलित, व्याकुल, निर्धन।
क्या न पकड़ना सम्भव होगा कुछ बीते क्षण ?
सहज नहीं मन मान सकेगा—
यह युग की इति !
यह युग की इति !!

राह रोककर काल खड़ा है—
'ओ मानव नादान, बता तो
पीछे किसका क़दम पड़ा है ?"
किन्तु कल्पना, विह्वल, पागल,
कालचक्र को बारंबार उलटकर कितने
विगत क्षणों को फिर-फिर जीती,
प्यासी रहती, प्यासी रहती, प्यासी रहती,
मृगजल पीती !

काव्यांजलि

—सोहनलाल द्विवेदी

वज्रपात हो गया अचानक ! रोने से क्या ? धैर्य धरो,
अन्धकार छाया है गहरा, नई किरण बन कर उभरो !

जिस सेनापति ने जानी अपने जीवन में हार नहीं,
आँसू की मालाओं से होगा उसका शृंगार नहीं।

सच है, जो क्षति हुई कभी भी उसकी पूर्ति नहीं होगी,
लाख बार विधि गढ़े, जवाहर की-सी मूर्ति नहीं होगी।

सच है, जो हो गया घाव, वह आज नहीं है भरने का,
आज प्रतिज्ञा का दिन है, जीवन-भर पूरा करने का।

उसका पथ, उसका व्रत ही अब अपनी स्नेहांजलि होगी,
उसका स्वप्न सत्य करना ही सच्ची श्रद्धांजलि होगी !

यह जवाहर-दीप भी ले लो !

—डॉ० देवराज

यह जवाहर-दीप भी ले लो !
देश के गत औ' अनागत के अधिष्ठाता
ऐ अजर इतिहास ! रक्षा-गुरुप !
यह हमारी साधना का सित नया हीरा
यह हमारा नर-रतन निष्कलुप;
संकटों के तिमिर-प्लावन में चमकता जो
स्थिर, अकम्पित—ज्योति का यह
दीप भी ले लो !

सौम्य, कोमल, शिष्ट भी मन का बड़ा मानी
शीश गर्वीला गगन से मिला,
द्रोह-दहते विश्व के आशा-क्षितिज पर जो
स्नेह-मैत्री का अमृत ले खिला;
देख उर-आँखें जुड़ा जातीं जिसे जन की
वह हमारा चाँद
शोभातीत भी ले लो !

वीर-विद्रोही कि जो साम्राज्यशाही के
ढा गया दृढ़ द्वार चौड़े क़िले,
धीर, जिसके मन्द्र-घन स्वर की चुनौती से
[illegible] के भी नहीं ऊँचे किले;

त्रस्त, उत्पीड़ित जनों का सुहृद, निर्भय बन्धु
मनुज-गौरव का अचल
उद्गीथ भी ले लो !

लक्ष जन के विलष्ट-चिन्तित मुखों का तकते
सोच-डूबे, स्निग्ध-गीले नयन,
आँकते इतिहास की गति बुद्धि-मन उद्विग्न
शान्तिपथ-निर्देश करते वचन;
यह हमारे बोध-वाणी-कर्म का नूतन
स्वच्छ संगम, दृष्टियों का
तीर्थ भी ले लो !

काल-नर ! ये युग-क़दम, शतियाँ विवर्त्तन की
नित तुम्हारी हों शुभालोकित,
इसलिए शुचि बुद्ध गान्धी, विमल प्रियदर्शी
औ' कृती अकबर किये अर्पित;
घृणा की कालौंछ से निर्मुक्त, शीलोज्ज्वल
यह जवाहर-अर्चि
ज्योतिस्फीत भी ले लो !
यह मणि-दीप भी ले लो !

जीवन की हो गई मृत्यु

—रमेशचन्द्र गुप्त

जीवन की हो गई मृत्यु, विश्वास खो गया।
धूलि-कणों में आज जवाहरलाल सो गया॥
जिसने अपना तन-मन-धन बलिदान किया था,
देश-प्रेम के लिए हृदय का दान दिया था।
सागर-सा गम्भीर, अडिग था जो ध्रुव जैसा,
राजनीति की कीच, कमल-सा उगा हमेशा।
वह प्रकाश का स्तम्भ अचानक ध्वस्त हो गया।
जीवन की हो गई मृत्यु, विश्वास खो गया॥

जिसकी यश:पताका उड़ती रही निरन्तर,
दुश्मन में भी जिसने कभी न समझा अन्तर।
जो भारत के लिए मसीहा बन कर आया,
जिसने केवल गीत शान्ति का ही था गाया।
वह जीवन का सत्य अचानक स्वप्न हो गया।
धूलि-कणों में आज जवाहरलाल सो गया॥
संकल्पों का महातेज था, युग-द्रष्टा था,
मूर्तिमान तप, पंचशील का वह सृष्टा था।
रहा शान्ति का दूत, क्रान्ति का सदा विरोधी,
मानवता के मूल्यों का जो अद्भुत शोधी।
वह मृत्युंजय मर कर भी अब अमर हो गया।
जीवन की हो गई मृत्यु, विश्वास खो गया॥

अवतार न उसको कह बैठें !

—विजयकुमार छावछरिया

इतिहासकार !
अध्याय खतम करने के पहले
पृष्ठ उलटने के पहले,
लिख दे स्वर्णिम अक्षर में नेहरू मानव था,
अस्थि-चर्म-मय तुझ-सा ही।

डर है कि कहीं आने वाली संतति कल की,
विश्वास न कर पाए मंदिर में उसे देख,
इस धरती पर ऐसा भी मानव डोला था !
डर है कि कहीं वे उसकी गाथा सुन-सुन कर
अवतार न उसको कह बैठें !

यदि ऐसी भूल हुई कोई आगे चलकर
हम इस 'अपने' को दूर बहुत कर डालेंगे,
हम अभी-अभी जिसके हित प्यार लुटा आए—
हम ऐसे आलिंगन में बद्ध हुए जिसके

जो विश्वात्मा बन गया हृदय के वैभव से।
मानवता की जो भरी-भरी है गोद आज,
भारत के उन्नत मस्तक का जो गौरव है,
वह गोद लुटी मुँह ताक-ताक रह जाएगी
भारत का गौरव लुटा-लुटा रह जाएगा।

इतिहासकार !
इतना लिखकर फिर श्रद्धा से
अध्याय शेष करना ये फूल चढ़ा कर के।

आज मिली माटी से माटी !

—डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण'

आखिर तो उर्वरता की भी अपनी सीमा;
नर हो, चाहे नारी हो, चिकनी माटी हो !
शोणित के परमाणु कहाँ तक लाल रहेंगे—
गुलमुहरों के या अनार के फूलों से, या स्वर्ण उषा से
चिर तेजोमय, चिर ऊर्जस्वित !
अन्न, फूल, फल पैदा करती हार गई थी,
सदियों तक चिर युवा धरित्री,
ऋतु-कोपों से, तीक्ष्ण हलों के फालों से हो आहत-जर्जर !
उसे चाहिए थी बस अब तो—
उर्वरतामय खाद,
कि धरती लाख-लाख वर्षों तक पाले अपने धूल-भरे हीरों को !
पर, यह धरती कितनी विपुला, कितनी गहरी,
औ' कैसी दुर्भेद्य, अँधेरी !
खाद चाहिये थी बस उसको, दीप्त जवाहर-भस्मी की ही !
तेज हवाओं में, बूँदों में;
मेघों से भी ऊपर से भुरकाई जावे जो जितनी ही,
वह उतनी ही बड़े वेग से

धँस धरती के रोम-रोम में, स्नायु-जाल में
उपजावे तर-गरम वही तासीर जवाहर के शोणित की
अहा, भस्म वह
पवन-लहरियों की पाँखों पर चढ़कर फैली दसों दिशा में,
बूँदों की गोदी चढ़ उतरी, प्यार-भरी सतहों में भू की !
(जो कण उछले अम्बर में—हो गये नखत वे !)
महामिलन था !
अब तो खेतों में उपजेंगे रस के मोती,
पन्ने जैसी दूब उगेगी,
पौधों का रस पी चहकेंगे चंचल पंछी ज्वलित जवाहर की
सांसों-से !
क्योंकि मिली है अब धरती को नूतन खाद रसायन वाली—
जिसमें भिदी हुई है उड़ती कुंकुममय सुरभित मुसकानें !
और जेठ के अरुणोदय की ऊषा की कंचन तरुणाई !
दूर अनागत में उलझी-सी, या अटकी-सी
मानव का सुख कल्पित करने वाली आँखों में पलुहाते नील सपन
की झीनी पन्नी;
चरणों की तूफानी गतियों का रिमझिम संगीत सुरीला;
युवा विधुर की सुधियों की सतरंग मादकता;
एकाकार, देश की मिट्टी में होने की पंखिल चाहें !
आज, मिली माटी से माटी !

अन्तिम इच्छा

—निरंकार देव सेवक

मैं मरूँ देश में अपने या
निर्जन विदेश में किसी कहीं
मेरे शव को
पृथ्वी मे दफ़ना कर समाधि
या क़ब्र न बनवाई जाये।

रख एक चिता पर, आग लगा, कर देना उसे भस्म ऐसे
मैं कोई कहीं न था जैसे !

जो धार्मिक कृत्य किये जाते हैं
चिता जलाने से पहिले-पीछे
उन पर मेरा किंचित् विश्वास नहीं।
दुनिया दिखलावे को भी मैं उनके 'आगे झुक जाऊं'
यह अपने से छल करना मुझको हरगिज स्वीकार नहीं होगा।

मैं चिन्तित हूं
भारत जिन जड़ विश्वासों के बन्धन में जकड़ा है अब भी
जो भेद-भाव उपजाते है
स्वाधीन मनुष्यों के विकसित होने पर रोक लगाते हैं—
उन सब से मुक्ति मिले उसको।

मैंने अतीत के मोह-पाश काटे
तोड़े प्राचीन प्रथाओं, परम्पराओं, रीति-रिवाजों के बन्धन
लेकिन फिर भी
मैं अपने उस स्वर्णिम अतीत से अलग न होना चाहूंगा
जिसके कारण भारत सदैव
गौरवमय उच्च महान् रहा
जिस पर मुझको अभिमान रहा
जिससे मुझको प्रेरणा मिली
जिसकी शाखा पर ही मेरे जीवन गुलाब की कली खिली।

मेरी अन्तिम इच्छा है यह
तुम मुझे चिता पर जला, राख—
मेरी बस मुट्ठी भर लेकर
गगा में फेंक बहा देना
जिससे वह जाकर मिल जाये
उस हिन्द महासागर में जो भारत के चरणों को धोता।
धार्मिक विश्वास नहीं है यह
अपने बचपन से ही मुझको गंगा से बेहद प्यार रहा।
मैंने संगम पर जा गंगा-यमुना को देखा बार-बार
ऋतुओं के अगणित रंगों में

वह प्रात समय इठलाती है
इतराती है, मुस्काती है
संध्या में मौन रहस्यमयी
धुँधली उदास हो जाती है।
वर्षा ऋतु में वह सागर-सी गभीर अतल
करती है भीषण अट्टहास
जाड़े में शीतल शान्तिमयी भरती हृदयों में नवोल्लास !
वह है भारत भू के अतीत गौरव गिरि से निकली धारा
जो वर्त्तमान मे आ, मिलाकर
उज्ज्वल भविष्य के सागर तक
बहती जाती है चिर चचल
प्रतिक्षण प्रति पल कल-कल छल-छल।
उससे सम्बद्ध हमारी हैं कितनी गाथायें, विजय-गीत
आशायें, अभिलाषायें, भय !
पावनता में वह भारतीय—
सभ्यता और संस्कृति की है अनुपम प्रतीक।

मेरी अन्तिम इच्छा है यह
मेरे तन की जो बचे राख
तुम वायुयान में ले जाकर देना बिखेर—
उन सब खेतों खलिहानों में
जिनमें भारत के दीन कृपक
मेहनत कर उपजाते अनाज
जिससे उनके पैरों नीचे
मैं वह सुख पाता रहूं सदा
जो नहीं स्वर्ग में मिल सकता।
मेरे तन का कण-कण मेरी प्राणाधिक प्रिय भारत भू में
गिर कर ऐसा घुल मिल जाये
मैं अलग न हो पाऊँ उससे
वह अलग न हो पाये मुझसे !

ज्योतिष्मान

—केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'

वह मिट्टी की काया थी अथवा मंदिर अभिराम,
जिसमें मानव-मंगल की बसती थी ज्योति ललाम।
वह साँसों का मात्र पथिक था या अजेय अभियान,
जिसकी चरणध्वनि पर बलि-बलि जाते थे तूफ़ान।।
रुक जाता था प्रलय देखकर जिसका मोहक हास,
वह था अलिखित पृष्ठ या कि युग का अखंड इतिहास !!

सूर्य चंद्र तारों को पढ़ कर किया स्वप्न निर्माण,
उँगली की पोरों से नापा बंधन का परिमाण।
द्रवित अनल कर भरा विचारों, भावों में अविराम,
परिचय लिखा अवनि-शिखरों पर नभ-शिखरों पर नाम।।
मुक्ति चाहती जीवन का सम्पूर्ण समर्पण, दान,
दे डाला सर्वस्व—हृदय, मन, वाणी, आँसू, गान !!

संकल्पों का महातेज, संकल्पात्मक उल्लास,
मूर्तिमान तप, अविजित गौरव, बलिदानी विश्वास।
स्रोत प्रेरणाओं का अक्षय जगमग ज्योतिष्मान,
गंगा, यमुना, सरस्वती का पुण्यामृत अम्लान।।
चूर-चूर कर इन्द्रधनुष को रचा नया संसार,
किया स्नेह से, प्राण-पुष्प से कण-कण का शृंगार !!

वही नहीं, हम रिक्त हुए, हम शून्य हुए आक्लिन्त,
एक दीप बुझ गया, शृंखला एक हो गई छिन्न।
ओ निर्मम नभ ! लौटा दो मेरे समुद्र का ज्वार,
लौटा दो मेरे हिम-शिखरों का अजेय हुंकार।।
लौटा दो मेरे खेतों-खलिहानों की मुसकान,
कोटि-कोटि कंठों का लौटा दो फ़ौलादी गान !!

हम भविष्य के प्रहरी हैं, हम प्रेम-शान्ति के दूत,
अरी हवाओ ! लौटा दो वह आग मन्त्र से पूत !

विश्व-विभूति जवाहरलाल नेहरू

—डॉ० हरिशंकर शर्मा

मान्य जवाहरलाल नेहरू, नेता निपुण हमारे थे,
भारत माता के महान् सुत जन-जनता के प्यारे थे।
बने विश्व के विभव विलक्षण सुयश ज्योति जगमगा गये,
जन्म-भूमि को प्राण-दान दे सोती जनता जगा गये ॥
भौतिक देह नहीं है जग में, कीर्ति-ध्वजा फहराती है,
श्रान्त, क्लान्त या भ्रान्त जनों को शुचि सन्मार्ग सुझाती है।
बड़े भाग्य से ही ऐसे जन धरा-धाम पर आते हैं,
अपने उच्चादर्शों द्वारा वे कृतार्थ कर जाते हैं ॥
इनके चरण-चिह्न पर चलना ही ध्रुव ध्येय हमारा है,
उन्नति का सत् स्रोत यही है, यह ही सुदृढ़ सहारा है।

हे मानव सिरताज !

—डॉ० कन्हैयालाल सहल

अथ से इति तक जीवन का अध्याय तुम्हारा
हे मानव सिरताज ! रहा जग का उजियारा।
जीवन में सम्मान अपरिमित तुम्हें मिला था
तुमको पाकर स्वयं मृत्यु को मान मिल गया !!
तव कृतित्व से व्यक्ति तुम्हारा कहीं उच्चतर,
पूजेगा इतिहास तुम्हें, तुम दिव्य भव्यतर।
चिर नवीन चिर युवक रहे तुम जीवन प्रेमी
अमिट प्रेरणा-स्रोत ! प्रगति-पथ के अनुगामी ॥
सत्य संचरणशील अहिंसा नूतन अभिनव,
'सत्य-पुरुष' से प्राप्त दाय-छवि पल-पल नव-नव।
तुम से मानो मौत बहुत ही डरी हुई थी,
रही दूर ही दूर, सामने नहीं हुई थी !!
छिप-छिप आती देख तुम्हें वह भग-भग जाती,
मूर्च्छित करके किन्तु अंत में तुम्हें ले

अभी-अभी सोया है मसीहा मुहब्बत का

—डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन'

सो गए थके-माँदे
पांथ मानवता के
शान्तिदूत, क्रान्तिजयी !
विगलित मन सिसको नहीं,
सिरहाने शूर के आहिस्ता बोलो,
अभी-अभी सोया है
मसीहा मुहब्बत का ।

धरती, थरथराओ मत,
आसमान, सब्र करो ।
ठीक है, हजारों साल बाद
यहाँ आया था !
अब कब आएगा,
इसका ठिकाना नहीं !
फिर भी जगाओ मत,
पूरा-का-पूरा इस बार का मनुष्य-जीवन
जग कर बिताया है,
आँखों की लाली
उदयाचल सहेज ले,
विथकित अंगों को
मलयानिल झेल ले ।
सुनते हैं राम जब
थकते थे बियाबानों में
सीता चरण चापती थीं,
पलकों की अलकों से
धूल पोंछ देती थीं,
फूल बना देती थीं
पृथ्वी के भार को
मंद-मंद स्मिति की झीनी फुहारों से ।
बाद में लक्ष्मण

पलोटा किए शेष अवधि
राम-रावण-युद्ध की
थकान विसराने को !

तुम तो थके-के-थके
सोए चिरनिद्रा में,
मौका तक दिया नहीं
टूटन थपथपाने का।
आजीवन दौड़ा किए
करुणा-कातर-विक्षुब्ध
देश की गुहार पर,
घायल मानवता के
मरहम लगाते फिरे,
साया किए रहे सदा
आतप निदाघ में
माता-पिता-बन्धु-सखा
सभी एक साथ तुम !

जब तक तुम जिए
तुम्हें चैन नहीं लेने दिया,
अपना भी बोझ लाद तुम पर
निश्चिन्त हुए,
मूढ़ता हमारी
किन्तु तुमने भी भूल से भी
कभी नहीं कहा
कि चैन ले लेने दो,
पसीना पोंछ लेने दो,
क्षण-भर सुस्ताने दो छाँव में।
तुम तो सिर्फ चलते रहे,
जलते रहे अहर्निशि
अपनी ही ज्वाला में,
देते रहे सदा भरे वारिद-से
मुक्त दान !
कर्जदार सबको बना कर चले गए !

आज जब होश हुआ,
लुटी खड़ी निखिल धरा,
मानवता ठिठकी-सी,
बिसूर रही बार-बार,
कैसे करें प्रत्युपकार
अगणित अहसानों का।
मन की मन में ही रही।
अब क्या हो सकता है ?
पीढ़ियों पर पीढ़ियाँ
मूक करती हैं प्रायश्चित
सदियों, सहस्राब्दियों, कल्पों तक !

चक्रान्तशिला और गुलाब

—डॉ० शम्भूनाथ सिंह

अचानक समय की चक्रान्तशिला तेज़ी से घूम गई,
और उसके ऊपर खिला वह रक्ताभ गुलाब
टूट कर नीचे गिर पड़ा।
ऊपर तूफान गरज उठा,
और नीचे
शिला की धुरी से तेज़ नीली किरणें निकल पड़ीं।
चौहत्तर पंखड़ियों वाला वह चिरयुवा गुलाब
जल कर राख हो गया !

और तब तूफान थम गया,
लपटें फिर शिला की धुरी में समा गईं,
आकाश फिर पहले-जैसा साफ दिखने लगा।

मगर अब सूरज की किरणों ने अपना ताप खो दिया
दिग्नाग का मणि लुट गया था,
और वह अंधा बन कर

अँधेरे में रास्ता खोज रहा था !
तूफान गुफाओं में दुबक कर सिसकने लगा—
"मुझसे अकेला लड़ने वाला वह गुलाब कहाँ है ?"
चक्रान्तशिला बोली—"हिश्श !
वह गुलाब अब जल चुका है।
शताब्दियों प्रतीक्षा करो,
पर शायद ही वैसा योद्धा गुलाब
फिर कभी खिलेगा !"
चक्रान्तशिला स्थिर थी—गम्भीर मौन में स्थिर।

नीचे धरती की मिट्टी चीखी—
"मैंने उस गुलाब की वसीयत पढ़ी है।
मैं उसकी माँ हूँ।
उसकी राख मुझे दो,
वह मेरी है।
मैं उससे गेहूं उगाऊँगी।"

नदियाँ बोलीं—"नहीं,
वसीयतदार हम है।
वह राख हमारी है, उसको हमें दो।
उसे छूकर हमारी बाढ़ें उतर जाएँगी,
जल निथरेगा, और हमारी धारा
अनन्त काल तक धरती को उर्वर बनाती रहेगी।"
महासागरों की ऊँची लहरें लहराती हुई चिल्लाईं—
"नहीं, नहीं, वह राख हमारी है।
असली वसीयतदार हम है।
उसे मिट्टी को दो या नदियों को—
वह बह कर हमारे पास ही आएगी।"

अन्त में हवा बोली—"वह राख न हमारी है, न तुम्हारी,
न इसकी है, न उसकी।
दरअसल वह हम सबकी है।
मैंने उस राख की टीका
सबके माथों पर लगा दी है !"

पर चक्रान्तशिला इस तमाम शोर-गुल
और चीख-पुकार के बीच
मौन थी, और मौन ही बनी रही !!

भारत का सूर्य

—सव्यसाची

उस दिन भी ऊषा जगी, किन्तु कुछ सहमी-सी,
लाली क्या, रक्त सुबह का निकला पड़ता था।
हर द्वार बुहारा, किन्तु पवन का मन उस दिन—
बेचैन, दर्द अन्धड़ बन फूटा पड़ता था।
चिड़ियाँ चहकीं, कोयल उपवन में कूकी थीं,
यह कुदरत का है नियम, न तोड़ा जाता था।
पर रुदन टपकता हर बुलबुल की बोली से,
मजबूरी में स्वर गीत दर्द के गाता था।

महका खुशबू से चमन, किन्तु हर फूल मौन,
कलियाँ दिल में सहमीं, बहार वीरान हुई।
बेला, गुलाब, गुलमोहर, हुआ चम्पा मलीन,
रजनीगंधा सहमी, बगिया शमशान हुई।

सरिता उस दिन भी बही, झरे झरने झर-झर,
पर पानी का दिल उस दिन भर-भर आता था।
थे शैल-शिखर-हिमखण्ड सभी गमगीन, मौन,
उस दिन हर पत्थर सौ-सौ अश्रु बहाता था।

सूने थे ताल-तलैया, मौन पड़े अलाव,
पनघट पर एक अजीब उदासी छायी थी।
चौपाल हुई खामोश, शान्त गलिहारे सब,
खलिहानों की हर दिल ने सुध बिसरायी थी।

सूरज निकला, लेकिन कुछ बहका बहका-सा,
हर आँख खुली, पर उससे दर्द टपकता था।

उस दिन भी अलकों से उँगली खेली, लेकिन—
दर्पन में अलसाया-सा रूप भटकता था।

सुर्खी अधरों की नयनों ने बरबस छीनी,
उस दिन चेहरे पर हल्का-सा तम छाया था।
ऐसे लगता था, जैसे पूनम पर मावस की—
बदरी ने अपना अधिकार जमाया था।

थीं सभी दिशायें मौन, बिलखती थी दुनियाँ,
धरती का आँगन मरघट-सा सुनसान हुआ।
विधवा-सी विश्व-शान्ति की रानी बेरौनक,
जीवन का हँसता हुआ चमन वीरान हुआ।

इस ओर सुबगती-रोती गंगा की धारा,
उस तरफ नील की बेटी शोर मचाती थी।
सिर धुनता ताजमहल, रोता था लालकिला,
दिल्ली की जो थी दशा, न देखी जाती थी।

बहका-सा चितरंजन, दुर्गापुर रोता था,
भाखड़ा बिलखता सौ-सौ अश्रु बहाता था।
चौपाटी की मिट्टी आँसू में डूब रही,
आनन्द-भवन कातर-अनाथ घबराता था।

रोती थी आजादी की पत्थर की मूरत,
समता के कानूनी पन्ने घबराते थे।
जनतन्त्र भयातुर-सा शोकाकुल भटक रहा,
उगते स्वर समाजवाद के दहशत खाते थे।

थी कहीं पटकती शीश तटस्थता रोती थी,
पीड़ित अफ्रीका सहमा-सा घबराता था।
बन गया दीन अधिकारों का फौलादी युग,
पूरब का सूर्य क्षितिज मे छिपता जाता था।

सूना-सा लगता था रावी का सुन्दर तट,
बलिदानों की उज्ज्वल सत्ता घबराती थी।
चुपचाप सो गये नयी जिन्दगी के सब स्वर,
बारूदी गंध साँस का दिल दहलाती थी।

हर साँस सुबगती, हर दिल रोता बिलख रहा,
तुम चले गये, लगता जीवन ही चला गया !
तम से लड़ता दीपक झंझा ने मौन किया,
भारत का सूर्य नियति के हाथों छला गया !!

जननायक के प्रति

—डॉ० रामकुमार वर्मा

जय बोलो ऐसे जीवन की जो जल-जल कर बन गया तूर्य,
जय बोलो ऐसे स्वर की जो नभ के कण-कण में बना सूर्य।
जय बोलो ऐसे प्रण की जिससे प्राणों में प्रति क्षण उमंग—
जागी, जिससे जन-जन-जीवन का ज्योतित हो प्रत्येक अंग।
    वह कौन ? जलाता ज्योति रहा जो प्राण-दीप की ज्वाला से।
    कुश-कंटक भी कुंठित करता था जो फूलों की माला से।

वह वीर जवाहर ! भारत-जननी का जिससे मातृत्व सफल,
जिसकी वाणी में वज्र, और भावों में खिलता हुआ कमल।
जिसके पग की दृढ़ता में पथ अपनी दूरी भी गया भूल,
जिसके चरणों की रेख हृदय पर खींच धन्य हो गई धूल।
    वह वीर आज अपने पथ की सीमा पर आकर हुआ शान्त।
    उसके जीवन से आलोकित हो उठा मृत्यु का प्रान्त-प्रान्त।

गंगोत्री से जल का प्रवाह आया प्रयाग की सीमा पर,
उसकी वाणी चल कर प्रयाग से सिक्त कर सकी भू अम्बर।
वह माँ सरूप रानी के तप का एक साधनामय प्रतीक,
वह कष्ट-कसौटी पर जैसे बन गया स्वर्ग की कठिन लीक।
    मोती-मंजूषा में जैसे नवज्योति जवाहर की अनन्त।
    या मातृभूमि के एक सुमन में सिमटा हो सारा वसन्त।

जय बोलो, वह स्वर धीमा हो, यह सैनिक थक कर सोया है,
इसने भारत का कलुष सभी अपने श्रम-जल से धोया है।

अब इसकी अन्तिम साँस वायु की पुण्यमयी गति-रेखा है,
ऐसे महान् साधक का तप किसने जीवन में देखा है?
जन-मानस की पीड़ा उर में ले जो सदैव हँसता आया।
अब ओ प्रकाश! क्या खींच सकेगा तू उसकी अन्तिम छाया?

यह प्रकृति आज निस्तब्ध, गगन भी जैसे धूमिल हुआ, वीर!
ये फूल तुम्हारे चरणों पर अर्पित होने को हैं अधीर।
सारा इतिहास तुम्हारे यश की अंकित करता है लकीर,
यह कंठ हुआ अवरुद्ध, भाव में भरा हुआ है नयन-नीर।
हे वीर! शब्द छोटे हैं ये, बन जाएँ भावना में महान्।
प्रिय जनता के अस्फुट-से स्वर, बन जाएँ तुम्हारे अमर गान।

प्रियदर्शी का चित्र

—नरेन्द्र शर्मा

गीतिकाव्य-सा भाव-प्रवण मन, महाकाव्य-सा कर्म,
पोथी वाला नहीं, आचरित स्वयंसिद्ध था धर्म!
मानवता का महामात्य वह, सत्वशील सुविनीत,
मन्त्र लिए बिन जान लिया था कर्मसुकौशल-मर्म।

उसे संशयात्मा मानूँ या मूर्त आत्मविश्वास,
अति जनप्रिय, अतिशय मनमाना, दूरी में भी पास!
क्षण-क्षण तैलबिन्दु-सा जल पर, पल-पल नूतन रंग,
आस्था सुदृढ़ मेरु-सी, जिस पर शुभ्र हिमानी हास!

शुभ्र वेश, खिलते गुलाब-सा खुले हृदय का फूल,
निष्ठा में निर्भ्रान्त साधना, कभी-कभी कुछ भूल!
शाश्वत भारत का शैशव वह, अभिनव का तारुण्य,
सदा रहा अनुकूल राष्ट्र के वह व्यक्तित्व अकूल।

मनोनीत था निर्विरोध वह विमल विरोधाभास,
रीतिबद्ध होकर न रचा वह ब्रह्मा ने सायास।

श्रेय राम का, प्रेय श्याम का, लेकर दोनों तत्व,
उस विशिष्ट को रचा, दिखाने विधि ने कला-विलास !

पार्थसारथी-सदृश निहत्था, अर्जुन-सा निष्णात,
गीता सुन कर भूल गया ज्यों पूर्वजन्म की बात !
शोणित में पावक, प्राणों में पूर्ण चन्द्र का सोम,
गौतम का संन्यास हृदय में, अकबर का दृढ़ घात।

बहुतों के स्वार्थों का रक्षक, स्वयं सतत निःस्वार्थ,
आदर्शों का प्रकृत पुजारी, जीवन जिया यथार्थ !
मन में भारत-तीर्थ सनातन, नूतन का उत्साह,
परम्परा को संग लिए वह बना प्रगति का सार्थ।

नपा-तुला व्यवहार, प्यार-सा अतुल-अमित अतिशील,
कभी उछलता चला नदी-सा, कभी बन गया झील !
महाभाव था वह समष्टि का, व्यष्टि विचित्र स्वभाव,
विरज और रज, द्यावा, पृथिवी, लोहित शुभ्र सुनील।

शक्ति इन्द्र की, भक्ति भूमि की, अनासक्त आसक्ति,
भावों में अविभक्त, वचन में व्याकृत शब्द-विभक्ति।
हकलाहट, आवेग, नवागत की आहट का बोध,
क्रोध-मोह-मद-मत्सर पर जय, छंद मुक्तलय व्यक्ति।

अधुना की धुन, पुरखों के गुन, चुन लेने में दक्ष,
कोटि-कोटि पर न्योछावर मन, एकायन उर-कक्ष।
मन के इकतारा पर झंकृत सप्तक सप्त अगीत,
कोई मन का मर्म न जाना, सबके रहा समक्ष।

रागी और विरागी, योगी और वियोगी व्यक्ति,
एकनिष्ठ उस दृढ़ चरित्र की चिरनूतन अभिव्यक्ति।
कविर्मनीषी के मन का वह अद्‌भुत रस साकार,
कर्मधार्य तत्पुरुष, द्वन्द्व की सामासिक अतिशक्ति !

अन्तर में समाधि, बाहर थी आठों पहर उपाधि,
स्वस्थ चित्त ऐसा कि न व्यापी उसे आधि या व्याधि।

नाद, बिन्दु, ऊर्जा-तरंग में विविधायित हो, अत—
हुआ तिरोहित, अखिल देश है शाश्वत शान्ति-समाधि।

किसी चौखटे में हम उसको जड़ न सकेंगे, मित्र!
कभी एकरस हुआ न होगा प्रियदर्शी का चित्र!
रेखागणित न लागू जिस पर, रेखाचित्र संजीव!
पात्र नहीं, उत्क्रांत सुविकसित था वह एक चरित्र!!

अमर जवाहर

—डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र

(१)

जीवन के दो पंख कहाये।
एक पंख ने रूप सँजोया, हँसा हँसाया गाया रोया।
जिस मिट्टी से उभर उठा था, उस मिट्टी में जाकर सोया।
अपर पंख ने सुयश सँजोया, मति में गति का तार पिरोया।
दुनिया को कुछ और बढ़ाकर उसका कुत्सित कल्मष धोया।
एक पंख यदि खाद बना, तो अपर पंख ने बीज लगाये।
जीवन के दो पंख कहाये।

(२)

दो तट हैं जीवन-सरिता के, मृत्यु और अमरत्व कहाते।
एक चित्र के दो पहलू हैं, मूढ़ मनुज हम समझ न पाते।
शव है एक, दूसरा शिव है, दोनों मिल संसार बनाते।
दोनों का सन्तुलन न होता, मिटते अगति-प्रगति के नाते।
किसके लिए मनुज फिर रोये, किसकी गुण-गाथाएँ गाये?
जीवन के दो पंख कहाये।

(३)

तन तो मिटने वाला ही था, आज नहीं तो कल थी बारी।
मोही जन पर देख न सकते तन के भी मिटने की पारी।

उस पर मन की अमिट छाप ने यदि नर-गरिमा-मूर्ति उभारी।
तो निर्मोही को भी होती निश्चय विरह-यातना भारी।
उस वियोग का धक्का सहकर मनुज किस तरह मन समझाये।
जीवन के दो पंख कहाये।

(४)

समझाना पड़ता है मन को, जब नश्वर सारी दुनिया है।
किन्तु बिखरने वाली प्रतिमा की भी तो अपनी महिमा है।
इसीलिये मन रो रो पड़ता जब ओझल होती प्रतिमा है।
हृदय-नाद के सन्मुख रहता बुद्धि-वाद स्वयमेव थका है।
फिर भी गत्यन्तर ही क्या है, किस प्रकार मन जिये-जिलाये।
जीवन के दो पंख कहाये।

(५)

सूनी हुई धरा की गरिमा, पर उसने अब गगन सँवारा।
सँकरी हुई विश्व-मानवता पर फैला भी तो ध्रुवतारा!
सिंह-गर्जना सुप्त हुई पर तीव्र हुआ निर्बोल इशारा।
हम दुनिया वालों को अब तो यही प्रेरणाधाम सहारा।
खेतों-खेतों बिखर मर्त्यकण-पुंज जवाहर अमर उगाये।
जीवन के दो पंख कहाये।

(६)

दो हों पंख, एक था पंखी, स्वर ही तो क्षर या अक्षर हैं।
क्षर के लिए विलाप वृथा है, यदि अक्षर के दृढ़ अक्षर हैं।
कृतियाँ जिसकी अमर उसे कब बाँध सके मिट्टी के घर हैं!
मर्त्य भले हों चाचा नेहरू पर श्री नेहरू अजर-अमर हैं!!
जो जब चाहे विश्व-शान्ति में उनके शुभ दर्शन कर जाये।
जीवन के दो पंख कहाये।

वहो आवाज़ दो

—रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

वही आवाज दो सब दिन सुने अपने जयी स्वर से,
मरण के जाल-जकड़ी छटपटाती आस्थाओं को।
वही आवाज दो भय के घने आवर्त में धँसती,
नये भवितव्य की सुख-शांति-सवाही दिशाओं को॥

नही हो राख तुम केवल चिता के भस्म चंदन की,
लपट तुम तो असंवृत ऊर्ध्वमुख निष्कंप जीवन की।
वही आवाज दो सुनकर पराजित राष्ट्र ने जिसको—
धधकती धूनियाँ अगणित रमाईं दीप्त यौवन की॥

वही आवाज दो ओ तत्वशिल्पी व्योमदर्शी मन,
नहीं हो तुम प्रवाहित फूल केवल अस्त गौरव के।
वही आवाज दो जुड़ जाय टूटा स्वप्न समता का,
सदा को जी उठें फिर से मरे संकल्प मानव के॥

नही द्रुत पंखवाली राख केवल कल्पतरु की तुम,
वही आवाज दो इतिहास सहने का जिसे आदी।
वही आवाज जो हर प्रेरणा का सत जिलाये है,
वही आवाज जिसके कम्प का हर तार संवादी॥

बुलाना अनसुने अवदात आकाशी स्वरों में मत,
वही आवाज दो जो मृत्तिका से देश की आती।
लहर केवल नही हो भस्म-मंडित वाहिनी की तुम,
समय की आत्मजा लौ हो कि निष्ठा ही पकड़ पाती॥

वही आवाज दो श्रुति-श्रुति वसे ओ व्यास प्रत्यय के,
जिसे सुनकर सहमते डूबते युगमान थम जाते।
वही आवाज दो ओ मंत्र दृष्टा ज्योतिधर्मी मन!
जिये जिसमें स्पृहा के क्षण विभा के विम्ब बन जाते॥

तुम कहाँ चले गये

—भवानीप्रसाद तिवारी

[देहरादून से दिल्ली]

'दून के दुलारों में
बच्चों-सुकुमारों में
फूलों-उपहारों में
बीती वह संध्या !
दिल्ली के नारों में
उलझे व्यापारों में
शासन-श्रम-भारों में
रात गई वंध्या !

[२७ मई, १९६४]

सत्ताईस का प्रभात
गुमसुम-सी चली वात
समाचार छिछला !
कैसा मनहूस प्रात
कैसी है अजब बात
सूर्य नहीं निकला !
प्रात बढ़ गया फिर भी
दिवस चढ़ गया फिर भी
होनी थी अनहोनी
जगत त्रस्त ऐसा !
आज बिना उदित हुए
आज बिना कुपित हुए
गहरी दोपहरी में
सूर्य अस्त कैसा !

[अवसाद]

भारतीय संसद् का
अखिल विश्व-परिषद् का
उजड़ा-सा मेला !

जन के अन्तर्मन का
आज उड़ा नन्दन का
पंछी अलबेला !

सरल दिव्यदृष्टि एक
व्यष्टि में समष्टि एक
युग-जैसा बीता !

अपरिमेय जनसंकुल
घूम रहा है आकुल
अर्थहीन, निरुद्देश्य
कुल रीता-रीता !

[महाप्रयाण]

जगती के ज्योतिमान
मानव के महाप्राण
कर चले महाप्रयाण
जड़-जंगम रोया !

मारुत अवरुद्ध हुआ
जल-प्रवाह रुद्ध हुआ
हतप्रभ प्रबुद्ध हुआ
चेतन क्षण खोया !

फिर उमड़ा दुर्निवार
मानव-सागर अपार
शब्दरहित जयकार
चुप-चुप-सी वेला !

नर, नारी, बालगण
जन-मन कितना अनमन
सोच रहा है प्रति जन
रह गया अकेला !

[सन्देश]

कवि की वाणी निर्मल
मन में गूँजी अविचल—
"सघन और सुन्दर है

वन-प्रान्तर; माना,
किन्तु वचन ढेर-भरे
अभी है, निभाना,
और पूर्व सोने के
कोसों है जाना,
और पूर्व सोने के
कोसों है जाना !"

[भूकम्प : जल-वर्षा]

सहसा धरती-कम्पन
डोल उठा गगनांगन
बढ़ी उरों की धड़कन
दृगदल जल सरसे।

घिर आए घन-पर-घन
चुन-चुन लोचन-जलकण
अश्रु-विन्दु प्रश्न-चिह्न
बन-बन कर बरसे।

[आँसुओं के प्रश्न]

रतन में जवाहर-से
नरों बीच नाहर-से
तिमिर में उजागर-से
तुम कहाँ चले गए ?

धरती के छोरों में
नभ की दिशि ओरों में
पवन के झकोरों में
तुम कहाँ चले गए ?

राष्ट्रों के कर्णधार
मानवता के उभार
छोड़ हमें बीच धार
तुम कहाँ चले गए ?

नदी के प्रवाहों में
जलधि के अथाहों में

नेह-भरी बाँहों में
तुम कहाँ चले गए ?

सबसे पा स्नेह-प्यार
सबको देकर दुलार
अपना सर्वस्व हार
तुम कहाँ चले गए ?

परबत की घाटी में
खेतों की माटी में
अद्भुत परिपाटी में
तुम कहाँ चले गए ?

लोकतन्त्र के गायक
समता के उन्नायक
पंचशील के पायक
तुम कहाँ चले ग ?

तारों की झिलमिल में
जन-गण की हिलमिल में
कण-कण में, तिल-तिल में
तुम कहाँ चले गए ?

लक्ष-लक्ष कंठों के स्वर, कहाँ चले गए ?
लक्ष-लक्ष नयनों को भर, कहाँ चले गए ?
लक्ष-लक्ष हृदयों को हर, कहाँ चले गए ?

कोटि-कोटि आहों से कढ़, कहाँ चले गए ?
कोटि-कोटि साधों से बढ़, कहाँ चले गए ?
कोटि-कोटि काँधों पर चढ़, कहाँ चले गए ?

कारज की करनी के कर, कहाँ चले गए ?
धीरज की धरनी के धर, कहाँ चले गए ?
साहस की सरनी के सर, कहाँ चले गए ?

संकट के समय के अभय, कहाँ चले गए ?
दीन-हीन-दलितों के जय, कहाँ चले गए ?
काल विजित कर, मृत्युंजय, कहाँ चले गए ?

नेहरू पुनः जगाना होगा

—कमला चौधरी

नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।
मन के घाव अभी ताजे हैं, कुछ उपचार कराना होगा।।

पुण्यस्मृति अमृत बरसाए, जन-मन में जग उठे जवाहर।
दिव्यरत्न-सा जड़े-हृदय में, झलके मन-दर्पण में जौहर।
जगव्यापक हो गतिविधि उसकी, सतत चले नेहरू-मन्वंतर।
नश्वर रूप नहीं सम्मुख, यह सत्य हमें बिसराना होगा
नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।।

चन्द्रवदन-सी रूप-माधुरी, ज्योतिमय आँखों का पानी।
सूर्य-ज्योति-सी गौरव-गरिमा-पराक्रममय अथक जवानी।
अमर अधर की ही मुस्कानें, ओज-भरी अनुपम युगवाणी।
सगुण रूप दे आत्म-ज्योति को, गौरव-वन्दन गाना होगा।
नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।।

धीर-वीर, अति कोमल-निर्मल, महामनस्वी, महर्षी, ज्ञानी।
कर्मशील, कर्मठ, बलशाली, मानव-पत आत्म-अभिमानी।
स्नेह-सरोवर धुरी मनुज की, अमर रहे मानवता दानी।
जीवन-दर्शन के सागर से चुन कर मोती लाना होगा।
नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।।

नूतन भारत उसकी आभा, देश जवाहरमय है अपना।
दीपशिखा बन पथ दिखलाए, बने देश की सतत चेतना।
दर्शन पावन मिलें निरन्तर, कुटिल मृत्यु बन जाए सपना।
मृत्यु जीत वह बना मृत्युंजय, दृढ़ विश्वास जमाना होगा।
नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।।

अर्चन कर स्वातंत्र्य देवि का, जग को शान्ति-मार्ग दिखलाया।
त्याग-तपस्या को प्रतिमूर्ति, तप-तप भारत सुदृढ़ बनाया।
राम-कृष्ण-सा अमर रहे वह, मिले मनुज को शीतल छाया।
शान्ति अचल हो शान्तिदूत की, नित आलोक दिखाना होगा।
नेहरू बिन जनजीवन सूना, नेहरू पुनः जगाना होगा।।

अविस्मरणीय व्यक्तित्व

—लक्ष्मी 'साधना'

'मैंने 'फाइल' निवटाये हैं, पूर्ण किया सब अपना काम,"
यह कहकर मानो उसने ले लिया यहाँ शाश्वत विश्राम,
कर्मयोग ही सदा रहा उसके जीवन का मंत्रोच्चार !

एक विलक्षण आकर्षण था, जनसमूह था खिंच आता,
जहाँ कहीं वह जाता था, लाखों का मेला लग जाता,
एक इशारे पर उठते थे गतिमय चरण हजार-हजार !

नहीं सुयश की चाह रही, वह तो पीछे-पीछे आया,
आगे बढ़ा कि अभिनन्दन ही अभिनन्दन उसने पाया,
और गूँजती थीं स्वागत में जय-जय ध्वनियाँ, हर्षोद्गार !

भारत का ही रत्न नहीं, जग का अनमोल जवाहर था,
स्वयं सुशोभित बना पदक जब हुआ प्रतिष्ठित उर पर था,
सभी भूषणों का भूषण वह, स्वयं विमल वसुधालंकार !

डाक्टरेट दे-देकर धन्य हुए कितने शिक्षण-संस्थान,
उसे अनेकों राष्ट्रों ने भी अर्पित किये विविध सम्मान,
दे अधिकार नागरिक, खोले नगर-नगर ने स्वागत-द्वार !

श्वेत कपोत प्रतीक शान्ति के नभ में मुक्त उड़ाता था,
स्नेह-सेतु पूरव पश्चिम का बन सद्भाव बढ़ाता था,
वह प्रतिमान प्रेम-मैत्री का, मानव-संस्कृति का प्रतिहार !

इतना आदर, इतना स्वागत, इतना यश किसने पाया ?
कहो अशोक और गांधी के बाद कौन ऐसा आया ?
जो महान् था कहलाया, सबके प्रति रहा विशाल उदार !

विजयी हुआ वसन्त

—नागार्जुन

तुम्हें न भायी जरा-ग्रस्त गुरुजन की शीतल छाँह !
निधड़क होकर पकड़ी तुमने तरुण शक्ति की बाँह !
लोल लहरियों ने शतदल-सा चट से लिया सँभाल !
स्नेह-बिन्दु तुम सप्त-सिन्धु में फैल गये तत्काल !

प्रिय थे तुमको काले बादल, प्रिय थी तुमको झील !
प्रिय थी तुमको बर्फ, तुम्हें भाते थे सागर नील !
खिलते फूलों को देखा तो तुम हो उठे निहाल !
कुंकुम-रंजित मृदुल अंगुलियों से तिलकित था भाल !

बालारुण-दीपित हिमगिरि को तुमने दिया प्रणाम !
मन-ही-मन जपते थे तुम शायद नदियों के नाम !
काली-भूरी-पीली मिट्टी से सुरभित थे प्राण—
छलका करता था जिनमें युग-मानव का कल्याण !

विश्व-वेदना की ऊष्मा के तुम प्रतीक-अवतार !
तुम अदम्य, तुम मैत्री-मुदिता-करुणा के आगार !
तुम अशोक-अकबर-रवीन्द्र की, गान्धी की अनुपूर्ति !
तुम विशाल संस्कृति की प्रतिमा, तुम जन-मन की स्फूर्ति !

प्रखर ग्रीष्म की झंझा बन करने निकले अभिसार !
पर सावन की घनमाला ने तुमको लिया उबार !
कब थे आतंकित कर पाये दनुजों के नख-दन्त !
हेमन्ती ठिठुरन पर प्रतिपल विजयी हुआ वसन्त !

नेहरू

—साग़र निज़ामी

फ़िक्रे नेहरू ने इस हक़ीक़त को, इस समाजी तजाद को समझा।
इस बुलन्द और पस्त को समझा, मुफलिसी की गिरफ्त को समझा ।।
सबसे पहले ज़बाने नेहरू से लफ्ज़ निकले लिबासे मानी में।
सबसे पहले समाजवाद का ज़िक्र उसके होटों पे सर्द आह बना,
सबसे पहले ग़रीब का एहसास उसकी आँसू-भरी निगाह बना।
इस तरह उसकी फ़िक्र में उभरे, सबकी आसूदगी के मनसूबे।
जैसे शायर की फ़िक्रे रंगीं में इक तवाना ख़याल का शोला।
दौरे अलफाज़ के तआक्कुब में।

साज के नग्मा-रेज पर्दों से जैसे संगीत की महक फूटे।
जैसे नक्क़ाश के तख़ैयुल में ज़िन्दगी का जमाल मुसकाये।
आगही का जलाल मुसकाये।

ख्वाब ढलने लगे हक़ीक़त में ख्वाब खेतों में लहलहाने लगे।
मस्त मौजों ने रागिनी छेड़ी ख्वाब नहरों में गुनगुनाने लगे।
बन गये ख़िश्तोसंग का जौहर दरोदीवार को उठाने लगे।
ओजे तामीर का बरन लेकर ख्वाब हक़ीक़त पै मुसकराने लगे।
कारगाहों का रूप भर भरकर,
साजे आसूदगी बजाने लगे ।।

कोहो-सेहरा में सौ दयार उभरे, और दयारों में लालाज़ार उभरे।
रेगजारों में नग्माख्वां नहरें और नहरों की मस्त लहरों में।
जरफिशां खेत मुस्कराने लगे।

जरफिशां व हसीन खेतों में गन्दमो-जौ की सुर्ख बालों में।
गौहरोलाल जगमगाने लगे।

आ पड़ी बरक अपने क़दमों में साज़ोसामाने रौशनी लेकर।
आसमाँ बन गई जमीने-वतन
अंजुमोमाह आने-जाने लगे।

और फिर इक कसरे नौ उभरने लगा जिसके जौ बारोशोख मीनारे।
आँख खुरशीद को दिखाने लगे।

देख नेहरू के ख्वाब की तावीर कसरे जमहूरियत की अज़मत देख।
कसरे जमहूरियत की रिफअ्त देख,
कुदसियों के पयाम आने लगे।।

आग जमहूरियत के जज़वे की आग उस ताज़ा इन्क़लाव की आग।
उसने सब के दिलों में भर दी है,
सबकी रूहों में जज्ब कर दी है।

एक लादीन राज की बुनियाद इस ज़मीं से उखड़ नहीं सकती।
खूने दिल में डुबो के ऐ लोगो इसकी बुनियाद उसने रक्खी है।
नये परवेज़ के ज़माने में
आने फरहाद उसने रखी है।

कौम का सुहाग

—चकवस्त

सदा यह आती है फल, फूल और पत्थर से,
ज़मीं पे ताज गिरा कौमे-हिंद के सर से।
तुझी को मुल्क में रोशन-दिमाग समझे थे,
तुझे ग़रीब के घर का चिराग समझे थे।
जो आज नश्वो-नुमा का नया ज़माना है,
यह इन्क़लाब तेरी उम्र का फसाना है।
वतन की जान पे क्या-क्या तबाहियाँ आयीं,
उमड़ उमड़ के जहालत की बदलियाँ आयीं।
चिरागे-अम्न बुझाने को आँधियाँ आयीं,
दिलों में आग लगाने को बिजलियाँ आयीं।
इस इंतशार में जिस नूर का सहारा था,
उफक़ पे कौम के वह एक ही सितारा था।
खुदा के हुक्म से जब आबो-गिल बना तेरा,
किसी शहीद की मिट्टी से दिल बना तेरा।

जनाजा हिंद का दर से तेरे निकलता है,
सुहाग क़ौम का तेरी चिता में जलता है।
तेरे आलम में इस तरह जान खोते हैं,
कि जैसे बाप से छूटकर यतीम रोते हैं।
ग़रीब हिंद ने तनहा नहीं यह दाग सहा,
वतन से दूर भी तूफान रंजो-ग़म का उठा।
रहेगा रंज जमाने में यादगार तेरा,
वह कौन दिल है कि जिसमें नहीं मज़ार तेरा।
जो कल रक़ीब था वह आज सोगवार तेरा,
खुदा के सामने है मुल्क शर्मसार तेरा।

इतिहास-पुरुष

—गिरिजाकुमार माथुर

एक चमकीला बिन्दु माथे से मिट गया!
एक बहुत बड़ा बिम्ब घेरे से हट गया!
काला हो गया क्षितिज,
धूमकेतु बुझ गया,
छाती का लाल फूल,
सहसा मुरझ गया।

गंध-कोष कट गया, निरंग शून्य छूट गया!
फिर
रथ का घूमता हुआ
चाक टूट गया।
सदियों के बाद मिला
सारथि फिर छूट गया।

बनता हुआ इतिहास बनते हुए रुक गया!

साँझ, हवा सूनी
भटकाती है राहों को,
लौटे हम मणि देकर
विगत के प्रवाहों को।
अग्नि का विमान उठा, मन्वन्तर उठ गया !

तस्वीर एक : रंग तीन

—वीणा गुप्ता

स्मृति के श्वेत कैनवास पर,
धूपछाँही रंगों में उरेही—
एक तस्वीर,
वायु की प्रत्येक थपकन पर,
एक नये रंग में चमक उठती है !
वायु की पहली थपकन :
वह तस्वीर चमक उठती है,
जिसमें कान्वेन्ट के सामने
लाइन में सजे,
नीली ट्यूनिक, सफेद ब्लाउज में कसे,
हम सब,
चाचा नेहरू का स्वागत करने,
माला, फूल, श्रद्धा अर्पित करने,
उत्सुकता भरी दृष्टि से,
प्रत्येक मोटर को झाँक रहे हैं !
धीरे धीरे—
मोटरों और सैनिकों से घिरी
एक लम्बी मोटर आकर रुकती है,
और देखते ही देखते,
हमारे चाचा नेहरू,
मुस्कराते, हाथ हिलाते,
पैदल ही बच्चों की कतारों से निकलते.

फिर मोटर में बैठकर सर्र से
चले जाते हैं !

कैनवास हिलता है,
और एक दूसरी तस्वीर उभरती है:
गाइडों की पंक्ति में
सफेद सिलवार-कुर्ते में सजे
दुपट्टों से कमर को कसे,
चाचा को सलामी देने—
हम सब 'एटेन्शन' में खड़े हैं।
ऊपर डायस पर,
एक चेहरा उभरता है,
वही, चिरपरिचित चाचा नेहरू का।
'सलामी दो' की कमांड के साथ
हम सब के हाथ
माथे को छूकर,
तड़ाक से नीचे हो जाते हैं !

अरे, यह क्या ? कैनवास फिर हिला,
एक नई और अन्तिम,
पर धुँधली तस्वीर, कौंध उठी।
आनन्द भवन के द्वार से निकलकर
एक पुष्परथ,
झुके शस्त्रों,
विलमते कदमों;
शोकगीत, रामधुन के बीच
धीरे-धीरे संगम की ओर बढ़ता है।
अनजाने ही नेत्र बरस पड़ते हैं
और कैनवास पर उभरी वह तस्वीर,
धुल जाती है !

: नेहरू :

—जगन्नाथ 'आज़ाद'

ऐ रफीके-दीदावर ! ऐ रहवरे-रौशन-ज़मीर !
कारवाने-जहदे-कौमी के अमीर !
आज है तेरी जिया से जहने-इंसां मुस्तनीर,
आस्माने-हिंद के महरे-मुनीर !

जहदे-आजादी में तूने खूने-दिल शामिल किया,
खाक के पैकर को तूने दिल किया,
मंज़िले-दुश्वार थी तूने जिसे हासिल किया,
और फिर तूफान को साहिल किया।

नौ बरस पहले का हम को वह जमाना याद है,
रव्ते-वर्क़ो-आशियाना याद है,
बुग्ज का नग्मा अदावत का तराना याद है,
कितना खूनी था फसाना याद है।

याद है हमको कि हम थे और तूफाने-वला,
था मुक़द्दर एक सामाने-बला,
दूर तक भी था निगाहों में न पायाने-बला,
उफ वो चारों सिम्त से जाने-वला !

खींच लाया तू हमें तूफान से साहिल के पास,
जौको-शौक़ो-जज्वा-हाए-दिल के पास,
आ चुका है कारवाने दर्द अब मंजिल के पास,
अब हमारी सई है साहिल के पास।

तूने इस तूफां में छेड़े अपने नग्माते-हसीं,
किस कदर तेरी नवा थी दिलनशीं,
आज नाज़ां है तेरी हस्ती पे मशरिक़ की जमीं,
रहवरे-रौशन-दिलो-तावां-जबीं !

कारवाने-शौक को तेरी क़यादत की कसम,
कारवां आगे ही बढ़ता जाएगा,

कारवाँ को है जो तुझ से उस मुहब्बत की कसम,
कारवाँ ये अब न थकने पाएगा ।
जिंदा-ओ-पाइंदाबाद ऐ रहबरे-रोशन-ज़मीर !
रौशनो-ताबिंदाबाद ऐ हिंद के महरे-मुनीर !!

सूरज ढल गया

—भवानीप्रसाद मिश्र

सूरज ढल गया
और यह सूरज आसमान का नहीं
मेरे देश का था, मेरी धरती का था !!

आज मेरा देश एक घना अंधकार है
आज धरती भर में
उजाले के लिए कोलाहल है
उजाले के लिए क्रन्दन है
उजाले के लिए पुकार है
हर दिशा धुंधली है
मगर क्या काल ऐसा बली है
कि मेरे देश के सूरज को
धरती के प्रकाश को
पीकर बैठा रहे मजे में
चुप और सुखी ?

क्या इतने करोड़ों दुःखी
अपना बल नहीं समेटेंगे ?
उसकी मर्जी को मानकर लाचारी की एक लम्बी साँस भेंटेंगे !
मेटेंगे नहीं वे सूर्य-विहीनता की यह परिस्थिति
अपने बल से ?
क्या छोटे-छोटे ही सही
उगेंगे नहीं
अपने क्षितिज पर अनेक सूर्य-पुत्र कल से ?

क्या ढला हुआ सूरज
प्रकृति के सूरज की तरह
फिर नया होकर नहीं निकलेगा
वह चीरेगा नही अँधेरा
उठा के डंडा-डेरा
चली नहीं जायेगी यह उदासी !
दिल्ली, मथुरा, काशी, प्रयाग, क्या फिर से नहीं खिलेंगे ?
क्या बच्चों के हँसते हुए चेहरे फिर से नहीं मिलेंगे
मेरे देश में ?

क्या जयहिन्द नही बोलेगे उच्च कंठ से हम
क्या गर्दनें हमारी खम की खम रह जायेंगी
क्या हमारे इस अलबेले सूरज के ढलने से
रात दिन चलने से रुक कर रह जायेगे हमारे कदम !
जिन्हें उसने चलते रहना सिखाया था
जिन्हे मुश्किल और लम्बा एक रास्ता दिखाया था
क्या कल ही फिर से
नन्हें नन्हें गुलाबों को
गुदगुदाने वाली किरणें नहीं फूटेंगी
टूटेंगी नहीं ये बँधी हुई हिचकियाँ

मेरी समझ में तो सूरज फिर निकलेगा
हम फिर गर्दन उठायेगे
'जयहिन्द' बोलेंगे
मंजिलें तय करेंगे
क्योंकि सूरज ढलते ढलते कह गया है—
मुझे आत्मा की कुछ खबर नहीं है
!मगर हिन्दुस्तान अमर है
हिन्दुस्तानी कभी नहीं मरेंगे।

स्मृति विनय

—वीरेन्द्र मिश्र

चौंक उठे हँसते चौराहे, बिजली गिरती देख सामने,
हलचल-भरेपुरे सब आँगन बोले—यह क्या किया राम ने ?
सिसकी भरी गली-टोले ने, मन भर आया फुटपाथों का,
हर उछाह श्री-हीन हो गया, सभी काम करते हाथों का।
छोटे बड़े करोड़ों के दृग घूम गए युग के सजीव क्षण,
मानो पिछला हर घटना क्रम, हो नभ का ही कोई प्रहसन !

पूरी आधी सदी जाग कर, जिसने जगा दिया माटी को,
अपना लिया गाँव-नगरी को, छाना हर जंगल-घाटी को।
हँसते-हँसते चला धूल में, उतर गंध के कुसुमित रथ से,
बरसों रमा ऋतु-पुरुष बन कर, निकल पड़ा काँटों के पथ से।
कर दी अर्पित उम्र प्यार की बलिवेदी पर दीप जला कर,
केवल देश रहा आँखों में, धन्य हुआ वह जिसको पा कर।
वह गुलाब का फूल टूट कर, बन बैठा जब एक सितारा,
इंगित किया दिशाओं ने तब—वह है पाटल-पुरुष हमारा।

वक्त आ गया, जाने वाला चला गया खुद, भरी दुपहरी,
कुछ न कर सके संसद के जन, मौन हो गये सैनिक-प्रहरी !
पूरा देश उदास हो गया, फैला जब हर ओर उजाला,
अंतिम दर्शन की वेला में, सब के हाथ अश्रु की माला।
कोई रोया, कोई चीखा, कोई कुछ कह शान्त हो गया,
कोई हुआ अचेत, अचानक वज्र गिरा, प्राणांत हो गया।
मस्जिद को हिचकी आई, तो मंदिर सिसक-सिसक कर रोया।
गुरुद्वारे को लगा कि जैसे उसने कोई अपना खोया।
किरणों ने की शोक-सभाएँ गाँव-गाँव में, मैदानों में,
धूप मनाए मातम बैठी—खेत-खेत में, खलिहानों में।
देश-देश के नेताओं को लगा विश्व गतिहीन हो गया,
युद्धों के कगार पर बैठे मानव का बल क्षीण हो गया।

यह शरीर की शव-यात्रा है, सिद्धांतों का नहीं पलायन,
गाने वाला चला गया है, शेष रह गया उसका गायन।

गीतकार स्वर-लिपियाँ देकर, अश्रु-घाट पर समाधिस्थ है,
चन्दन घी सब हवन हो गये, चिता जल गई, सूर्य अस्त है।
दस-दस लाख जनों की भीड़ें, हैं अतीत बन गई आँख में,
शेष यशःकाया है अब तो, बाकी सब मिल गया राख में।
साक्षी दुखी भाखरा-नंगल, हीराकुड, अपसरा-भिलाई,
जिसके अधुनातन गौरव के पीछे नेहरू की तरुणाई।
उसका विरल पल्लवित चिन्तन अपनी कर्मठता में ढालो,
इस युगान्त के बाद विश्व में नई जिन्दगी जीने वालो!

सत्ताईस मई

—देवराज दिनेश

ऐसे लगा कि जैसे रवि-रथ रुका अचानक,
एक ज्योति-सी उठी ज्योति में लीन हो गई।
धरती का धन छीन बढ़े रवि अपने पथ पर,
तपती हुई दुपहरी गहरी व्यथा बो गई।
कोई साँस न ऐसी जिसमें पीर नहीं थी,
कोई आँख न ऐसी जिसमें नीर नहीं था।
चारों ओर कुहासा छाया था धरती पर,
कोई हृदय न ऐसा जो कि अधीर नहीं था।

कृष्ण-मृत्यु पर यह आभास हुआ था युग को—
कलाकार मिट गया कला का अन्त हो गया।
बुद्ध-मृत्यु पर सत्य-अहिंसा बिलख पड़े थे,
पतझर के आँगन में मधुर वसन्त सो गया।
मिटे देव चाणक्य, सिसक रोई बौद्धिकता,
लगा कि भृकुटि-प्रत्यंचा नहीं तनेगी रिपु पर।
जिस दिन मिटे अशोक, मिटीं युग की क्षमताएँ,
मूक हो गए सुखद शान्ति की वीणा के स्वर।

गांधी मरे, तड़प रोई बूढ़ी भारत माँ,
लगा कि जैसे नहीं रही धरती पर ममता।
किन्तु तुम्हारी मृत्यु : स्तब्ध हैं धरती-अम्बर,
विधवा आज हुई भटके युग की मानवता!
ममता, राजनीति, यौगिकता, सब हतचेतन,
बौद्धिकता है मूक, सशंकित युग की क्षमता।
एक व्यक्ति थे तुम, सब कुछ सन्निहित जहाँ था,
जीवन-भर दुलराती रही तुम्हें पावनता।

मृत्यु तुम्हारी जड़-चेतन सबमें सिहरन थी,
धरती ने तज दी थी दुख सहने की क्षमता।
नभ के आँसू बादल बन कर बरस पड़े थे,
हिमगिरि छोड़ चुका था उस दिन अपनी गुरुता।
सिन्धु छोड़ सीमा धरती से पूछ रहा था—
प्रिय, सच कह मुझसे, मेरा गाम्भीर्य कहाँ है?
आई निशा, दुखी तारों से पूछा शशि ने—
इतना गहरा अन्धकार क्यों आज यहाँ है?

क्या इस युग का महामनीषी आज उठ गया?
शान्ति-कपोत उड़ाने वाला नहीं रहा है?
आज विश्व के आंगन में क्यों अकुलाहट है?
धरती ने क्या क्रूर नियति का वज्र सहा है?
क्या सौन्दर्य और यौवन का चिर प्रतीक वह—
लाल जवाहर नहीं रहा है इस धरती पर?
युग की सभी समस्याएँ सुलझाने वाला—
वह नरनाहर नहीं रहा है इस धरती पर?

तारे सिसके, गहन व्यथा छा गई रात पर,
हाँ प्रिय, वह युगपुरुष नहीं अब रहा धरा पर।
दुखी मनुजता के हित जिसका जन्म हुआ था,
धरती के आँसू जिसने पोंछे जीवन-भर।
मेरे प्रिय, तू वही युगपुरुष था धरती पर,
शिव बन जिसने अपने युग का गरल पिया था!

सब अपनी खातिर जीते हैं निज जीवन में,
तू ही था बस जो औरों के लिए जिया था !

धर धरा, धीरज

—रघुवीरशरण मित्र

धर धरा धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी।

वेदना के सिन्धु का माँ! रोक लो यह ज्वार भारी।
डर मुझे है वह न जाये आँसुओं में सृष्टि सारी ॥
मर गया सूरज, मचलते फूल, नभ रोने लगा है।
आज पहली बार अनुभव मृत्यु का होने लगा है ॥
माँ! सतत गति का शयन है, यति सहन करनी पड़ेगी।
धर धरा! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी ॥

वह भटकती राह का पथ, वह मरण के वक्ष पर है।
वह शलभ सूरज बना है, वह शलभ मर कर अमर है ॥
वह दिशाओं में मुखर है, वह कलाओं में प्रखर है।
वह अमर गति का चरण है, वह ध्वजाओं की लहर है ॥
काल को उनके पगों की गति सहन करनी पड़ेगी।
धर धरा! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी ॥

युगपुरुष वे समय की गति-विधि बने, पथ बन गये हैं।
वे गुलाबों में खिलगे, वे बहारों में नये हैं ॥
वे अमर साहित्य के स्वर, गायकों के गीत हैं वे।
शान्ति हैं वे, मुक्ति हैं वे, प्रीति हैं वे, जीत हैं वे ॥
राह से उनकी अनय से सबल मानवता लड़ेगी।
धर धरा! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी ॥

सो रहा है वह जिसे विश्राम को क्षण मिल न पाये।
शोर इतना हो न जिससे नींद उसकी टूट जाये ॥

विश्व का वन्धुत्व सोता, प्यार पंखा झल रहा है।
हर दिशा में, हर डगर में दीप माँ का जल रहा है।।
चाह से उनकी प्रलय से रोशनी जग की लड़ेगी।
धर धरा ! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी।।

हर तरफ फैला हुआ है कर्मयोगी का उजाला।
डालियाँ करतीं समर्पित पाटलों की फूल-माला।।
तुम न होते, देश का सम्मान दुनियाँ में न होता।
तुम न होते, रक्त में डूबा हुआ इन्सान होता।।
दाह से उनके पतन की गति दहन करनी पड़ेगी।
धर धरा ! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी।।

चल रहे थे तुम, तुम्हारे साथ दुनियाँ चल रही थी।
हर अँधेरी राह में गतिमान वत्ती जल रही थी।।
तुम मरण पर भी वरण हो, युग युगान्तर के चरण तुम।
दान धरती के गगन को, देवताओं के वरण तुम।।
जन्म ले तुमको धरा की वेदना हरनी पड़ेगी।
धर धरा ! धीरज, मरण की अति सहन करनी पड़ेगी।।

ज्योति के इतिहास !

—देवीप्रसाद 'राही'

राख के नीचे दवे अंगार !
वोल रे, कुछ वोल,
मुँह तो खोल,
तम हटे कुछ, भ्रम छटे—
कुछ गम घटे मन का;
ज्योति के इतिहास उठ !
अध्याय नूतन खोल।
लोग कहते हैं, उजाला मिट गया
एक सूरज का जवाहर, लुट गया,

आंख भी कहती करो विश्वास—
है कलेन्डर का अभी तक—
घाव ताजा,
अभी सन् चौंसठ उसासें ले रहा,
आह रे ! वह दिन, मई का मास,
काल का कितना कठिन था—
कुटिल वज्राघात !
रो पड़ा था बालकों-सा—
चौंक कर आकाश,
हो गई थी दोपहर को ही—
अचानक रात।
वह अभागा दिन, कि जिस दिन
तू गया था छिन,
धैर्य धरती का मचल कर रह गया—
दर्द पारे-सा फिसल कर वह गया;
डगमगाया राष्ट्र का विश्वास,
रुक गई थी जब तुम्हारी साँस ॥
किस तरह कैसे करूँ इन्कार
इस कटु सत्य से ?
नयन पर पहरा लगा है अश्रु का
होंठ पर ताला पड़ा है मृत्यु का,
ऐन्द्रिक अनुभूति का इतना असर ?
बन गया हूं प्रश्न मैं दो सत्य का—
मृत्यु का, अमरत्व का ! !
क्योंकि जीवन सिर्फ भौतिक सत्य का—
निश्चय नहीं है, और भी कुछ है—
न जिसका आदि जाना जा सका है
अन्त माना जा सका है,
जी रहा है देह से होकर परे जो—
कर्म का विश्वास बन कर,
आस्था की साँस बन कर,
जो सनातन है—

चिरन्तन है;
सृजन का रूप धर कर चल रहा है
सूर्य बन कर जल रहा है,
काल ! उसका क्या करेगा ?
वह अमर है, कब मरेगा ! !

जागरण का दृश्य !
केवल नींद का अभिनय नहीं है,
मौत ही, बस आदमी के अन्त का—
परिचय नहीं है।

चिर सुभाषित शान्ति के संगीत
सहअस्तित्व के सरगम !
अहिंसा के अनूठे छन्द
ओ ! मनुजत्व के संगम,
जागरण के काव्य !
युग की प्रेरणा—
ओ विधाता के अछूते ग्रन्थ,
मनु के मन्त्र !
लाख बदलो रूप लेकिन—
मैं तुम्हें पहचान लूँगा !
क्योंकि अन्तर्दृष्टि के दीपक तुम्हीं हो—
और क्या तुमको कहूं मैं ?
राष्ट्र के रूपक तुम्हीं हो ! !

मैं तुम्हारी गूँज की—
अभिव्यक्ति बन कर—
गा रहा हूं—
गा रहा हूं—
जो मिला तुमसे
तुम्हें लौटा रहा हूं ।।

ओ चिर अशान्त साहित्यकार !

—विश्वम्भरप्रसाद तिवारी

ओ शांति घाट के
चिरअशांत साहित्यकार !
तुमको जीवन भर आकुल करता रहा
यही—बस यह विचार
यह वन अपार
आवृत चतुर्दिक अंधकार, पथ दुर्निवार
यात्रा करनी है लगातार !
ओ स्वप्नकार!
तुमने न सिर्फ स्वप्नों की रेखायें खीचीं।
तुमने न सिर्फ ब्लू प्रिंट दिये कुछ कोरे कागज पर उतार !
तुम राजनीति में स्वयं उतर कर बार बार
स्वप्नों को मूर्त रूप देने जुट गये—
जुटे ही रहे कि चला करता है जब तक
इस नश्वर तन पर साँसों का कारबार।
ओ मूर्तिकार !
तुमसे मानव की प्रतिमा ने पाया निखार,
तुम नहीं जवाहर, नहीं लाल
तुम हो भारत के पारसमणि,
जिस लोहे ने भी तुम्हें छुआ,
संस्पर्श किया जिसका तुमने
वह कुन्दन-सा हो गया, मिटे सारे विकार !
ओ शांतिघाट के चिर अशांत साहित्यकार !
तेरी कविता तो राजनीति के घोड़े पर हो कर सवार
विद्युत गति से, चीरा करती थी अंधकार
है नहीं तुम्हारी देह आज,
चालीस करोड़ों के कानों में पर अब भी,
गूँजा करती रह रह पुकार,
यह वन अपार, पथ दुर्निवार
यात्रा करनी है लगातार
चाहे जितने भी हों प्रहार !

गुलाब का चितेरा

—डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त

नेहरू की मौत की खबर से
कुछ ऐसा सन्नाटा छा गया है
कि हवा में हर समय उमस लगती है
जिन्दगी का रस निचुड़-सा गया है !

गुलाब की कलियों के उस चितेरे से
बहुत कम मरम सीखा था—
छवि का अभी तो !
पर, इस दुःख में भी
कहीं सुख की किरण है,
क्योंकि हम सब एक हैं,
भेद-भाव खो गए हैं।
देश की प्रगति में
मानो सभी
मील के पत्थर हो गये हैं।

महामानव नेहरू

—ब्रजकिशोर 'नारायण'

आदि भारत में
आदि कवि वाल्मीकि ने
एक महापुरुष की कल्पना की थी :
वह महापुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम थे।
महाभारत में
महर्षि व्यास ने
एक पूर्ण पुरुष की कल्पना की थी :
वह पूर्ण पुरुष श्रीकृष्ण थे।
आधुनिक स्वतंत्र एवं आसेतु हिमाचल इस नए भारत में

शारदा के सहस्रों सुतों ने
अभी एक महामानव की कल्पना को
अपनी अभिव्यक्ति में आत्मसात् करना ही चाहा था
कि वह विराट ज्योति उन्हें अचानक चुनौती देकर चली गई।
वाणी की वर्तमान विशिष्ट वन्दना
अपनी सीमा में ही छली गई!
उफ़! उस दुनिया की
कल्पना कितनी भयावह है
जिसके आकाश से सूर्य तो रूठ गया ही हो,
चाँद भी चला जाए।
बेमिसाल मशाल तो बुझ ही चुकी हो
एक चमकता हुआ चिराग़ भी छला जाए!
फिर भी हमें आशा है
और पूरा विश्वास है—
राष्ट्रपिता बापू की
राष्ट्रनिर्माता नेहरू की
मिली-जुली ज्योति से
देश के सामने का अंधियारा फटेगा
और,
एक अकल्पित विद्युत की चमत्कारी चकाचौंध से
यह आगे दिखाई देने वाला बादलों का दल
निश्चित रूप से छँटेगा!

चल बसा जवाहरलाल रे!

—गोपालप्रसाद व्यास

धरती काँपी, आकाश हिला, सागर में उठा उबाल रे!
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहरलाल रे!
गंगा रोई, यमुना रोई, लो रोने लगा प्रयाग रे!
आ गए हिमालय के आँसू, सागर में आए झाग रे!

अम्बर में रोते हैं तारे, धरती के फूटे भाग रे!
मानवता का सिन्दूर पुँछा, वाणी का लुटा सुहाग रे!
रोते हैं खेतों में अंकुर, रोई उपवन की डाल रे!
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे!

ट्राम्बे में अणु के कण रोए, रोता है पिघल भिलाई रे!
रो रहा भाखड़ा सतलुज पर, मेरी मिट गई ऊँचाई रे!
बच्चे रोए—चाचा नेहरू! रोई युग की तरुणाई रे!
बचपन के साथी रोते हैं, चल दिए जवाहर भाई रे!
पूरब पश्चिम दोनों रोए, रोए कुबेर–कंगाल रे!
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे!

अब किससे जाकर टकराऊँ, यह पूछ रहा तूफान रे!
दिल की कथा सुनाऊँ किसको, पूछ रहा इंसान रे!
छुट्टी हुई, गया धरती से, हँसता है शैतान रे!
अब पृथ्वी पर किसको भेजूँ, सोच रहा भगवान् रे!
कैसा बड़ा दाँव मारा है, सोच रहा है काल रे!
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे!

युद्ध पूछता विश्व शान्ति से, कहाँ तुम्हारा त्राता रे!
गोरे पूछ रहे कालों से, कहाँ तुम्हारा भ्राता रे!
स्वतन्त्रता ने रोकर पूछा, मेरा कहाँ विधाता रे!
पूछ रहे निर्माण देश के, कहाँ गया निर्माता रे!
पूछ रहे मज़लूम विश्व के, कहाँ हमारी ढाल रे!
रो रही विकल भारत माता, च॰. बसा जवाहर लाल रे!

गांधी पूछ रहे अम्बर से, कहाँ हमारी थाती रे!
कहाँ हमारी लाठी भाई, कहाँ दिए की वाती रे!
पूछ रहा सुकराती हमसे, पूछे चचा वफाती रे!
हर मुश्किल में अड़ने वाली, कहाँ गई वह छाती रे!
झुका न जो संकट के आगे, कहाँ गया वह भाल रे!
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे!

लहरें पूछ रहीं सागर से, कहाँ हमारा मोती रे!
मोती पूछ रहा जनता से, कहाँ जवाहर जोती रे!

राजघाट से शान्तिघाट तक, हाय ! राम धुन होती रे !
दिल्ली अपने नर-नाहर की, चन्दन-चिता सँजोती रे !
आज इन्दिरा गिरी भूमि पर, इसको करो सम्हाल रे !
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे !

नेहरू गए मगर भारत की शान नहीं जाने देंगे !
चाहे जान भले ही जाए, आन नहीं जाने देंगे !
सावधान हैं अब कोई तूफान नहीं आने देंगे !
विश्व-मंच पर भारत का सम्मान नहीं जाने देंगे !
होशियार है उत्तर पच्छिम, असम और बंगाल रे !
रो रही विकल भारत माता, चल बसा जवाहर लाल रे !

जाओ नेहरू, बलिदानों का दीप नहीं बुझने देंगे !
अपनी सीमा में दुश्मन को, पैर नहीं रखने देंगे !
तेरे अटल तिरंगे को हम जरा नहीं झुकने देंगे !
तेरे पीछे माँ का होगा बाँका एक न बाल रे !
मत रो प्यारी भारत माता, हम सभी जवाहर लाल रे !

हम तुम्हें मरने न देंगे

—गोपालदास 'नीरज'

धूल कितने रंग बदले, डोर और पतंग बदले,
जब तलक जिन्दा कलम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !

खो दिया हमने तुम्हें तो पास अपने क्या रहेगा ?
कौन फिर बारूद से सन्देश चन्दन का कहेगा !
मृत्यु तो नूतन जनम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

तुम गए जब से, न सोई एक पल गंगा तुम्हारी,
बाग में निकली न फिर हँसते गुलाबों की सवारी !
हर किसी की आँख नम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

तुम बताते थे कि अमृत से बड़ा है हर पसीना,
आँसुओं से है न ज्यादा कीमती कोई नगीना !
याद हरदम वह कसम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

तुम नहीं थे व्यक्ति, तुम आजादियों के कारवाँ थे,
अम्न के तुम रहनुमा थे, प्यार के तुम पासबाँ थे।
यह हकीकत है, न भ्रम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

तुम लड़कपन के लड़कपन, तुम जवानों की जवानी,
सिर्फ दिल्ली ही न, हर दिल था तुम्हारी राजधानी !
प्यार वह अब भी न कम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

हम लगाएँ फूल किसकी शेरवानी में यहाँ अब ?
और बच्चे पायेंगे इतना बड़ा चाचा कहाँ अब ?
यह बड़ा मासूम गम है—हम तुम्हें मरने न देंगे !!

बोलते थे तुम न, तुममें बोलता था देश सारा,
बस नहीं इतिहास ही तुमने हवाओं को सँवारा।
आज फिर धरती गरम है, हम तुम्हें मरने न देंगे !!

अमर जवाहर

—बालकवि बैरागी

जिसने अपनी राख बिछा दी खेतों में खलिहानों में
जिसने अपने फूल बिछाये ऊसर रेगिस्तानों में
जिसने अपनी पाँखुरियाँ दी ऐटम के शमशानों को
जिसने अपनी खुशियाँ दे दीं तीन अरब इंसानों को
जिसने अपनी मुस्कानें दीं मानवता की आहों को
जिसने अपनी आँखे दे दीं भटकों को, गुमराहों को
जिसने अपनी आहुति दे दी संकल्पों की ज्वाला में
चमक रहा है जो सुमेरु-सा शूरों की मणि माला में
उसका यश गायेगी धरती, अम्बर और पाताल रे

नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे ।।

(२)

निर्मोही ने राजघाट से ये जो नाता जोड़ा है
यमुना तट की ओर हठी ने ये जो रथ को मोड़ा है
ये जो माँ से अनपूछे ही अमर तिरंगा ओढ़ा है
ये जो तीन अरब लोगों को नीर बहाते छोड़ा है
ज्यों की त्यों रख कर के चादर कर गया और कमाल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे ।।

(३)

आजीवन जो रहा हँसाता, क्यों कर भला रुलायेगा
मन कहता है यहीं कहीं है, अभी यहाँ आ जायेगा
मेघ-स्वरों में अगत-जगत के हाल-हवाल बतायेगा
भारत माता की जय हमसे बार बार बुलवायेगा
शोर न करना वरना खुद को कर लेगा बेहाल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे ।।

(४)

अमन दिया ईमान दिया और जिसने हमें जवानी दी
नए खून को राहें देकर जिसने नई रवानी दी
इतिहासों को नई दिशा दी, जिसने नई कहानी दी
चन्दन में जलकर भी जिसने माँ को अमर निशानी दी
हमसे दूर करेगा कैसे उसे बिचारा काल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे ।।

(५)

नस नस में भिद गया तुम्हारी, अपना खून टटोलो तुम
कुछ तो सोचो, आँसू पोंछो, मोती और न रोलो तुम
भावुकता की भाषा साथी और अधिक मत बोलो तुम
तन की आँखें बन्द करो और मन की आँखें खोलो तुम
टूटी है माटी की ममता, बिछड़ा है कङ्काल रे

नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे॥

(६)

प्यार एक-सा किया निठुर ने बेला और बबूलों से
पुजवा लिया स्वयं को जिसने पर्वत जैसी भूलों से
पावन कर दी जिसने गङ्गा अपने पावन फूलों से
वो आँसू से नहीं पुजेगा, पूजो उसे उसूलों से
नहीं चाहिए उसको केसर कुंकुम और गुलाल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे॥

(७)

रोना-धोना बंद करो, लो मस्तक जरा उठाओ रे
भुजदंडों पर ताल ठोंक कर, अङ्गद चरण-बढ़ाओ रे
पीर पराई पीकर, उसको सच्चा सुख पहुंचाओ रे
नीलकण्ठ के वंशज वीरो ! कुछ तो ज़हर पचाओ रे
उसका सरगम टूट न जाये, छूट न जाये ताल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे॥

(८)

खेत-खेत में उगे जवाहर, नीलम फ़सलें लहरायें
नहर-नहर की लहर-लहर में श्रम का अमृत घुल जाये
बाग बगीचे वन उपवन में, नहीं कभी पतझर आयें
नए पसीने की नदियों से रीते सागर भर जायें
प्राण भले ही छूटें लेकिन छूटे नहीं कुदाल रे
नहीं मरा है, नहीं मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे॥

(९)

होनी ने अनहोनी कर ली, बिगड़ी बात सँवारेंगे
कर्मक्षेत्र को पीठ न देंगे, उसका कर्ज उतारेंगे
उसके पद-चिह्नों पर अपनी बाकी उम्र गुजारेंगे

चाहे जा हो जाये लेकिन 'हा हा' नहीं पुकारेंगे
हम ही गौतम, हम ही गांधी, हमीं जवाहरलाल रे
नहीं मरा है, नही मरेगा कभी जवाहरलाल रे।
अभी करोड़ों साल जियेगा अमर जवाहरलाल रे।।

कटुता नहीं मधुरता थी !

—व्रजभूषण सिंह गौतम

उनके जीवन में कटुता नही मधुरता थी।
हँस-हँस सुख-दुख दोनों का व्याह रचाया था,
जीवन की कटुता को नव स्वर्ग बनाया था।
जग के हर आँसू को समझा सच्चा मोती,
जब-जब करुणा पिघली सर्वस्व लुटाया था।।
वह दीनों की सारी पीड़ायें पीते थे,
ले गिरी झोंपड़ी से आशायें जीते थे।
सुलगाते नहीं, बुझाते थे वह ज्वाला को,
उनकी श्वासों में जड़ता नही अमरता थी।।

वह कौन कहाँ से चले कहाँ जाने वाले,
उनको न ज्ञात था कौन यहाँ आने वाले।
दुनियाँ का था उनके ऊपर विश्वास अजब,
वह थे काँटों में फूल सदृश खिलने वाले।।
जीवन-अभिशापों को वरदान समझ गाया,
दो कदम चले चट्टानों को झुकता पाया।
वह क्या जाने तूफान कहाँ से आते है,
उन प्राणों में कायरता नही, सबलता थी।।

वह महाशान्ति के ढेर, हलचलों से वंचित,
सन्तोषों के सागर पीकर निज में सीमित।
उनके उगते वे नये-नये विश्वास अटल,
करते थे जग-विश्वासों को पल में खंडित।।

वह उजड़े उपवन में मृदु सुमन खिलाते थे,
वह सदा सफलता का शृंगार सजाते थे।
वह अंधकार में थे प्रकाश के ज्योतिपुंज,
उनके कम्पन में कम्पन नहीं, सुदृढ़ता थी।।

करोड़ों भारतीयों के गले का हार था नेहरू

—गुलाब खंडेलवाल

घृणा, विद्वेष, जड़ता के लिये तलवार था नेहरू
अहिंसा, सत्य, समता, शांति की पतवार था नेहरू
अडिग विश्वास जीवन का उमड़ता ज्वार था नेहरू
पराजित विश्व को नव शक्ति की तलवार था नेहरू

नये तीरथ रचाता एक नव अवतार था नेहरू
अटल, अविजेय, अविचल, वज्र की दीवार था नेहरू
लिखा जो शौर्य ने साहस पटी पर शांति के कर से
अकुण्ठित चेतना का चित्र वह सुकुमार था नेहरू

गहन दासत्व-तम में मुक्ति-मंत्रोच्चार था नेहरू
पराजित मातृ-भू को वेदना-साकार था नेहरू
बड़े ही यत्न से काता जिसे स्वयंमेव बापू ने—
अहिंसा की पुनी से, सत्य का वह तार था नेहरू

उमड़ते कोटि प्राणों का पुलकमय प्यार था नेहरू
मनुजता के अमर आदर्श की झंकार था नेहरू
विभाजित विश्व के दोनों सिरे नव प्रीति से कसता
नये संसार का रचता नया आधार था नेहरू

बहुत माना हठी था, तेज औ' तर्रार था नेहरू
सरिल हम थाहते जब तक कि उड़ कर पार था नेहरू
हमारी शिथिलता, जड़ता, कुढ़ाती थी उसे निश्चय
करे क्या, पाँव में बिजली बँधी, लाचार था नेहरू

हमारी जय-पराजय-भावना का द्वार था नेहरू
सफलता या विफलता, पूर्ण एकाकार था नेहरू
बहुत थे पूज्य गौतम और गांधी, पर बहुत ऊँचे
मनुज हम-सा, हमीं में से, हमारा प्यार था नेहरू

विकल अणु-त्रस्त जग का सजग पहरेदार था नेहरू
मनुज के प्राण का शिशु, स्वप्न ज्योति-कुमार था नेहरू
अमर संकेत भावी का लिखा इतिहास-पृष्ठों पर
नया मनुजत्व, नव संसार का शृंगार था नेहरू

विभा ऊर्जस्व, मानव सभ्यता का सार था नेहरू
पृथकता, स्वार्थ औ छुद्रत्व हित अंगार था नेहरू
तड़ित के तार में गूँथी पिचहत्तर पाटलों की छवि
करोड़ों भारतीयों के गले का हार था नेहरू

नेहरू-स्मृति

—पोद्दार रामावतार अरुण

अब संसद-भवन में तुम नहीं,
तुम्हारी तस्वीर है !
तीन मूर्त्ति-निकेतन में
अब तुम नहीं, तुम्हारी छाया है !
इतिहास के अमिट अक्षरों में
यद्यपि तुम छिप गए
पर, जीवित है तुम्हारी ज्योति !
तुम्हारा निराकार व्यक्तित्व—
तुम्हारी इच्छाओं को जगमगा-सा रहा है !
जब-जब दृष्टि जाती है तुम्हारे गुलाब पर,
सुगंध कालजयी स्मृतियों को सुगबुगाती है
और, कामनाएँ पंखुड़ियों की तरह खिल पड़ती हैं !
परतन्त्रता-दिनों में तुमने आग्नेय क्रान्तियाँ की,

शान्ति की मशाल

—'बेढब' बनारसी

एक पीड़ा विचित्र होती है, दिल तड़पता है आंख रोती है।
है अंधेरा जहान में छाया, रोशनी आज एक सोती है॥
सुबह रोता है, शाम रोती है, हर जवाँ-खासो-आम रोती है।
देश वालों का हाल क्या कहिए; आज दुनिया तमाम रोती है॥

आज झंडे झुके हैं आलम के, जर्रे-जर्रे में स्वर है मातम के।
छन में जैसे बदल गई दुनिया, गम पे आसार आ गए ग़म के॥
कुछ दिनों का सुनहरा था सपना, अब तो बस नाम रह गया जपना।
जिसकी थाती थी छीन ली उसने, लाल माता ने ले लिया अपना॥

अब गुलाबी वो फूल सीने पर, हम को आने को है कहीं न नज़र।
वह हँसी; प्रेम से भरी झिड़कन, हम न पाएँगे जान भी देकर॥
त्याग की तू मिसाल जग में था, शान्ति की तू मशाल जग में था।
कौन पहुंचेगा उस बुलन्दी तक—एक ऊँचा खयाल जग में था॥

भव के सागर को तर गया है तू, डूब कर भी उभर गया है तू।
तू तो दिल में हर एक के बैठा है—कौन कहता है मर गया है तू॥

मानवता के महाकाव्य

—रमानाथ अवस्थी

मानवता के महाकाव्य के मान्य प्रणेता,
जन-जन के प्राणों में पूजित पावन नेता।
मेरे कवि का श्रद्धावनत नमन स्वीकारो।

स्वतन्त्रता के सूर्य, सत्य के चिर अभ्यासी,
भारत के सौभाग्य, शांति के प्रिय संन्यासी।
मेरे अश्रु-विनिर्मित भावों को स्वीकारो।

महाकाल के अगम जलधि में तुमने निज जलयान उतारा,
तट पर खड़े हुए भारत ने तुमको बारम्बार पुकारा।
मेरे भरे-भरे मानस का आराधन-वन्दन स्वीकारो।
क्षत-विक्षत हिमवान् तुम्हें खोकर निराश है,
जीवन का आनन्द गहन दुःख-सा उदास है !
मेरे जीवन के श्रद्धामय स्वर स्वीकारो !!

ओ धरती के कर्ण !

—जगमोहन कपूर 'सरस'

ओ धरती के कर्ण ! मरण यह नहीं तुम्हारा।
बल्कि किसी ने उपवन आज जला डाला है !

बिलख रहा कण-कण, मनुष्यता सिसक रही है,
रोकर, मार दहाड़ अचेतन हुई मही है !
सत्य काल की गति, पर छीन जवाहर हमसे—
कुटिल काल ने किया आज निज मुख काला है !

सूर्य आर्त हो असमय आज ढला जाता है,
अन्दर ही अन्दर आकाश गला जाता है !
बरस रहे हैं तारे, आँखें पथराई हैं,
अगणित लड़ियों वाली चढ़ी अश्रु-माला है !

जगमग भारत, भुवन ज्योति जिससे लेता था,
आँगन जो तम को प्रकाश से भर देता था !
है कैसी विडम्बना, खेल नियति का देखो,
अंधकार ने वहीं बुना अपना जाला है !

हम सनाथ थे, क्षण-भर में हो गये अकिंचन,
टूक-टूक हो गया हमारे मन का दर्पन !
कहर फट पड़ा असमय ही ऐसे, गिर पड़ता—
हरे लहलहाते खेतों में ज्यों पाला है !

दान-दया-तप स्नेह-शौर्य का [दीप उजागर,
देश-भक्ति का मूर्त रूप, धरती का नाहर!
जिसको सदा विलोक जननि पुलकित होती थी,
यम ने हाय उसे ही ग्रास बना डाला है!!

कर्मठ पहरेदार

—बलवीरसिंह 'रंग'

सोई हुई राख में अब भी दबे हुए अंगार सजग हैं।

ध्वस्त हुआ दासत्व मनुज का, शेष अभी शोषण का बंधन।
प्रभुता के हाथों में अब भी, जीवन के श्रम का मूल्यांकन॥
यद्यपि मंगल-कलश अचेतन, फिर भी वंदनवार सजग हैं!

सुनते हैं निर्माण निकट है, किन्तु पुनर्निर्माण दूर है।
पतन सिन्धु में नैतिकता का एकाकी जलयान दूर है॥
सत्ता के अलसित आसन पर जन-हित के अधिकार सजग हैं!

असंतोष के आघातों से आज शान्ति भी मर्माहत है।
प्रजातन्त्र के सुखद उदय में अब भी दुखियों का बहुमत है॥
तम के बीच जवाहर जैसे कर्मठ पहरेदार सजग हैं!
सोई हुई राख में अब भी दबे हुए अंगार सजग हैं!!

यह परीक्षा की घड़ी है

—रामकुमार चतुर्वेदी 'चंचल'

देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।
सूर्य जैसे टूट करके गिर पड़ा है,
कांपती हैं शोक से व्याकुल दिशाएं!

दिवस अंधों की तरह सिर धुन रहे हैं,
भर रही हैं सिसकियाँ पागल निशाएँ।

हर हृदय पर वज्र जैसे गिर पड़ा है।
हर नयन में आज आँसू की लड़ी है!
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

हर अधर का गीत जैसे छिन गया है,
हर हृदय का मर्मस्पर्शी खो गया है।
स्वर्ग को जो धूल पर ललचा रहा था,
भूमि का वह स्वप्नदर्शी खो गया है।

चोट खाकर लड़खड़ाता है हिमालय,
चीखकर कन्याकुमारी गिर पड़ी है!
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

दर्द में कुछ भी कहा जाता नहीं है,
किन्तु चुप भी तो रहा जाता नहीं है।
चीख उठता है मनुज लाचार होकर,
दर्द जब उससे सहा जाता नहीं है।

ढाल हाथों से अचानक गिर पड़ी है,
वक्ष पर संगीन जब आकर अड़ी है!
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

दर्द है, लेकिन हमें रोना नहीं है,
चोट है, मैदान पर खोना नहीं है।
हम पराजय मान लें? माथा झुका लें?
प्राण रहते यह कभी होना नहीं है।

है विरासत में मिला संघर्ष हमको,
आग के पथ पर जवानी फिर खड़ी है!
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

रोक पाया कौन जब थे राम छूटे?
टोक पाया कौन जब घनश्याम रूठे?
बुद्ध, हर्ष, अशोक, अकबर और गांधी—
भूमि के कितने सुनहरे स्वप्न टूटे।

पीढ़ियाँ गुमसुम जिसे सहती रही हैं,
विरह नेहरू का उसी दुख की कड़ी है !
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

रक्त से सींचो इरादों की मशालें,
राह पर कितना अंधेरा छा गया है।
जो हिमालय एक कंधे पर टिका था,
वह करोड़ों बाहुओं पर छा गया है।

सो गया जिसमें कि धरती का जवाहर
धूल वह चंदा सितारों से बड़ी है !
देश मेरे, यह परीक्षा की घड़ी है।

धरती का शृंगार लुट गया

—डॉ० जयनाथ 'नलिन'

युग-युग तक धरती रोयेगी सिसकी भर-भर, चीर कलेजा,
तड़प-तड़प बेताब गगन चीत्कार करेगा।
कोटि-कोटि कंठों का रोदन,
कोटि-कोटि नयनों की धाराएँ अकुलातीं,
अनजाने आगत को ज्वार-विलीन करेंगी।
इस इतिहास-वक्ष का भीषण,
इतना भीषण घाव युगों तक नहीं भरेगा।
एक जवाहर छिना, धरा का सुख-वैभव-भण्डार लुट गया।
एक लाल रूठा, धरती का सुहाग-शृंगार लुट गया।
एक दीप क्या बुझा, चाँद, सूरज, तारों की उजली आभा—
एक पलक में क्षीण हो गई।
एक छिपी मुस्कान, जगत की आशा-अभिलाषा की बगिया
मुसकानों से हीन हो गई।
नवल राष्ट्र-निर्माण-विधाता,
उत्पीड़ित जन-जन आतंकित मन के त्राता,
स्वर्ग-विहारी इस धरती को स्वर्ग बनाने,
धरती की बंजर क्यारी में नव-खुशियों की बेल उगाने,

तुम अवतरित हुए धरती पर
विश्वशान्ति, मानवता, समता, मानव से पावन की ममता,
प्यार, अचल विश्वास नवल, जन-जीवन की फसलें लहराने।
चले गये तुम छोड़ बिलखती, रोती, आहे भरती धरती !
क्या न लौट कर अब आओगे ?
कौन यहाँ अब शोषित जन को अपनायेगा ?
चला गया जो दीप सँजो कर नहीं बुझेगा—
मानव का संकल्प, शान्ति का जगमंगल का
नही झुकेगा, नहीं झुकेगा !

महामानव नेहरु के महाप्रयाण पर

—डॉ० विश्वनाथ शुक्ल

जीकर इतने शरद्
और फिर सहसा मर कर आज
सुनाया तुमने यह श्रुतिवाक्य
ऊर्ध्वमुखबाहु उठाकर
'न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्'
मानव से बढ़ नहीं त्रिलोकी में
कुछ भी उन्नततर।
जाना हमने आज,
मनुज कितना सशक्त, सक्षम होता है।
(तुमको पाकर)
अनुभव किया,
मनुज के बिना,
मनुज कितना अशक्त, अक्षम होता है।
(तुमको खोकर)
पहचाना फिर गहराई से तुम्हें—
'भूतिमत् सत्व' रूप में,
'श्रीमद् ऊर्जित' तत्व रूप में,
दिव्य धाम के अंश रूप में।
हे, मानवोत्कर्ष के चरम निदर्शन,

सौभग की चरमावधि,
यशः तेज, सौन्दर्य विभव की अक्षयनिधि,
सर्वोत्तम के प्रतिनिधि।
औ' भारत के विग्रहवत्-गौरव।
हे, युवक-हृदय सम्राट्,
हे, भरत भूमि के मौलिरत्न
मोती के लाल, जवाहर।
तुम बहुत बड़े थे—बहुत बड़े,
हर तरह—
कि जितना बड़ा कभी कोई मनुपुत्र
भूमि पर जन्मा था, जन्मा है,
या,
कहीं किसी शतरूपा की
अब तक की अर्जित,
पुण्यराशि लेकर जन्मेगा॥

एक हस्ताक्षर गुलाबी

—छविनाथ मिश्र

देवता है, या फरिश्ता, रोशनी का एक रिश्ता
सूर्य से भी कुछ प्रखरतर आदमी जन्मा नहीं है
सिर्फ नेहरू है कि जिसकी एक भी उपमा नही है!

एक प्रतिद्वन्द्वी अँधेरे का सुनहली सुबह जैसा
सिन्धु की गहराइयों के पार उभरी सतह जैसा
और इनसे भी कही कुछ बहुत गहरा, बहुत तीखा
लग रहा है जो अकेला, यक्षिणी के विरह जैसा

खो गया अनमोल टीका, लग रहा हर रंग फीका
टिक सके क्षण भर संवर कर, एक भी सुषमा नही है!
सिर्फ नेहरू है कि जिसकी एक भी उपमा नही है!

सिर्फ जनता का 'जवाहर', जौहरी सारे वतन का
क्या कहूँ—मालिक, मसीहा, बागवाँ सारे चमन का
प्यार की अनगिन ऋचाओं मे बँधे पावन स्वरों-सा
तैरता है, लोक-मानस में अमर शिल्पी अमन का

एक ध्रुवतारा सरीखा, जहाँ दीखा—वही दीखा
विश्व-मन्दिर में कहीं भी दूसरी प्रतिमा नहीं है !
सिर्फ नेहरू है कि जिसकी एक भी उपमा नहीं है !

एक हस्ताक्षर गुलाबी जिसे सुधि शृंगारती है
एक प्यारी गन्ध जिसको हर हवा अँकवारती है
घाटियों में भटकता है युग किसी घायल हिरण-सा
अश्रु-जल से चेतना 'ऋतुराज' को सत्कारती है

देहरी-घर-द्वार-आँगन, झोंपड़ी या इन्द्र-कानन
धूल-माटी, पात-पँखुरी—वह कहाँ बिलमा नही है!
सिर्फ नेहरू है कि जिसकी एक भी उपमा नहीं है !

प्रश्न-चिह्नों-सी खड़ी हैं—कई बातें, कुछ व्यथायें
तड़पता है हर कबूतर—ऐंठती युग की शिरायें
कहीं कुछ आत्मीय से भी अधिक जो लगता रहा है
फूल-सी मुसकान उसकी अब न बाँटेगी दिशायें

साक्षी सारी धरा है, मुक्ति को जब से वरा है
शान्ति का सन्देश लेकर कहाँ तक भरमा नही है !
सिर्फ नेहरू है कि जिसकी एक भी उपमा नहीं है !

अब दिशाएँ मौन

—डॉ० प्रभाकर माचवे

डेनमार्क का राजपुत्र हैम्लेट
कतहा रहा : 'करूँ या न करूँ ?'
फ़ारस का लाल-लाल गुलाब
रूसी पंखुरियाँ : अब झरूँ अब झरूँ ?

अब वे आँखें सदा को मुँदीं
स्वप्नदर्शी नीमे दरूँ नीमे बरूँ

दो बरफ़ के सिल के मद्धिम वह चिराग़
एशिया की मुक्ति का वह मन्त्र-गुरु
जब भरा था घट उलीचा बेपनाह
अब हमारा खोखलापन रूबरू

अब दिशाएँ मौन, उत्तर गूँज है :
कौन है दूजा यहाँ पर ?
—नेहरू
विज्ञान की पूजा जहाँ—वाँ नेहरू !

महाकाव्य रह गया अधूरा

—आनन्द मिश्र

रो, जितना रो सके लेखनी! हिमगिरि का विश्वास कहाँ है?
और बिलख निःसंबल वाणी, करुणा का इतिहास कहाँ है ?
टूट गया सुख-स्वप्न शान्ति का, बिखर गई वरमाला मन की,
पंखहीन हो गई कपोती, शेष कथा रह गई सृजन की ।
महाकाव्य रह गया अधूरा, गति का वेग विराम हो गया ।
अब तेरा पर्याय नहीं है, मेरा देश अनाम हो गया ।
तेज-हीन हो गई धरित्री, नरता आज अनाथ हो गई,
ज्योति-पुञ्ज खो गया तिमिर में, चेतनता नत-माथ हो गई ।
योद्धा के तन में कवि का मन, अडिग चरण, सुकुमार भावना,
प्रियदर्शी, अकबर, गांधी की परंपरा, संकल्प, साधना !
अस्तमान वर्चस्व गिरा का, अस्तमान साहस की भाषा,
भस्मसात् यौवन की गरिमा, छिन्न-भिन्न भावी की आशा ।
वह उल्लास विरल फूलों का, वह उमंग, वैसी अभिरुचियाँ,
हम हैं धन्य कि हमने देखी चिर नवीन वे तापस छवियाँ ।
पुण्य फले होंगे सदियों के, तब हमने ऐसा धन पाया,
एक बूँद के अभिलाषी थे, चिर उदार, अक्षय धन पाया ।

शुभ, सुन्दर, मंगल के रागी ! किन प्राणों में कला पलेगी ?
खिलते रहें गुलाब मगर, उनमें वह लाली कहाँ मिलेगी ?
हम तकते रह गये, गया वह, हमसे अधिक हमारा ज्ञाता,
दीन-हीन, पद-दलित, विश्व-मानवता का एकाकी त्राता।
वह युग-पुरुष कि पौरुष का युग ? सीमा की सीमा नर-व्रत की,
उसकी गति, गति की मर्यादा, उसकी मुक्ति, मुक्ति प्रण पथ की !
ऐसे जिए, मिला माटी से, मूल-ब्याज सौ बार दे गये;
पंचभूत परितृप्त हो गये, साँसों को शृंगार दे गये।
हिंसा, घृणा, अनीति, अनय के, जहाँ कहीं भी विषधर जागे,
दर्शन का सुख भोग रहे थे, तुम विषपायी सबसे आगे।
इन उदास बोझिल घड़ियों में देख रहा हूँ चित्र तुम्हारा,
भाल चन्द्र, विष कंठ, दृगों में प्रलय, शीश गंगा की धारा।
आज घुमड़ते हैं मानस में, दीवाने सौ रूप तुम्हारे,
पराधीन भारत के वे क्षण, चारों ओर सघन अँधियारे।
मुक्ति-यज्ञ की पावन-वेला, तुम रावी-तट पर हुंकारे,
जय स्वतंत्रते ! अभय भारती ! सावधान हो गये सितारे।
निर्धन का धन, निर्बल का बल, ओ भयभीत मौन की वाणी,
कोटि-कोटि कंठों से गूँजी, वह निर्भीक गिरा कल्याणी।
कारागृह बन गये शिवाले, वरदानों-सी लाठी-गोली,
बालक, युवा, वृद्ध, नर-नारी, धधक उठी विप्लव की होली !
दुर्दम, ध्रुव-सकल्प, सिद्धियाँ—पीछे, तुम थे आगे-आगे,
तोड़ चले दुर्दिन की कारा, सोये भाग भूमि के जागे।
फिर तुमने यह भवन बनाया, ईंट-ईंट जिसकी ध्रुवतारा,
दीन प्रजा प्रतिमा-सी पूजी, ध्येय ध्यान सर्वस्व तुम्हारा।
लोकतंत्र की चरम आस्था, विश्व-एकता के अनुरागी,
वैभव के घर जगे और बिन भोगे ही हो गये विरागी !
धन-विलास, सत्ता की लिप्सा, तुम्हें नहीं व्यापी अविकारी,
देवालय की दिव्य कल्पना, एक प्रश्न चिंतना तुम्हारी।
कूटनीति के कलुष पंक में खिले शुभ्र अम्लान कमल से,
धोते रहे व्यथा जीवन-भर श्रम-स्नेह-श्रद्धा के जल से।
सत्ता प्रभुता नहीं, मात्र जन-सेवा—तुमने दी परिभाषा,
नेता बहुत मिलेंगे, वैसी कहाँ मिलेगी पर अभिलाषा।

देवदूत ! संग्राम शान्ति के, जग ने तुम्हें अभय-सा पाया,
युद्धों से संत्रस्त मनुजता, तुम छतनार वृक्ष की छाया !
प्रज्ञा की आचार-परिधि तुम, समता के अप्रतुल पुजारी,
अस्थिरता के सजग-संतुलन, फिर समष्टि हो गई भिखारी।
तुम्हें सौंपकर पाल तरी के, हम जैसे निश्चित हो गये,
तुम अविराम जूझते आये, हम सपनों के बीच खो गये।
करें वंदना क्या हम निर्धन ! आंसू के फूलों की माला,
क्षत-विक्षत श्रद्धा के अक्षत, दीप-दान प्राणों की ज्वाला।
उसे कौन चिन्ता झकझोरे, जिसे मिला तुम-सा सम्बल था,
कोई आँधी आँख मिलाती ? कौन ज्वार में ऐसा बल था।
अब केवल चिन्ता ही चिन्ता, हम हतबोध कि हम हतभागी,
फिर धूमिल हो गया भविष्यत्, फिर विकराल निराशा जागी।
तुम तो असमय चले विधाता ! हम कितने असहाय हो गये,
हम कितने बलहीन हो गये, हम कितने निरुपाय हो गये।
फूट-फूट रो रही घटाएँ, बिलख-बिलख आँधी बहती है,
सूर्य अस्त हो गया, प्रकृति ही मानो करुण कथा कहती है।
शायद कहीं स्वर्ग में कितने कातर कंठ पुकारे होंगे,
कहीं मुक्ति होगी कारा में, पीड़ित कहीं दुलारे होंगे।
शायद किसी अदृश्य लोक में दानवता के नर्तन जागे,
तुम सुनकर चल दिये विक्रमी ! हम रोते रह गये अभागे ॥

नेहरू श्रद्धांजलि

—भारत भूषण

सिमटे तो ऐसे सिमटे तुम, बँधे पँखुरियों से गुलाब की,
बिखरे तो ऐसे बिखरे तुम, खेत खेत की फसल हो गये !
जब जब गेहूं धान पकेंगे,
तुम किसान की हँसी बनोगे।
तीरथ-तीरथ लहर-लहर पर,
किरनों से जयहिन्द लिखोगे ॥

जाग तो ऐसे जागे तुम, कड़ियाँ हथकड़ियाँ सब टूटीं,
सोये तो ऐसे सोये तुम, कोटि कोटि दृग सजल हो गये !

धरती पर पद-चिह्नों तुम्हारे,
पृष्ठ बन गये इतिहासों के।
फटने से भूगोल रह गया,
नखत रह गये आकाशों के ॥

उमड़े तो ऐसे उमड़े तुम, खडहर को जीवन दे डाला,
रीते तो ऐसे रीते तुम, सात समंदर विकल हो गये !

कण कण में रच कर स्वदेश के,
तुम मेंहदी से छूट गये हो।
प्राणों से रूठो तो जाने,
जीवन से तो रूठ गये हो ॥

महके तो ऐसे महके तुम, सम्मोहित बारूद हो गई,
दहके तो ऐसे दहके तुम, सावन-भादो विफल हो गये !

एक ही था

—लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा'

भारत में जनता का देखा, वह जननायक एक ही था।
वीर जवाहरलाल विश्व में, शांतिप्रदायक एक ही था ॥

राजनीति का ध्रुवतारा, वह सभा-विधायक एक ही था।
वर्तमान का मुकुटमणि, भूपति के लायक एक ही था ॥
कलियुग का वह पार्थ महा, रक्षा हित शायक एक ही था।
गौरवमय सेनानी कट्टर, अरु अधिनायक एक ही था ॥
कोटि-कोटि हृदयों का स्वामी, और सहायक एक ही था।
वीर जवाहरलाल विश्व में, शांतिप्रदायक एक ही था ॥

पश्चिम के तानाशाहों का, अनीतिढायक एक ही था।
बापू जी का अनुगामी, गुण-गौरव-गायक एक ही था ॥

भारत-रूपी बगिया में वह सुरभित 'जायक' एक ही था।
सत्य-न्याय का पोषक अरु भारत माँ पायक एक ही था ॥
अथक यात्री-देवदूत-मानवता 'कायक' एक ही था।
वीर जवाहरलाल विश्व मे, शान्तिप्रदायक एक ही था ॥

कर उत्साहित भीरु जनों को, शक्तिप्रदायक एक ही था।
प्रतिद्वन्द्वी के लिए भयानक, वह दुखदायक एक ही था ॥
दुखियों अरु दीन-गरीबों का, रक्षक अरु छायक एक ही था।
राग-द्वेष का नाम नही, सब ही का चायक एक ही था ॥
पंचशील की शिला, विदेशों का भी धायक एक ही था।
वीर जवाहरलाल विश्व मे, शांतिप्रदायक एक ही था ॥

सौम्य मूर्ति, सज्जन प्रबुद्ध मानव शुभदायक एक ही था।
आनन पर पौरुष झलके, सब का मन भायक एक ही था ॥
शांति प्रतीक एशिया का, अरु अशान्ति घायक एक ही था।
असर न जादू करे किसी का, ऐसा 'मायक' एक ही था ॥
नेताओं में श्रेष्ठ 'रमा', गणतंत्रविनायक एक ही था।
वीर जवाहरलाल विश्व में, शांतिप्रदायक एक ही था ॥

चला जवाहर प्यारा !

—रामसकल ठाकुर 'विद्यार्थी'

टूट गया सहसा स्वदेश का यह सौभाग्य-सितारा !
शक्ति हुई है क्षीण राष्ट्र की, चला जवाहर प्यारा !!

चला सिसकता छोड़ राष्ट्र को राह दिखाने वाला,
चला शान्ति का दूत स्वर्ग को भू पर लाने वाला।
जिसे देखता था हर प्राणी श्रद्धा-भरे नयन से,
जिसने दुनियाँ को बाँधा था अमर प्रेम-बन्धन से ॥
दीन, दु.खी, दलितों से जिसका रहा स्वजन-सा नाता,
चला सभी को छोड़ अचानक जग का भाग्य-विधाता।

कण-कण में है व्याप्त उदासी, साँसों में हलचल है,
असमय में ही सूख चला मानवता का शतदल है ॥
चिर निद्रा में लिप्त हो गया विश्व-शान्ति का प्रहरी,
अगणित बाधाओं को दी थी जिसने ठोकर गहरी।
है गुलाब, पर आज मधुप का वह गुंजार नहीं है,
सौरभ को हम बाँध सकें, इतना अधिकार नहीं है ॥
दिल्ली ने अपने जीवन का दिली दोस्त खोया है,
हमें जगाने वाला खुद ही महानींद सोया है।
काँप उठा है धरती माँ का टूटा हुआ कलेजा,
पुण्य-सरीखे ऐसे सुत को जिसने सदा सहेजा ॥
अम्बर तक की आँखों से बरसी आँसू की धारा,
टूट गया सहसा स्वदेश का यह सौभाग्य-सितारा ॥
विश्व-विदित भारत माता की ममता चली गयी है,
नवयुग का इतिहास चला है, समता चली गयी है।
आज बहुत फीका लगता है सचमुच चाँद गगन का,
सदा-सदा को दूर हुआ है मीत हमारे मन का ॥
आज देह से प्राण अलग हैं औ' संगीत अधर से,
घर का मालिक स्वयं निकल कर चला अचानक घर से।
वह देखो आलोक बाँटती वहाँ क्षितिज की रेखा,
जिसने बनती-मिटती सारी मानवता को देखा ॥
हमें सिखाते हैं तेरे ये चरण-चिह्न चमकीले,
सत्य, अहिंसा और शान्ति के बन्धन पड़ें न ढीले।
त्याग हमारी अमर साधना औ' सेवा के व्रत हैं,
जीवन को ज्योतिर्मय करने में हम सदा निरत हैं ॥
पूजेगी मानवता तुझको श्रद्धा के फूलों से,
तेरी सुरभि सदा आयेगी भारत की धूलों से।
बाधाओं के शूल चुभेंगे पर पग नहीं रुकेगा,
जब तक है आशीष, हमारा झंडा नहीं झुकेगा ॥
जग का यह इतिहास कहेगा पंचशील का नारा!
जब तक सूरज-चाँद अमर हैं, अमर जवाहर प्यारा ! !

हम न चाहते तेरी पूजा हो अक्षय चन्दन से,
हम न चाहते तेरी पूजा हो केवल वन्दन से।

हम न चाहते है पूजा में कागज की मालायें,
हम न चाहते पूजा में हम घी के दीप जलायें ॥
हम न चाहते हैं व्यक्तित्व बढ़ाना निज रोली से,
मानव की पूजा होती है अपनी ही बोली से।
मन के मीठ दीप स्नेह से सजते सदा रहेंगे,
कर्त्तव्यों के बीन हमारे बजते सदा रहेंगे ॥
ऋषियों की सन्तान हमी हैं चिर यश के अभिलाषी,
तीथराज आँगन में शोभित, शोभित मथुरा-काशी।
जाने वाले ! रह-रह तेरी याद बहुत आयेगी,
जब बाधाओं की काली बदली नभ में छायेगी ॥
जीवन के हर अधकार में तेरी ज्योति मिलेगी,
तेरी ही छाया जीवन में शान्ति सभी को देगी।
ओ मानवता के प्रतीक, ओ तरुणों की तरुणाई,
हम आँसू के अर्घ्य चढ़ाकर देते तुम्हे विदाई !!
हम न रुकेंगे, हम न झुकेंगे, सम्बल हमें तुम्हारा,
जब तक सूरज-चाँद अमर हैं, अमर जवाहर प्यारा !
टूट गया सहसा स्वदेश का यह सौभाग्य-सितारा !!
शक्ति हुई है क्षीण राष्ट्र की, चला जवाहर प्यारा !!

हंस सिधारा स्वर्ग, छोड़ कर नश्वर काया

—विश्वेश्वर शर्मा

हंस सिधारा स्वर्ग, छोड़ कर नश्वर काया।
क्षण भर ही में तोड़ जगत की सारी माया ॥
हाय ! भारती को कैसा संताप लग गया।
कैसा इन नन्हे बच्चों को शाप लग गया ॥
बोल विधाता ! बोल, अरे निष्ठुर नरघाती,
किन पापो के बदले मे यह ताप लग गया ॥
दूर चला जन-प्राण, रह गई केवल छाया,
हंस सिधारा स्वर्ग, छोड़ कर नश्वर काया ॥

भटक रही है आज भावना भूली-भूली,
गहन वेदना की कैसी यह संध्या फूली ?
डूब गया विश्वास आज स्वाधीन देश का,
शान्ति-क्षितिज पर पुनः घोर अँधियारी झूली ॥
आशा ने यह धीरज का फल कैसा पाया ?
हंस सिधारा स्वर्ग, छोड़ कर नश्वर काया ॥

साँसों का व्यापार रुक गया चलते-चलते,
कल्प वृक्ष ज्यों सूख गया हो फलते-फलते।
जीवन की हर प्यास अधूरी तड़प रही है,
आया कहाँ कुभाग्य, साध को छलते-छलते।
स्नेह खड़ा संतप्त, चोट कटु सच से खाया।
हंस सिधारा स्वर्ग छोड़ कर नश्वर काया ॥

कैसा है यह व्यंग्य ? कुटिल कैसी विडंबना !
सत्यानाशी चली आज कैसी प्रभंजना ॥
क्रोड़ों का प्रतिपाल पसारे हाथ चल दिया,
देव देखते रहे भाग्य की सब प्रवंचना।
अरी मृत्यु ! दुष्कर्म तुझे यह कैसे भाया।
हंस सिधारा स्वर्ग, छोड़ कर नश्वर काया ॥

ज्यों की त्यों चदरिया धर गया

—डॉ० मोहन अवस्थी

चोट लगती थी किसी को, तू तड़पता था मगर,
विश्व की पीड़ा सँजोए फूल-सा कोमल जिगर।
चोखकर सिर पीट कर, अब हैं करोड़ों रो रहे,
एक क्षण तो बात कर, यों जा न सब को छोड़कर।
सूझता है कुछ न, जाएँ हम सभी अंधे कहाँ ?
भार तेरा ले सकें, वे वज्र के कंधे कहाँ ?

तू भयंकर उलझनों में शांत दृढ़चेता रहा,
देश की इस नाव को तूफ़ान में खेता रहा।
जिन्दगी भर तो मिली ही प्रेरणा तुझसे मगर,
मौत में भी तू हमारा अग्रणी नेता रहा !!
धैर्य है तो सब झुकेंगे, सिधु-सम गहरे रहो।
काल से भी कह दिया, कुछ मास तक ठहरे रहो !!

देह थी मुस्कान-निर्मित, रंग था सोना खरा,
थी वशीकर मंत्र वाणी, हास था जादू भरा।
दीप्त मुख, साहस हृदय में, दृष्टि में संजीवनी,
छू दिया तूने अगर तो हो गया सूखा हरा !
कर सकेगा कौन ऐसा काम, जो तू कर गया ?
ओढ़कर निष्पाप ज्यों की त्यों चदरिया धर गया।

यह भविष्यत् के लिए तूने जवाहर क्या किया ?
आंसुओं की बाढ़ में सम्पूर्ण राष्ट्र डुबो दिया।
यह बता दे, रो पड़ें जब शिशु कि है चाचा कहाँ—
कौन मुँह लेकर कहेंगे हम कि उसको खो दिया।
किस तरह स्वीकार कर लें हम कि भारत लुट गया।
हम न मानेंगे हमारे बीच से तू उठ गया ॥

गंगा और गुलाबों वाला इन्सान

—डॉ० रमेश कुंतल मेघ

अभी अभी
एक अवलोकितेश्वर इतिहास के माथे पर तिलक लगा गया है।
अवलोकितेश्वर-मुस्कानों में ऐशिया-अफ्रीका झिलमिला गया है॥
मोहन मुस्कानों से मंत्र-मुग्ध खड़े हैं
देश-काल;

महाकाल,
पारदर्शी होकर

जला रहा है अंधकार में
अमर मशाल !

- जब जब दिलों में अंधेरा छा गया था,
जब जब प्रश्नाकुल गंगा उदास हो गई थी,
जब जब हिमालय के देवदारु सन्नाटे से चौंके थे,
जब जब खेतों में पहला नया ट्रैक्टर आया था,
इस्पात-मिलों में पुलों के विशाल धनुष ढले थे
बच्चों की किताबों में सपना लिखा गया था
तब तब
अवलोकितेश्वर-मुस्कानों ने हमें समझाया नये का अर्थ
लाल गुलाबों वाले एक इंसान ने प्रजातंत्र बनाया समर्थ !

- उन मोहन मुस्कानों में जादू है, जीवन है; पर्वत, हिमप्रपात हैं।
एक परम्परा की बुजुर्गी और नवीनता का जलजात है ।।
जादू था : शताब्दियों के दिग्विजयी रथ पर रखी थीं
बड़ी-बड़ी फैक्टरियाँ,
समाजवाद के रास्ते, योजनाओं के नक्शे, और
नदी-बाँधों की बिजलियाँ;
जादू है : अनजाने गाँव-गाँव विचारों का रथ चलता रहा
कोणार्क का सूर्य-रथ रोज हमें मिलता रहा।
गुलाबों वाला इंसान
हर गली, चौराहों, गाँव में, शहर में
हर रोज़, हर माह, हर वर्ष,
हमें, हममें ही मिलता रहा !
हमारी समस्याओं में तदाकार होता रहा !!

- क़दीम संस्कृतियों की शान्ति विचारों में तेजस्वी
तपस्वी हो जाती है
क़दीम समाजों की जिन्दगी जरा नयेपन से थोड़ा कतराती है
भविष्य की गंगा किन्तु, मित्र ! हमें गोद भरे जाती है ।।

- गंगा में भारत का प्रतिबिंब झिलमिलाता है
गुलाबों वाला इंसान
अलविदा कह कर
मशाल थमा जाता है !!

तुम्हें मरने नहीं देंगे

—आनन्द आदीश

हम तुम्हारे पुण्य की परिधि
तुम्हें विश्वास देते हैं
धरा की गोद में जब तक सलिल जलधार बहती है,
निलय के वक्ष पर अठखेलियाँ करते जलद जब तक,
गुलाबी गंध जब तक चूमती भटकी हवाओं को,
निशा के केश जूड़े में बँधा है चाँद जितने दिन,
तपन अवशेष है जब तक दिवाकर की भुजाओं में,
हिमालय की ऊँचाई पर
कहीं भी बर्फ जमती है—
हमें सौगन्ध है,
विश्वास है,
विश्वास देते हैं
भरत की भूमि पर पापी चरण पड़ने नहीं देंगे—
किसी दुर्दान्त की माँ पर नजर गड़ने नहीं देंगे।
नहीं घटने कभी देंगे तुम्हारे कर्म की महिमा
अहिंसा के कपोतों को कभी डरने नहीं देंगे।
तुम्हारे सत्य की सीमा तुम्हीं हो
हम तुम्हें विश्वास देते है
तुम्हारे नाम के अमृत्व को मरने नहीं देंगे

कहाँ गया

—डॉ० प्रेमप्रकाश गौतम

कहाँ गया मेरे उपवन का वह प्यारा रखवारा ?
जिसने मुरझाते-गिरते सुमनों को गले लगाया,
सींच रक्त से अपने हर पौधे को हरा बनाया।
सतत सजग रक्षक वह जो निशिदिन देता था पहरा,
उपवन-सेवा में जिसने अपना सर्वस्व लुटाया॥

वह माली जो आतुर था द्रुत ही मधुऋतु लाने को,
मृत्युलोक के इस कोने पर नंदन विकसाने को।
वह कर्मठ सो गया अचानक कार्य छोड़ क्यों सारा ?
कहाँ गया मेरे उपवन का वह प्यारा रखवारा ?

धरापुत्र वह धन्य रहा जो प्रतिपल सेवा-तत्पर,
अथक साधना-मग्न सर्वदा सारी चोटें सहकर।
ध्यान दिया जिसने सदैव था बड़ी-बडी बातों पर,
बड़े-बड़े फल मूल्यवान् देने चाहे थे भर भर ॥
जिसके रोपे पौधों के सुमनों से भू सुरभित है,
जिसके वृक्षों की शीतल छाया में मनुज सुखित है।
कहाँ गया वह जिसने यह उजड़ा उद्यान सँवारा ?
कहाँ गया मेरे उपवन का वह प्यारा रखवारा ?

कहाँ गया वह जिसको खो यह बगिया मुरझाई है,
कितने दिन हो गये, न क्षण भर को भी मुस्काई है।
घटा उदासी की यह अब भी दिग्-दिग् में छाई है,
झुकी मौन चिन्ता में डूबी-सी हर ऋतु आई है ॥
कब इस उपवन में मेरा वह माली फिर आयेगा ?
इन मुरझाये सुमनों पर फिर कब सुहास छायेगा ?
जाने किस दिन लौटेगा अब वह उल्लास हमारा ?
कहाँ गया मेरे उपवन का वह प्यारा रखवारा ?

राष्ट्र-प्राण

—श्यामसुन्दर 'बादल'

किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर !

तुझे विरासत में बापू से मिला शान्त अनुशासन,
तेरे लिए करोड़ों उर के बिछे हुए सिंहासन।
तुझे बोस ने अग्रज माना पन्थ-प्रदर्शन चाहा,
उर में जलती रही आग पर अनुशासन निर्वाहा ॥

कौन धरा की स्वरूप रानी जन सकती यह नाहर ?
किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर !!

अन्तर्राष्ट्र-परिस्थिति रहती हस्तामलक तुझे थी,
अखिल विश्व-सेवा करने की रहती ललक तुझे थी।
कभी किसी स्थिति में तूने साहस नहीं भुलाया;
कमला की आत्मा को नित ही अपने उर में पाया।।
होते मोती, आज लाल पर करते लाल निछावर!
किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर!!

घर के भाई की महिमा को जान सके कब घर के,
तेरा अभिनन्दन करते थे राष्ट्र सकल भू पर के।
हिटलर अपने देश-प्रेम पर रहता था मतवाला,
वह मुसोलिनी कहाँ ? वचन पर निर्भय मरने वाला।।
घर में कई वीर सम्मानित—चर्चिल घर में बाहर!
किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर!!

महासमर ने गतियाँ विधियाँ किसकी थी न बदल दीं,
रंग-रूप किसकी रंगरलियाँ इसने थी न कुचल दीं ?
लेकिन तू जो जब था उससे आगे ही बढ़ आया;
तूने अपना नाम न किसकी जिह्वा पर खुदवाया ?
तू घर में सम्मानित जितना—बाहर अधिक उजागर!
किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर!!

तू भारत-सम्राट् रहा है अब तक बिना तिलक का;
आज तिलक करने को तेरा आकुल लोक खलक का।
जमा गया तू वीर देश में प्रजातन्त्र का आसन,
अपना और प्रेम का देखें कैसा होता शासन ?
एक रूप बन जा अनन्त तू—हर दिल मे जा-जाकर!
किस वसुधा का वीर बराबर तेरे, वीर जवाहर!!

सूरज कभी नहीं डूबेगा

—भगवान स्वरूप 'सरस'

सत्ताईस मई : दोपहर की कड़ी धूप,
यकायक श्रम- ।कर सूख गया;
सूर्य बुझ गया : लाल गुलाब झर गया;
विधवा हो गई बाग की हर डाल।

चौराहे की भीड़ से कोई धैर्यवान्
आँसू का घूँट पीकर,
कण्ठ पर साहस का लेप लगाकर,
रुँधी आवाज में जोर से चीखा—
कल सुवह सूरज नहीं निकलेगा !
स्तब्ध रह गई हर स्वाँस
काँप गई धरती
धड़कन बन्द हो गई आकाश की
हर आँख डबडवा गई
आवाज फिर गूँजी : कल सुवह सूरज नहीं निकलेगा……।

लगा कि प्रकृति के गाल पर—
नियन्ता का मूक इशारा पाकर—
किसी ने चाँटा मार दिया है
धरती ने रास्ता वदल दिया है
इतिहास के पाँव डगमगा गये है
अखवार की हर खबर पुरानी हो गई है
हवा थम गई है
हर निगाह सशंकित है—कल क्या होगा ?

रेस्ट्राँ के द्वार पर पड़ पर्दे कफन वन गये,
हाथ काँपे : तमाम प्लेटों का दिल—
गिर कर चूर-चूर हो गया,
हम सव परकटे कवूतर की तरह
दरवे से वाहर पंख फड़फड़ा उठे।
सरकस के कटघरे से भागा हुआ शेर पागल हो गया।

डबल रोटी के टुकड़े से मुँह हटाकर—
लार टपकाता हुआ आवारा कुत्ता—
कल के अँधेरे को चिन्ता में लीन हो गया
भूखी स्याह आँखें जड़ हो गईं
एक सितारा दिन के उजाले में आसमान से टूटा
और धूल में समा गया !
धीरज की नाव डूब गई,
साहस की पतवार छूट गई,
बिजली के खंभे को मजबूती से पकड़े बचपन सिसक उठा
चाकलेट का डिब्बा उदास हो गया,
सब जगह : एक गहरी —
भीगी-भीगी खामोशी ! एक चिन्ता : एक निराशा !
तभी सहसा बिजली सी कौंध गई—
चिथड़ों की गठरी समेट कर—
धूल भरे बालों को नोंचकर,
दाँत किटकिटा कर—जोर से चीखी—
तुम सब पागल हो :
ओ इस युग के अधजीवित इन्सानो ?
तुम विवेक-शून्य हो गये हो ।
आत्मा कभी नही मरती, सूरज कभी नहीं डूबता !
जब तक हवा चल रही है,
जब तक हिमालय पर बर्फ है, गंगा-यमुना हैं
तब तक जलता सूर्य नही डूबेगा ।

भिलाई और हीराकुण्ड को सजोते हुए हाथों में—
खजराहो और अजन्ता को तरासती हुई छेनी में—
त्रिवेणी को मथनी हुई नावों में—
घाटियों, पर्वतों, गाँवों, नगरों में—सब जगह रोशनी है
पंचशील का अमर उजाला है;
हमारा 'जवाहर' मरा नही : कण कण में समा गया है
सब जगह रोशनी है—सब जगह जवाहर है
वह मरा नही : जिन्दा हो गया है ।
डबडबाई आँख से कहो, धीरज धरें

सीधे पथ पर देख कर चलें
उसको थाती सम्हाल कर ले चल
फिर सूरज कभी नहीं डूबेगा :
सूरज कभी नहीं डूबेगा।

श्रद्धा के फूल

—डॉ० सिद्धनाथ कुमार

काल एक बार फिर हारा,
आदमी जीता।
राख उड़ गई,
चिह्न शेष रहे,
आदमी अमर हुआ,
सत्य हुई फिर गीता।

समय के कोट से एक गुलाब का लाल फूल गिर पड़ा,
समय के हाथ से एक उजला कबूतर उड़ गया।
एक आत्मकथा का एक पृष्ठ फटा,
और समय के इतिहास में सदा-सदा के लिए जुड़ गया।

महाप्रस्थान हुआ उसका,
समय रुक गया।
धरती डोल गई।
प्रकृति का उच्छ्वास उठा,
अश्रुकण बरसे।
अपनी यह प्यारी धरती माँ
व्यंजना मे नहीं, अभिधा में
अपने हृदय का दु:ख बोल गई।

बैठक बैठी रही,
झटके से दरवाजा खोल वह बाहर निकल गया।

बात ठिठक गई।
कोई क्या कहे ?
लगा, जैसे वह एकाएक सबको छल गया।
उसके माथे पर सचमुच बड़ा भारी बोझा था,
उसे सबके माथों पर डाल गया है।
बड़ा कुशल नेता था, सबका शुभचिन्तक,
मरते-मरते अपना कर्त्तव्य पाल गया है।

उसने बहुत किया, बहुत किया,
उतना उसे नहीं करना चाहिए था।
जन-जन के हृदय को
श्रद्धा और प्रेम से इतना नहीं भरना चाहिए था।
कोई इतना क्यों करे कि उसके जाने के बाद सबको रोना पड़े !
उसकी अनुपस्थिति में
सबको अपनी दुर्बलताओं से विक्षुब्ध होना पड़े।

विद्रोही नेता था,
शुरू से ही लड़ता आया था।
संघर्षों के बल पर ही वह आगे बढ़ता आया था।
मरने के पहले वह शत्रुओं को चुनौतियाँ देता था,
मरने के बाद उसने अपने मित्रों को ललकारा है :
घड़ी यह परीक्षा की है,
अपनी शक्ति दिखलाओ।
राह यह रुकेगी नहीं,
शक्ति है पैरों में तुम्हारे,
तो रुको मत, आगे जाओ।

शान्ति का देवता था,
संघर्षों का माथा उसके चरणों पर झुक जाता था।
उसकी आवाज में जोर था,
उससे टकरा कर
अनागत के युद्धों का भीषण कोलाहल रुक जाता था।

गांधी की भाषा बोलता था,
बुद्ध का धर्मध्वज फहराता था—
उसके सत्य, प्रेम, करुणा के सामने
घृणा-विद्वेष का बल चुक जाता था।

आदमी बहुत बड़ा था वह,
उसकी प्रशस्ति में शब्द छोटे पड़ रहे हैं।
धरती के हर कोने में, हर नगर में, गाँव में,
सड़क पर, गली में,
हर जगह
उसके अभाव के काँटे प्रति क्षण गड़ रहे हैं।

उसके रथ में अशोक के धर्मचक्र थे,
जिस पर तिरङ्गा ध्वज फहराता था,
जिसमें स्वर्णिम भविष्य के अश्व जुते थे,
जो आगे-आगे सबके लिए रास्ता बनाता था।
जिसका सारथी पीछे छूट गया,
लेकिन जो सदा आगे बढ़ता गया।
कठिन संघर्षों के चक्रव्यूहों के पार जो बार-बार कढ़ता गया।
जिसके कारण भारत के धर्मराज का सदा उन्नत भाल था,
वह और कोई नहीं—इस युग का पार्थ था,
उसी का नाम जवाहरलाल था!

ओ हमारे नेता!
जराजयी,
मृत्यु के विजेता!
तुमने जो किया, उसके चरणों पर हमारी प्रणति अर्पित है!
जो शेष रहा, उसकी पूर्ति में हमारी शक्ति समर्पित है!

जवाहरलाल : दो व्यक्तित्व

—डॉ० रामप्रसाद मिश्र

जवाहरलाल, तुम
अपने में दो व्यक्ति थे।
एक—कोटि-कोटि
प्राणों का प्राण, उच्च
आदर्शों की प्रतिमा,
भारत का ऋतुराज,
पाटल-मानव-साकार,
करता था युग मनुहार,
हुई नहीं कभी हार;।
फूलों की सेज में
शैशव और बाल्यकाल
सुरभिमान होता रहा,
गौरव की गुरुता में
उच्चादर्श-मय यौवन
ऊर्म्मिल हो-होकर वहा,
और जरा ने जग के
अनुपम ऐश्वर्यो में
अपना समय विताया,
गौरव ने स्वयं गाया
तुम्हारी गरिमा का गीत,
सारा जग बना मीत।

दूसरा—जीवन में
व्यक्तिगत संघर्षो
एवं अभावों की
ज्वाला की कृपा से रहित,
अव्यावहारिक उच्च
आदर्शों में भटका
हुआ व्यक्तित्व, जो
यथार्थ से छला गया,
ग्रन्थों में तुमने पढ़ी
भारत की दरिद्रता
और उसे दूर करने
के लिए पाश्चात्य
देशों के अनुकरण—
उपादान मात्र थे
तुम्हारी पहुंच के भीतर;
तुम्हें देख कर आतंकित
हुआ जा सकता था,
प्रेरित नहीं; तुम नैतिक
स्फूर्त्ति नहीं दे पाए
क्योंकि उसे देने का
वातावरण ही तुम्हें
प्राप्त नहीं हो सका;
तुममें विरोधाभास
अपना निलय पा गए,
मन, वाणी एवं कर्म
तुममें भिन्न-भिन्न थे;
उलझे प्रश्न नए-नए;
तुम्हारे अहं की ऊष्मा
में कितने ही श्रेष्ठ
व्यक्तित्व जल गए,
तुम्हारी सनकों से देश
वर्वाद हो गया।

× × ×

लेकिन जवाहरलाल,
जव इस देश का विषम
भूत और विश्रृङ्खल
वर्त्तमान देखता

कोई तटस्थ व्यक्ति,
तब उसे लगता है
विषमतम परिस्थितियों में
तुमने प्रगतिशील चिन्तन
एवं वैज्ञानिक जीवन
संस्थापित करने की
दिशाओं में जो कार्य
किए, प्रजातन्त्र की
दृढ़ता के लिए जो अथक
किए प्रयास, वे
बहुत महान् थे,
भले ही उनके परिणाम
अनुकूल या प्रतिकूल
निकलें; परिणाम नहीं,
चेष्टा मानवता है—
और इस दृष्टि से
तुम बहुत महान् थे,
तुम बहुत महान् थे !

युगमानव जवाहर

—उमाशंकर वर्मा

युगमानव ! तेरे चरणों पर अवनत
उन्नत युग का मस्तक;
है लोट रही सम्पूर्ण जगत की श्री-सुषमा अक्षत, अविरत।
तेरी शुचि छत्रच्छाया में
है खोज रही संत्रस्त मनुजता
मुक्ति-मत्र निज निशि-वासर।
पल-पल इतिहास बनाते हो,
पल-पल नव मार्ग दिखाते हो;
संघर्ष, घृणा, विद्वेष, असूया, मद-मत्सर से ग्रस्त जगत को
नित्य-निरन्तर हो देते विश्रान्ति विमल,
सुख-शान्ति अमल;
निज वचनामृत का पान कराते हो शाश्वत।
भर देती है पग-ध्वनि तेरी
पद-दलित, विमर्दित, उत्पीड़ित, शोषित-कंपित,
निष्प्राण मनुजता में नव गति,
नूतन स्पन्दन।

तुम देते हो नित नई किरण,
विश्वास नवल, प्रत्याश नवल,
जाग्रति का शुभ सन्देश नवल।
अपलक, अविचल,
इस तृषित धरा का कण-कण देख रहा तुमको,
है माँग रही तुमसे मानवता नव संबल।
तुम दयाशील, विभ्राट, मनुजता के गौरव;
तुम क्षमाशील,
विद्या-विवेक, पौरुष, चेतनता के आकर;
तुम पुंजीभूत प्रभा-आभा,
तुम क्रान्ति-शान्ति के दूत प्रबल।
जाज्वल्यमान मानव, तुम पर
संपूर्ण जगत की लगी हुई आँखें संतत।
मोती के लाल जवाहर हो,
गांधी के प्राण जवाहर हो,
भारत के हृदय-विजेता हो,
संपूर्ण जगत के नेता हो,
सान्त्वना शुभेच्छा धैर्य दया कल्याण सुमंगल दाता हो;
दु:खित-पीड़ित, संतप्त-व्यथित, असहाय, उपेक्षित, अपमानित,
शासित, शोषित, अभिशप्त, श्रमित, जर्जरित जनों के उन्नायक,
पोषक, संरक्षक, त्राता हो;
हे युग-प्रतीक, गौरव-गिरि!
तुम मानव के भाग्य-विधाता हो।
हे ज्योति प्रखर, आलोक अमर,
हे दिव्य, जितेन्द्रिय, नर-पुंगव,
हे सेनानी, अग्रणी, अभय,
हे अनुपमेय, हे चिर सुन्दर!
दु:ख-दैन्य, निराशा के दुश्मन;
आतंक-घृणा-भय के दुश्मन;
अन्याय प्रपीडन स्वार्थ अनय सकीर्ण विचारों के दुश्मन;
दुस्तर, अजातरिपु बलशाली, ज्योतिर्मय, करुणामय, ज्ञानी!
विस्मित-सस्मित नभ के तारे
जयगान सदा करते तेरा;

आकाश झुका आता देखो,
छूने को तेरे पूत चरण।
सागर तेरी महिमा गाते,
खगकुल नित सुयश सुनाते हैं;
रवि-चन्द्र सदा करते चर्चा,
तेरी जय-विजय मनाते हैं।
हे महावीर, त्यागी, तापस, अक्लान्त, अलौकिक, अपरिमेय !
तेरी करुणा का अन्त नहीं,
तेरी महिमा का अन्त नहीं,
बल-पौरुष-विक्रम, शौर्य-वीर्य,
माधुर्य-ओज का अन्त नहीं।
तुझ-सा कोई उन्मत्त नहीं,
तुझ-सा कोई अलमस्त नहीं,
तुझ-सा कोई अनुरक्त नहीं,
तुझ-सा कोई चिर-शक्त नहीं;
भू से अंबर तक गूँज रही
तेरी अनुपम सत्कीर्त्ति-कथा।
डर रहो जरा तुझसे प्रतिपल;
दुर्द्धर्ष, ज्वलित, दुर्मद, चिन्मय
नवयौवन चाह रहा तुझसे
लिपटे रहना अविरत, शाश्वत;
पाकर तेरा संस्पर्श हुआ
वह धन्य, चिरन्तन, पूत, प्रखर;
यौवन तेरी छाया में रह
है चाह रहा होना अक्षय।
हे वीर जवाहरलाल नमन,
हे धीर जवाहरलाल नमन,
स्वच्छन्द, तरुण, उन्मुक्त अजय, उत्तुंग जवाहरलाल नमन:
हे महामहिम, शत बार नमन !

चूम लें हम गुलाब का फूल

—श्रीराम शुक्ल

आज फिर आई उसकी याद,
उसी प्रात:स्मरणीय की याद—
बाग से गुजर रहा था मित्र,
कि आई तब गुलाब की गन्ध !

× × ×

भारत है निरभ्र आकाश,
नेहरू थे आश्चर्य—
सामने से लगते थे चाँद
और, उसके पीछे थे सूर्य !
शान्त मुखमण्डल, गोरा वर्ण,
छलकती थी जिस पर मध्याह्न सूर्य की कान्ति !
जवाहर ने देकर निज चमक
तोड़ दी सारी तममय भ्रान्ति,
मचा दी क्रान्ति
विचारों में; अथच कार्यों के सागर में।
दिया जो हमको यह उपदेश, कि—
'है आराम हराम'
वही हर युग में लोगों को
प्रेरणा देगा जीवन की,
प्रगति वह हमको देगा सदा
यही उपदेश सूर्य है मित्र !
कि जो आने न देगा शाम;
बनेंगे हम न कभी निशिचर,
रहेंगे सदा-सदा दिनचर।

× × ×

चूम लें हम गुलाब का फूल :
चूम लें उस महान् का भाल।
चूम लें हम सागर की लहर :

चूम लें उस विशाल के चरण।
चूम लें हम बरखा की बूँद :
दुःखी जन के प्रति उसके अश्रु।
चूम लें हम............

हे भारत के पारथ धनुधर !

—चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमईकाका'

अभयदान जो देय चली अब बिछुरी वहै भुजा है।
भारतमाता को देहरी का दियना आजु बुझा है।।
सूझै पंथु न बाहेर भीतर, चारिउ दिसि अँधियारा।
जइसें कोउ लइगा समेटि कै सब जग कै उजियारा।।
भारत माँ के सीस मुकुट कै बुझी जवाहर-जोती।
अँसुआ बनिकै बिथरि परे मन की माला कै मोती।।
मस्तकु पायेसि परवत राज हिमालय केरि ऊँचाई।
हिन्द महासागर दइ दीन्हेसि हिरदय कै गहिराई।।
तीरथराज पुन्नि दइ दीन्हेसि संगम मेलु सिखायसि।
बट बिरवा तुम्हरी बाँहन कै गहवरि छाँह बढ़ायसि।।
गंगा हिरदय निरमल कीन्हेनि, जमुना रस संचारेनि।
सरसुति मय्या जिभिया ऊपर आपन डेरा डारेनि।।
भरद्वाज की तपोभूमि का बड़ परभाव परा है।
गांधी जी के करम जोग कै थाप्यो परम्परा है।।
संकट परे तुम्हारे मुँह तन मय्या सदा निहारेसि।
तुम्हरै हाथु ढाल बनिकै तब सारी बिपदा वारेसि।।
हे भारत के पारथ धनुधर ! सुनि गांधी कै गीता।
जहाँ उठायो धनुषु न रहिगा कोऊ तहाँ अजीता।।

ओ गुलाबी स्वप्न

— आरसीप्रसाद सिंह

बुझ चुकी चंदन-चिता,
सौभाग्य भस्मीभूत है;
अब लौट आओ ओ गुलाबी स्वप्न मेरे !
शोक-विह्वल देश के लोचन-उदासी, लौट आओ।

मानता हूं, क्षति असीमित है, न जिसकी पूर्ति होगी;
चिर अभावों का जगत् सदियों सिसकता ही रहेगा।
किन्तु, कोई चोट ऐसी है नहीं,
जो एक दिन कुम्हला न जाए।
घाव कोई एक भी ऐसा न,
जिसको काल का मरहम न भर दे।
मानता हूं, यामिनी संघर्ष की बीती न,
प्रहरी एक ऐसी नींद में जा सो गया है,
जागता जिससे न कोई।
प्रश्न प्रस्तुत है विकल दिग्भाल पर,
उत्तर हमारा खो गया है।
सकटों की घन-घटा छाई हुई है,
कूल डूबे हैं क्षितिज की कालिमा में;
और अंतर्धान नौका का कुशल चालक कहीं है।
मिट चुकी, जो कल्पतरु-छाया रही—
शीतल सदा दिग्भ्रांत मरु-पथ के पथिक पर।
और अभिलाषा, क्षुधा, आशा,
पिपासा के कलह-कोलाहलों में
सांत्वना का वह हिमालय दृष्टि से ओझल हुआ है।

मृत्यु वह अप्रिय, अयाचित
काल का वरदान निर्मम है,
विकल जो पूर्ण कर देता जगत्-जीवन-कलश को।
मृत्यु वह निर्मोह शिल्पी है
कि जो हर व्यक्ति की अभिव्यक्ति को

स्थायित्व देता है अगोचर—
तूलिका से आंक अंतिम वार।
ईर्ष्या, द्वेष, स्पर्द्धा, वैर-भावों को
मिटाकर एक उज्ज्वल-वर्णता देती खिला है।
मृत्यु वह अनिवार्य घटना है, युगान्तर के चरण को—
अग्रसर करती सृजन-पथ पर।
जहाँ विश्राम करता क्लांत
स्रष्टा कल्प-कुसुमित कल्पना का।

इस उदासी शून्यता को घेर कर
बेसुध रहोगे मौन कब तक ?
ओ गुलाबी पंखुड़ी के छंद मेरे !
पोंछ डालो अश्रु-कणिका,
वाष्प-व्याकुल कंठ-स्वर दो खोल,
चिर अवरुद्ध गतियों को बढ़ा दो,
बंध-कीलित चक्र को स्वच्छंद कर दो,
और, ध्वज जो राष्ट्र की संवेदना में
शोक-मर्माहत झुका है,
फिर गगन के शिखर पर उसको उठा दो।
क्योंकि उसने जिस युगागम के
लिए जीवन जिया,
श्रम-कष्ट को अम्लान आनन सह लिया,
सर्वस्व-सुख अर्पित किया,
बलि का हलाहल भी पिया,
वह साधना अब तक अधूरी है।
समस्या आज भी सुलझी नहीं है—
चित्र सारे रंग-रेखा-हीन हैं,
प्रतिरूप हैं विकलांग, रस हैं विकृत,
सौरभ के मनोरथ दीन हैं।
अब लौट आओ, ओ गुलाबी स्वप्न मेरे !
व्यर्थ है क्रन्दन, रुदन निष्फल—
जगत् का मेरु-पुंजीभूत—
हाहाकार भी उसको न जीवित कर सकेगा।

अश्रु का निस्सीम पारावार भी उसको न वापिस ला सकेगा।
छिन गया जो लाल भारत का,
निखिल संसार का गौरव-मुकुट-मणि;
ताज से भी मधुर, कोहेनूर से भी क़ीमती,
तलवार से भी प्रखर, पानीदार;
फ़ौलादी कुतुब-मीनार से भी दृढ,
गुलाबी फूल-सा हँसमुख
गया चिरमृत्यु-कज्जल-सिंधु के उस पार,
अंकित है समय की रेख पर पद-चिह्न
पावन अब तुम्हारे मार्ग-दर्शन के लिए।
यह नहीं होगा कि कोई
रिक्तता को भर न देगा—
शून्य का संदर्भ विस्मृत हो रहेगा।
संतरी, नायक, विधायक भी मिलेंगे;
राजनेता, लोकप्रियता-प्राप्त शासक,
नीति-रण-मर्मज्ञ भी होंगे;
नया परिवेश होगा।
हर विधा के वृंत पर अनुभव खिलेंगे।
किंतु, फिर वह एक, केवल एक—
मानव-मुक्ति-दाता,
विश्व-करुणा-प्रेम का मंगल-विधाता,
एकता का अग्रगामी सारथी,
साथी, पथी, निर्भय, नहीं निरुपम मिलेगा।
शेष तारा-लोक, ग्रह-मंडल रहेगा;
किन्तु, राका का विहँसता चन्द्रमा है अस्तमित।

हे देश के लोचन-उदासी, लौट आओ।
बुझ चुकी चंदन-चिता,
,पर, ज्योति अब भी जल रही है चेतना की।
भस्म पार्थिव हो गया,
बिखरा सुनहले खेत मे—
भावी फसल की खाद बनने के लिये।
वह प्राण-धारा जा मिली—
गंगा नदी, गोदावरी से सिंधु तक।

ऊर्जित तरंगें अंतरिक्षों के किनारों को अतिक्रम कर चलीं।
आकाश-नयनों से सजल मोती गिरे।
भू का हृदय कम्पित हुआ।
विद्रोह, जन-उत्क्रान्ति का ज्वालामुखी
चिरशांत, शीतल हो गया।

अब लौट आओ स्वप्न मेरे ओ—
गुलाबी पंखुड़ी में भाव-भीने।
लौट आओ ओ भविष्यत् विश्वकर्मा,
लौट आओ फिर अँधेरी घाटियों में,
ताकि सूर्योदय नया जो स्वर्ण-युग का
हिम-शिखर पर जन्म लेगा,
मुस्करा कर तुम सजग स्वागत करो।
जीवन विरासत में तुम्हें जो है मिला,
स्वीकार तुम उसको करो;
नवराष्ट्र-निर्माता दिवंगत हो गया—
अक्षय धरोहर सौंपकर विकसित कमल के
रूप, रस, आनन्द मधु की;
तुम उसे सम्पूर्ण साहस, शक्ति से भोगो उसे।
उन्मुक्ति के आकाश में विचरण करो।
दायित्व हँस अपना सँभालो।
और, युग-निर्माण का भुजदंड फ़ौलादी उठाओ

लौट आओ, ओ गुलाबी स्वप्न मेरे।
बुझ गई चन्दन-चिता निर्धूम ज्वाला हो गई,
पर ज्योति अब भी जल रही है प्रेरणा की।
उस अमर मृत्युंजयी पावन शिखा से
दीप आत्मा का जला दो।
आप अपनी ज्योति बन जाओ अकंपित—
ओ गुलाबी स्वप्न मेरे!

तुझ-सा इन्सान कहाँ से लायें ?

—फ़ैस बनारसी

तू गया है वहीं, बापू जहाँ ऐ नेहरू,
धूम आने की मची होगी वहाँ ऐ नेहरू।
अब तो भारत में वो बापू भी नहीं तू भी नहीं,
पेशवा कौम का पायेंगे कहाँ ऐ नेहरू ?

तू रहा फख्र वतन, शाने वतन, जाने वतन,
तुझसे वाबिस्ता रहे दिल में यह अरमाने वतन।
कौन अब रूह यहाँ फूंकेगा बेदारी का,
ज़िन्दगी पायेंगे किससे ये जवानाने वतन ?

अब बता जाने वतन जान कहाँ से लायें,
ढूंढ कर तुझ-सा हम इन्सान कहाँ से लायें ?
आंच तक आने न दी देश की खुद्दारी पर,
ऐसा मुखलस वो निगहबान कहां से लायें ?

बाद मरने के तेरी जीस्त का यह भेद खुला,
तू फरिश्ता था जो इन्सान के कालिब में रहा।
तेरे सीने में मुहब्बत की किरन पलती थी,
जिसने हर मौके पे बख्शी है जमाने को जिया॥

अहदे माजी के फिसाने को जो दुहराते हैं,
तेरी हर बात में बापू की झलक पाते हैं।
तू नहीं है मगर ऐ रूठ के जाने वाले,
कारनामे तेरे हर सिम्त नजर आते हैं॥

क्यूं न फिर जाए निगाहों में यह सूरत तेरी,
सबको बेचैन किये बैठी है फुर्कत तेरी।
तू हमेशा से रहा अम्नो अमाँ का हामी,
थी जमाने को अभी और जरूरत तेरी॥

कोई मजबूर व कमजोर जो घबरायेगा,
याद करके तुझे वो दिल में सकूं पायेगा।
शान्ति और अहिंसा की अमानत लेकर,
तू भी इतिहास के सफहों पे नज़र आयेगा॥

जो मुखालिफ थे उन्हें अपना बनाया तूने,
रंग था गैरियत का जिसको मिटाया तूने।
अपने जीने का तमाशा तो दिखाया हँस कर,
अपने मरने का तमाशा भी दिखाया तूने ॥

तेरे ही नाम पै रोती है हर दिल की खुशी,
आज गैरों के यहाँ भी सफे मातम है बिछी।
तेरे मातम में फलक ने भी बहाये आँसू,
जलजला आया जमीं हिल उठी वो ठेस लगी ॥

आज खुद मौत भी रोती है वेसालत पै तेरी,
रश्क आता है फरिश्ते को भी अजमत पै तेरी।
मर्दे मैदाने अमल था तू सियसत के लिए,
सारी दुनिया थी फिदा दल से सियासत पे तेरी॥

कोई इन्सान कोई मर्दे वफा कहता है,
कोई मुहसिन, कोई इससे भी सिवा कहता है।
कुछ खबर है तुझे ऐ छोड़ के जाने वाले,
तेरे पीछे यह ज़माना तुझे क्या कहता है !!

हर घर में मर गया है कोई

—नजीर बनारसी

शांति से दिल के आजादी-रहबरे इन्क्लाब डूब गया,
क्यों न दुनियाँ में आज अंधेरा हो, अम्न आफ़ताब डूब गया।
सबकी आँखों से अश्क जारी है, इस तरह से गुजर गया है कोई,
ऐसा महसूस हो रहा है आज, जैसे हर घर में मर गया है कोई।
याद आता है जश्ने आजादी, देखकर भीड़ सोगवारों की,
वह हर एक सिम्त जिंदगी का शोर, और यह खामोशी मजारों की।
होश गुम, लब खामोश, आँख नम, सब हैं गमगीन गम के मेले में,
सोगवारों की भीड़ क्या कहिये, ज़िन्दगी पड़ गई है रेले में।

सरनगूं है जहान का परचम, केश बिखरे हैं देश माता के,
है समाधि पे युग का निर्माता, चढ़ते जाते है फूल श्रद्धा के।
आके आँसू बहा रही है घटा, सोग में आसमां सिसकता है,
जलजला है कि लाल के गम में, धरती माता का दिल धड़कता है।
काफले जानदार गुंचों के, इस तरह उस तरफ भटकते हैं,
कितनी मासुमियत को चोट लगी, कितनी कलियों के दिल धड़कते हैं।
अब जो मेले लगेंगे बच्चों के, कह के चाचा किसे पुकारेंगे,
कौन अब देगा दादे मासूमी, रो पड़ेगा जिसे पुकारेंगे।
आज हर मुल्क में है आपका गम, खत पे खत आ रहे हैं आपके नाम,
मौत काम अपना कर चुकी है मगर, जिन्दगी कर रही है झुक के सलाम।
सिर्फ आब-व-हवा बदलने को, जिन्दगी का समां बदल डाला,
इसकी खातिर मकाँ बदलना था, आपने तो जहाँ बदल डाला।
जलजले से भी आँख खुल न सकी, उठ के तूफान भी उठा न सका,
देश के गम मे जागने वाला, ऐसा सोया कोई जगा न सका।
कुछ दिनों से अजीब आलम था, आप रसमन भी मुस्कुराते थे,
दूसरों की हँसी न जख्मी हो, इसलिए अपना गम छिपाते थे।
आपके एक गुलाब की टहनी, कितने जख्मों को थी छिपाये हुए,
हर हंसी चूर चूर थी गम से, हर तबस्सुम था चोट खाये हुए।
सुन न सकते थे जुल्म की आवाज, ऐसा दिल, ऐसा दर्द रखते थे,
एक तुम ही थे जो अपने सीने मे, सारी दुनिया का दर्द रखते थे।
दिल मे जो थी वही जबान पे भी, जैसा बातिन था वैसा जाहिर भी,
बाद मरने के भी तुम ही तुम हो, देश के लाल भी जवाहिर भी।
कौन-सा मुल्क गम से खाली है, मरने वाले का हर जगह गम है,
वह बारमन उठा है दुनियां से, जिसका पूरे आब मे मातम है।

हम तुम्हें मन से कहीं जानें न देंगे

—कँवल नयन

ओ मेरे युग के अनीश्वर !
तुम को नमन, शत-शत नमन;
युग-ज्ञान लुप्त था;
तुमने नई लकीरें बनाकर—
हमें हमारेपन का जो महत्त्व अहसास दिया—
उसके लिए कृतज्ञ है हम सब तुम्हारे।
सच है : हमारे भटकाव को तुमने दी नई ठौर,
हमारी आस को तुमने दी नई बौर।
गुलाबी गुलाबों के देश के राजकुमार !
तुमने हमारी जंग लगी आत्मा के ठीकरों में—
त्याग का स्नेह सींचा, लग्न की बाती लगाई,
साहस से जलना सिखाया !
हमारी बुदबुदाई आँखों में—
अंजन आँका नए भाव-बोध का,
हमारी छुई-मुई पाँखों में—
बल सँजोया नए युग शोध का !

अब हम पुराने परिवेश को चीरकर—
दूर के क्षितिज भी देख पाएँगे,
अब हमारी उड़ान के लिए
अहंम् का यह छोटा गगन ही काफ़ी नहीं है।
तुमने एक नई शक्ति तराशी है हमारी तूलिका में !
तुम अगुरी थामकर
मानवता की जिन नई सीमाओं में गए हो छोड़
वह बंजर है तो क्या—
हम उत्तराधिकारी तुम्हारे
उन्हीं परती पड़े खेतो में बोयेंगे तुम्हारे स्वप्न !
ओ विगत के गीत, आत्मा के मीत !
तुम कहीं भी जाओ—
हम तुम्हें मन से कही जाने न देंगे ! ....

युग-शंकर

—अमरबहादुर सिंह 'अमरेश'

मैं समझ नहीं पाता था जब बीसवीं-शती,
एटमबम की पायल पहने,
बारूदी-साड़ी में लिपटी
हाथों में राकेट लिये हुए—
अंगार उगलने लगती थी !
तब कौन अकेला जादूगर—
ये जलते अंगारे पीकर—
केवल इतना कह देता था—

विज्ञान चरम सीमा पर है तो कैसी शंका, कैसा भय,
मानवते ! तुम निर्भीक रहो, इंसान अभी भी बाकी है !
बाकी है गंगा में पानी, बाकी है गांधी की वाणी—
हिमगिरि की शीतल-छाती में तूफान अभी भी बाकी है !

तब रुक जाता था जग का स्वर,
हो जाते युग के बोल बंद !
विध्वंसकारिणी घड़ियाँ भी,
मुसका देती थी मद-मंद !
ये 'पंचशील' के पंच तत्व—
वह ज्योति-पुंज निर्मित करते—

जिनके आगे साम्राज्यवाद की लिप्सा घुटने चुकी टेक !
गंगा से मिली वोलगा औ 'यूराल'-हिमालय हुए एक !
हँस पड़ी 'ह्वांगहो' की लहरें औ 'मिसीसिपी' भी मुसकाई।
जब नील-नदी आगे बढ़ कर इंगलिश चैनल से टकराई !

बादुंग तुम्हारी जय होवे—
तुमने उस युग को जन्म दिया—
जिस युग में दिल्ली, पीकिंग औ—
मास्को, काहिरा या लंदन
लेबनान और बर्लिन, दमिश्क
सीलोन, सीरिया, हांग कांग
सब की अपनी-अपनी उलझन

बन गई समय का समाधान !
कल जहाँ गिरा था एटम बम—
मैं देख रहा हूं आज उन्हीं—
नागासाकी औ हिरोशिमा
के मुर्दों में आ गई जान !
तुम कहते नेहरू युग दृष्टा,
जग कहता नेहरू युग स्रष्टा,
मैं कहता नेहरू मानव थे,
ऐसे मानव—
जिनकी गरिमा हिमगिरि की ऊँची चोटी थी !
थे एक हाथ में कल-पुर्जे, दूसरे हाथ में रोटी थी।
जिनकी छाती में विश्व प्रेम की गंगा-यमुना का संगम !
जिनके अंतस् से महाशांति की महानदी का था उद्गम
बारूद और नेहरू दोनों—
इस युग के थे दो महातत्त्व !
विज्ञान जगत की देन अगर—
बारूदी-विष प्रलयंकर थे !
तो मानवता की महाशक्ति—
नेहरू इस युग के शंकर थे !

रोशनी की मीनार

—चन्द्रसेन 'विराट'

वह सारे देश भर से फूटी पड़ी रुलाई,
वह लालकिला तड़पा, जमुना से चीख आई।
खेतों ने भरा बाहों, संगम ने लिया गोदी,
वह चल दिया जवाहर, वह हो गई विदाई !
वह आँसुओं की गंगा पग को पखारती है,
सुन लाडले जवाहर ! माता पुकारती है !।

थमती नहीं रुलाई दिल्ली की हर गली को,
अँधियार से भरी है तकदीर आदमी की।
निस्तब्ध है शताब्दि, है शोकमग्न दुनिया,
हा हंत, ढह गई है मीनार रोशनी की!
वह शान्ति का मसीहा अब मौन हो गया है
इन्सानियत का जैसे शृंगार खो गया है!!

जब हँस दिया तो एटम बनकर गुलाब आया,
उसने किया इशारा तो इन्कलाब आया।
वह चिर युवक जवाहर थकना न जिसने जाना,
ज्यों-ज्यों उमर बढ़ी थी उस पर शबाब आया॥
हमको जगा दिया है पर आप सो गया है,
जो वर्तमान था वह इतिहास हो गया है!!

बिन युद्ध के जगत् का अभिप्राय था जवाहर!
भारत के नाम का ही पर्याय था जवाहर!
भारत में वह बसा था, उसमें बसा था भारत!
वह व्यक्ति कब रहा था, समुदाय था जवाहर!
इतिहास की इबारत ही बन गया जवाहर!
खुद एकमेव भारत ही बन गया जवाहर!

चिंता में देश की ही जिसको न नींद आई,
सपनों को सच बनाने में ही उमर बिताई।
वह रुक गया जहाँ पर हम चल पड़े वहाँ से,
आँसू भरे नयन से हमने शपथ उठाई॥
हम अपना खून छिड़कें, मिट्टी गुलाल कर दें,
जो दीप उसने बाला उसको मशाल कर दें!!

कहाँ हा ! अस्त हो गया !

—उमादत्त सारस्वत

(१)

जन्म भर 'योग' जो छिपाये 'भोग' ही में रहा,
'जनक' समान ही जो श्रेष्ठ सन्त हो गया।
छूट गया हम से सदैव के लिये ही वह,
कैसा ये अनभ्र वज्रपात, हन्त हो गया।
देश-प्रेम ही की जहाँ पूजा चढ़ती थी सदा,
ऐसे 'पुण्य थल' का हा ! जो महन्त हो गया।
जिसकी रगों में थी स्वतंत्रता समाई हुई,
हाय ! हाय ! ! आज उसका ही अन्त हो गया।

(२)

जन्म-भूमि जननी का परम उपासक जो,
परतंत्रता की क्रूर कालिमा जो धो गया।
दे गया अलौकिक प्रकाश मनु-वंशजों को,
विश्व-वन्धुता का अनुपम बीज बो गया।
जिससे सहारा मिलता था हा ! निराश्रितों को,
हाय ! आज वह दीप्तिमान रत्न खो गया।
सुप्त प्राणियों को जो जगाता रहा जीवन में,
वह ही जवाहर सदा के लिये सो गया।

(३)

जिसके भरी थी रोम-रोम में सहन-शक्ति,
बार-बार वैरियों को करता क्षमा गया।
राजनीति-योग्यता की, पंचशील-योजना की,
धाक सारे विश्व भर पर जो जमा गया।
सहज उदारता से, प्रतिभा, मनोज्ञता से,
अमर-अखंड कीर्ति जो है यों कमा गया।
लाल 'मोतीलाल' का विशाल-ढाल तुल्य वही,
काल के महा कराल गाल में समा गया।

(४)

मानव का प्रेमी था पुजारी दीन अन्त्यजों का,
पी के विश्व-प्रेम की सुरा जो मस्त हो गया।
जिसके कठोर एक चरण-प्रहार ही से,
शोषण, प्रपीड़न का दुर्ग ध्वस्त हो गया।
इतना लुटाया स्नेह जिसने महीतल पै,
देख जिसे दुष्ट वैरि-वृन्द पस्त हो गया।
करता प्रकाश रहा दिनकर तुल्य ही जो,
वह ही 'जवाहर' कहाँ हा ! अस्त हो गया।

पृथिवी पुत्र नेहरू के प्रति

—डॉ० मुंशीराम शर्मा

आये थे तपस्वी तुम तप-फल भोगने या
मोतीलाल नेहरू को पुत्रवान करने।
विदलित पीड़ित निराश्रित जनों में ओज
तेज-दर्प मान जैसे भव्य भाव भरने।
पारतंत्र्य-पाश काट, भारत वसुन्धरा के,
दैन्य-दुःख-क्लेश-कष्ट-शोक जाल हरने।
पृथिवी के पुत्र तुम नर-शिरमौर रहे,
आये कर्मजन्य यश-वन में विचरने।
वसुधा कुटुम्ब है उदार चरितों के लिये,
तुम-सा उदार कौन विश्व-परिवार में ?
तव तेज-सम्मुख विपक्ष हतप्रभ हुआ,
अतुल कुशलता थी नीति-व्यवहार में !
प्रजातन्त्र-सहित समाजवाद स्वीकृत हो,
मंगल-प्रमोद जन-जन-सहकार में।
ध्वंस रूढ़ियाँ हों, हो नवीन रक्त नाड़ियों में,
भाव में नवीनता, नवीनता विचार में।

गांधी-दिव्य-कक्षा को सजाते रहे रात-दिन,
पूत पितृ-कक्षा को सजाया तात तुमने !
ऊर्ध्व-लोक-गामी थे तिलक-से मनीषी विप्र,
मध्यमा प्रतिपदा को किया ख्यात तुमने।
जड़ जो जमाई थी सुभाष ने समुद्र पार,
उसे किया पादप में प्रतिभास तुमने।
कुण्ठाएँ रहीं जो अभिमान-जन्य मानस में
छिप न सकी थीं किया परिज्ञात तुमने।

सीमा का उल्लंघन स्वतन्त्रता के नाम पर,
चरित की भ्रष्टता के सिक्के हैं ढले गये।
पास ही प्रयाग के प्रबल दस्यु-दल छाया,
कोपाक्रांत कोमल कृशांग मसले गये।
अक्षम मनुष्य का न देख सके वन्य रूप,
इसी हेतु छोड़ हम सबको चले गये!

आँखें भर भर आईं

—मेघराज 'मुकुल'

गीत और विज्ञान रो पड़े, धर्म न धीरज धारे,
लोकतंत्र का हृदय भर उठा, युग के संबल हारे।
युवक रो पड़े, लगा जवाहर का गुलाब है रोया,
बच्चे बिलखे, लगा कलि का भविष्य भी रोया।

कोटि-कोटि नर-नारी रोये, हिमगिरि का मन रोया,
बूढ़े हिन्द महासागर का धीरज दिखता खोया।
जन-मन का आधार हिल गया, आशायें मुरझाईं,
आज क्रांति आघात सह गयी, आँखें भर-भर आईं।

राष्ट्र-चेतना का अधिनायक, सचमुच ही क्या खोया,
यह विश्वास नहीं होता पर, मन बरबस क्यों रोया?

विश्व-शान्ति के हे युग-प्रहरो, युग-श्रम के अधिकारी,
जन-जन की अन्तर्वाणी में, आज व्यथा है भारी।

हाथ जोड़कर तीर्थ कह रहे, पावन हमें बनाओ,
खेतों की मिट्टी कहती है, हममें तुम मिल जाओ।

खून-पसीना बहा-बहा अब, आत्मा रहे तुम्हारी,
मिटा न पाई मौत आज वह खुद मर गई बिचारी।

लोक-चेतना का गुलाब तो सदा रहेगा ताजा,
क्योंकि तुम्हारी ही सुगन्ध ने, जन-आत्मा को साजा।

रो मत ओ गुलाब ! यह पूरा राष्ट्र तुम्हें समझाता,
गया जवाहर; किन्तु उसी का युग आगे है आता।
गया जवाहर; किन्तु उसी का हमको मिला उजाला,
राष्ट्र-चेतना युग स्रष्टा को पहिनाती जय-माला।

आज वन्दना हाथ जोड़कर उसका नाम उचारे,
श्रद्धा और अर्चना उसके दोनों चरण पखारे।

और प्रार्थना माँग रही है अपना भाग्य-विधाता,
रो-रोकर अधीर मत हो, ऐ मेरी भारत-माता !

रो मत माँ, यह समय नहीं रोने का आज तुम्हारा,
सच है आज खो दिया तुमने वीर जवाहर प्यारा।

केवल तूने नहीं, विश्व ने वीर जवाहर खोया,
आज खून के आँसू लेकर, युग-जीवन है रोया।

सच है उसके जैसा फिर हम देख नहीं पायेंगे,
लेकिन उसके स्वप्न सफल हों, धरती छू जायेंगे।

तेरी कोख उजली है माता, तू क्यों अश्रु बहाए,
आज सभी राष्ट्रों ने तेरे आगे शीश झुकाए।

मान गए तुम जैसी माता और नहीं है कोई,
यह भी सच है वीर जवाहर-सा अब यहाँ न कोई।

लेकिन सच है यह भी, यह आलोक न बुझ पायेगा,
एक जवाहर गया, जवाहर लेकिन फिर आएगा।

मरता कोई नहीं, मरण का होता एक बहाना,
जीवन नया शुरू होता है, तजकर वेष पुराना।
बीहड़ पथ है फिर भी हमको, आगे है बढ़ जाना,
एक ज्योति में कई ज्योतियाँ मिलतीं, यही दिखाना।
कौन कह रहा युग समाप्त हो गया, देश है खाली,
जो भी यह कहता वह देता लोकतन्त्र को गाली।
लोकतन्त्र का पथ प्रशस्त करके जो भी है जाता,
उसके पीछे नव-प्रभात का नया-उजाला आता।
जन-जन के दुख-सुख को जिसने अपना दुख-सुख माना,
जीवन के गहरे घावों ने उसको ही पहिचाना।
जन-आत्मा का दीपक लेकर जो प्रकाश फैलाता,
वह इतिहासों की वाणी का महाकाव्य बन जाता।
कहो न हम हैं आये यहाँ, अस्थि अवशेष बहाने,
भस्मी कलश देखकर उस पर श्रद्धा फूल चढ़ाने।
यह तो है पार्थिव शरीर को अन्तिम करुण विदाई,
किन्तु जवाहर की हस्ती पर कभी न बदली छाई।
जिसने हमको शान्ति-प्रगति के पथ पर सदा बढ़ाया,
जिसके जीवन को हमने नस-नस में ढलता पाया।
वह शरीर से अलग हो गया, किन्तु है मन में छाया,
साँस-साँस में उस विभूति का है व्यक्तित्व समाया॥

तुम चले गए

—सुशील कपूर

तुम चले गए सहसा गुलाब सी मधुमयता आह्लाद लिए।
अब युगों युगों तक महकेगा इतिहास तुम्हारी याद लिए॥
नैराश्य निमिर में तुम आए स्वर्गीय प्रभात आज्ञा लेकर।
हत तेज, मूक पददलित प्राणियों के मन की भाषा लेकर॥
जीवन के शाश्वत मूल्यों की अभिनव परिभाषा को लेकर

स्वातंत्र्य प्रेम, स्वातंत्र्य प्रेमा लक्ष्य, स्वातंत्र्य समर का नाद लिए !!
तुम चले गये सहसा गुलाब सी मधुमयता आह्लाद लिए !!

नित शांति प्रसूनों से तुमने मानवता का शृंगार किया।
था श्रांत क्लांत भारत, तुमने नवजीवन का संचार किया॥
कण कण ने प्यार किया तुम से, कण कण से तुमने प्यार किया।
मन में वाणी में कर्मों में शत शत मानवतावाद लिए !!
तुम चले गए सहसा गुलाब-सी मधुमयता आह्लाद लिए !!

पा विजय मृत्यु पर, जीवन की भौतिक सीमाएँ तोड़ चले।
तुम अमर पुरुष यों अमरलोक से अपना नाता जोड़ चले॥
तुम तेज पुंज मध्याह्न सूर्य की किरणों से कर छोड़ चले।
चालीस कोटि रह गए यहाँ उर में व्याकुल अवसाद लिए !!
तुम चले गए सहसा गुलाब-सी मधुमयता आह्लाद लिए !!

भारतवर्ष की तस्वीर

—उदयभानु 'हंस'

जिन्दगी भर देश का यह घाव सिल सकता नहीं,
मन का मुरझाया हुआ अब फूल खिल सकता नहीं।
ठीक है, मिल जायेंगे नेता भी हमको सैंकड़ों,
किन्तु भारतवर्ष को नेहरू तो मिल सकता नहीं॥

शत्रुता की अग्नि में वह मित्रता का नीर था,
जो दिलों को बाँध दे, वह प्यार की जंजीर था।
देश के स्वाधीनता-संग्राम का भी वीर था,
एक नेहरू अखिल भारतवर्ष की तसवीर था॥

वह विरोधी भावना को जीतता था प्यार से,
पर कभी डरता नहीं था तोप से तलवार से।
ओस-सा शीतल सुकोमल पुष्प का शृंगार था,
किन्तु अवसर पर वही जलता हुआ अंगार था॥

विश्व के दोनों गुटों की डोर उसके हाथ थी,
वह अकेला था कहाँ, दुनिया उसी के साथ थी।
युद्ध के इस दौर में वह अमन की आवाज था,
सिर्फ हमको ही नहीं, उस पर सभी को नाज था ।।

वह लगा था रात दिन नवराष्ट्र के निर्माण में,
देश-सेवा का नशा था व्याप्त उसके प्राण में ।
साम्प्रदायिक-द्वेष का सारा हलाहल पी गया,
और शंकर के सदृश वह अमर जीवन जी गया ।।

आज भारत ही नहीं संसार सारा रो रहा,
झड़ गया इक फूल पर उद्यान सूना हो रहा ।
किन्तु दिव्य सुगंध उसकी नष्ट हो सकती नहीं,
शब्द के ही साथ उसकी गूँज खो सकती नहीं ।।

बुझ गया दीपक मगर आलोक अब भी शेष है,
मर गया नेहरू मगर उसका अमर सन्देश है ।
है उसी की सीख, संकट में न आहें भरें,
जिस तरह हो आज उसके स्वप्न को पूरा करें ।।

शांति का प्यारा कबूतर उड़ गया

—देवप्रकाश गुप्त

बन्धु मेरे !
मुड़ गया इतिहास का पन्ना अचानक
मुड़ गया वह शान्ति का जयदोल
जो आसेतु हिमगिरि तक लगा था
मुड़ गया वह आदमी जो
घाव पर मरहम लगाता था
मुड़ गया वह पंथ जो गंतव्य को नजदीक लाता था
मुड़ गई वह दृष्टि
जिसमें दूरदर्शी चेतनायें जगमगाती थीं

मुड़ गई वह सृष्टि जिसकी—
हर लहर खुशियाँ मनाती थी
मुड़ गया वह भीष्म
जिसके एक इंगित पर झुका इतिहास कल का
फूट निकली मेदिनी से गंग धारा
आज लगता है दिवा का शेष पल
अब रात से फिर जुड़ गया है।
शांति का प्यारा कबूतर उड़ गया है
आज लगता है किसी का पंथ औचक मुड़ गया है।
लहलहाती आग की लपटें जला डाली
विचारों के शिखर को,
कि जिसकी उच्चता से हर समय भूगोल दिपता था,
कि जिसकी प्रेरणावन्ती कथा मधुमास लिखता था।
"आदमी से है नही बड़ा"—उसने कहा था।
जिगर में जिसने बहुत चुप-चुप सहा था,
किन्तु अब विश्वास धूमिल हो रहा है
पथ का आलोक भिलमिल हो रहा है
आंधियों डूबे नगर में क्या पता अब कौन आए
और आकर क्या सुनाए
राष्ट्र की बोझिल घड़ी में
फूल को जो फूल समझे
राह के कांटे हटाए।
पोंछ दे इतिहास के आँसू, उसे पावन बनाये
आदमी सो जाय यदि तो भैरवी बन कर जगाये।
बन्धु मेरे! मुड़ गया इतिहास का पन्ना अचानक
कांपती हैं अब धरा की चेतनायें
हम चिता की धूल को फिर सिर नवाये
सत्य है यह, आदमी का दर्प जीता है
उसे कब तक जिलाए—
कौन है अब जो कि आ कर फूल बंजर में खिलाए?

ओ क्रूर काल के कुठार

—मधुर शास्त्री

ओ क्रूर काल के कुठार,
असमय जीवन लिया छीन।
किया अभागे यश मलीन।
तेरा तो दुर्दैव दीन।
अपने हाथों किया मूर्ख।
अपने पावों पर प्रहार!
ओ क्रूर काल के कुठार!

जिसने तुझको दिए प्राण।
प्रलय-विलय से किया त्राण।
प्रेम कवच पर युद्ध-बाण-
रोके जिसने, उसको भी।
तू न सका अपलक निहार!
ओ क्रूर काल के कुठार!

तू हारा वह गया जीत।
तू हिंसा वह अमर प्रीत।
वर्तमान वह, तू अतीत।
टूट गए सब यत्न-तन्तु।
धिक् मृत्यु भी सकी न मार!
ओ क्रूर काल के कुठार!

गया देवता तज देवालय

—ज्ञानवती सक्सेना

थर थर धरती लगी काँपने,
काल लगा किस ओर झाँकने?

[गा]ंधी ने जो दीप जलाया आँधी ने रख दिया बुझा कर।
शान्ति दूत! जिसको कहते थे, चला गया वह लाल जवाहर॥

छूट गया धरती का धीरज, लगीं सिसकनें, जमना गंगा।
हाथ शिथिल हो गए देख के, यह सुनकर झुक गया तिरंगा।

गया देवता तज देवालय, बिखर गया इसलिए शिवालय !
उस दिन चौराहे पर रोईं गीता और कुरान बराबर !!

विस्तृत था व्यक्तित्व कि जिसमें, सब धर्मो का सार निहित था।
सबका परम हितैषी जग में, एक जवाहर लाल विदित था।

अल्प संख्यकों का भ्राता था बच्चे बच्चे से नाता था !
भारत माँ, बूढ़े हिमगिरि का उस दिन श्रवण कुमार गया मर!!

वाणी में ऐसा अमृत था, प्यासे को जीवन मिलता था।
जिधर दृष्टि पड़ गई उधर ही, मुरझाया उपवन खिलता था।

प्रतिभा जिसका करती स्वागत, कहें विदेशी यह है भारत !
जिसने जन जन के अन्तर में बना लिया था ममता का घर!!

जब तक जीवित रहा जगत में, थक कर पूरी नींद न सोया।
मृत्यु-वरण के बाद चिता की, भस्मी बन खेतों में बोया।

मिट्टी पर मिट्टी छायी है, हरियाली दृग भर लायी है !
धरती माँ जाने कब हरषे ऐसा मोती सुत उपजा कर !!

एक लाल गुलाब

—आशारानी व्होरा

एक लाल गुलाब
एक श्वेत कबूतर
गुस्से का एक उबाल
हँसी की एक गूँज

—यह मिला-जुला प्रभाव
एक बेशकीमती सूझाव
चुक गया !

एक शैशव किलोल
एक बचपन सारल्य
एक किशोर-सा जोश
यौवन की एक मौज

एक प्रौढ़ दिमाग
एक छत्र-सा हाथ
उठ गया !

विश्व के झरोखे से
झांकता एक चाँद
जन-मन के कोने में
जलता एक चिराग

चाँद का प्रकाश
दीपक का-राग
बुझ गया !

शांति घाट

—मनोहर शर्मा 'रिपु'

यह हरी भरी है वनस्थली, मानव सोचा इसमें विराट,
यह नहीं समाधि मात्र एक, यह महातीर्थ है शान्तिघाट !
बापू के पास पड़ा सोता है, शान्ति-अमन का अग्रदूत,
प्रगति-विकास का सूत्रधार, भारत माता का अमर-पूत।
जिसकी छाती में क्रांति पली, जिसके मस्तक में शांति पली,
जिसकी साँसों से स्वतन्त्रता की दीपशिखा की ज्योति जली।।
अवशेष यहाँ पर उसके हैं, जोह रहे क्रांति की दिव्य-बाट !
यह महातीर्थ है शांति घाट !

जिसने श्रम को सम्मान दिया, जिसने मानव का मान किया,
उसको समान दर्जा देकर, कल्याण दिया, अभिमान दिया।

जिसने कृषकों मे उगवाया सोना खेतों खलिहानों में,
जिसने चिमनी को चमवाया था इस्पाती मैदानों में ।।
जिसने प.नी का वेग रोक, था पत्थर तक को दिया काट;
अम्बर तक बाँधे थे वितान, वातायन में कर दी प्रभात ।
जिसने मानव की मुक्ति-हेतु, निज सुख-सुविधा का किया त्याग,
चिन्तन करते, लिखते-पढते ही, कटी सदा हर एक रात ।।
विषपायी बन निज, होठों से, युग का सारा विष लिया चाट!
यह उसी व्रती का शांति घाट !

जिसकी इच्छा थी मर कर भी खो जाऊँ मैं मैदानों, में,
साँसों के आर-पार जा कर भी बँट जाऊँ मुस्कानों में ।
जिसका सुप्राण समाया था, गगा यमुना औ संगम में,
सृष्टि को नाप-तोल देती थी, दृष्टि एक विहगंम मे ।।
था धर्म नही जिसका केवल, मन्दिर-गिरजे-गुरुद्वारों में,
दर्शन स.रा था मूर्त हुआ, दुखियों की आर्त-पुकारों में ।
जो मुस्काता तो फूलो की कोटिश पाँखुरियाँ झरती थी,
परिमल झरता था होंटों से, स्वर की बांसुरियाँ बजती थी ।।
जो प्रौढो मे था प्रौढ, जवानों में जवान बन जाता था,
बच्चों मे बच्चा बनकर के, दुर्लभ छवियाँ दिखलाता था ।
वह बहुरगी प्रतिभावाला, राजा था चाँद सितारों का,
वह अमराई का गौरव था, ऋतुराज अनन्त बहारो का,
यह है उसकी विश्रामस्थली, है ताजमहल सा नही ह.ट !
यह मह तीर्थ है श.ातिघ ट !

है यहाँ पड़ा वह जो स्वेच्छा से भूखों का सरताज बना,
ठुकरा कर महल दुमहलों को, उनका स्नेह मुहताज बना ।
जिसने पोछे उनके आँसू, समझी उनकी अव्यक्त पीर,
जिनका थोडा-सा दुखडा भी कर देता था उसको अधीर ।।
है चला गया वह आज मगर इन सब के मन मे अंकित है-
दृग दर्पण मे कोटिश रूपी उसका व्यक्ति प्रतिबिम्बित है ।
जो सत्य-शिवं औ सुन्दर का, था एक अनूठा सम्मिश्रण,
लव में विराट के होने का, आभास दिलाता था प्रतिक्षण ।।

तुमने मर्यादा ही नवीन शासित को, सत्ताधारी को।
अपने श्रमजल से सींच गए सूखों की सूखी क्यारी को।
सहमे से मानस को असीम निर्भयता का वरदान दिया,
हे महाप्राण ! पददलितों को फिर मानव का सम्मान दिया।
पूरब पश्चिम का मिटा भेद, तुम सद्भावों के सेतु बने।
अणुबम से आहत धरती पर, शीतल संस्कृति के केतु बने ! !

तुम व्यक्ति नहीं थे, स्वयं राष्ट्र औ नए विश्व के निर्माता,
मानवता के गौरव अशेष युग की गीता के उद्गाता।
दिग्भ्रम की वेला में तुमने यम का भावन निर्देश दिया,
कटुता का पीकर कालकूट शिव-सुन्दर का सन्देश दिया।
हे तात ! तुम्हारी चिता धूलि, नवजीवन ज्योति जगाएगी।
मिट्टी की होगी माँग भरी, फिर नई फसल लहराएगी ।।

बदल गये इतिहास

—डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

नेहरू ! तुम नर को वाणी दे बदल गए इतिहास।

हर अवरुद्ध कण्ठ को खोला तुमने बन जागरण-प्रभाती।
अश्रु-स्नात आँखों में भर दी ज्योति, नया जीवन छलकाती ।।

पंख-कटे पंछी को तुमने दिया नया आकाश।
नेहरू ! तुम नर को वाणी दे बदल गए इतिहास ।।

पंचशील के पूत मंत्र से रहे युद्ध की आग बुझाते।
बम के विस्फोटों में घुसकर बाहर खींच ज़िन्दगी लाते ।।

मरती मानवता को तुमने दिया नया विश्वास ।।
नेहरू ! तुम नर को वाणी दे बदल गए इतिहास ।।

तुम भय-कम्पित हृदयों का बल डगमग चरणों का सम्बल थे।
लुटे अधर की मुस्कानें तुम माँ की लज्जा का अंचल थे ।।

पहरेदार शान्ति के ! तुम से रक्षित हर आवास।
नेहरू ! तुम नर को वाणी दे बदल गए इतिहास ।।

वसीयत

—घनश्याम रंजन

मैं धरती का जर्रा—
सूरज की धूप
चंदा की किरनों में नहाया,
गंगा और कावेरी के पानी में भीगा।
मेरी धमनियों में
इन सबकी सुगन्ध है
भारत की गंध है !
यह मेरा देश—
चाहता हूँ,
तन की माटी का कण-कण
फिर धरती की माटी में मिल जाए
घुल जाए !
ताकि, फसल पर
बाली का हर दाना
बन्डी के 'होल' में लगे
गुलाब की तरह
मुस्कराये,
खिलखिलाए !

विना तुम्हारे भारत की कल्पना अधूरी

—मधु भारतीय

असमय ही घिर मृत्यु-घटा ने सूर्य ढक लिया,
बूढ़े अम्बर ने छल छल छल अश्रु गिराये।
तड़प उठी शोकार्त दामिनी, सुध-बुध खोई,
काँप उठी धरती विधवा का वेष बनाये॥

सन सन करती पगलाई-सी हवा-भटकती,
समझ न पाई स्तब्ध प्रकृति, क्या बात हो गई।
भारत की क्या कहें, विश्व को लगा कि जैसे—
दोपहरी में गहन अँधेरी रात हो गई॥

प्रथम बार ही मृत्यु-दंश की पीड़ा जानी,
हमसे तुमको छीन मृत्यु भी रोई होगी।
मर्त्यलोक का करुणा-क्रन्दन सुनकर अब तक,
स्वर्गभूमि भी सुख की नींद न सोई होगी॥

कैसे धैर्य धरें, अब धीरज कौन बँधाए,
छोटे और बड़ों के चाचा रूठ गए हैं।
बाल-गुलाबों को भारत-बगिया के रक्षक,
लाड़ लड़ाने वाले माली छूट गए हैं॥

शान्तिदूत ओ, युग नायक, भारत उन्नायक,
तुम क्या गए धरा की सारी शान्ति खो गई।
अरे जवाहर, तुम सा लाल गँवाकर देखो—
अंधे युग में मानवता असहाय हो गई॥

दीन दुखी परतन्त्र राष्ट्र के हित चिन्तन में,
आत्मार्पण कर तुमने सब सुख-वैभव छोड़ा।
पूरब पश्चिम के मिलाप के सेतु बन्धुओं,
तुमने भारत की बिखरी कड़ियों को जोड़ा॥

नष्ट कर दिया कण्टक वन साम्राज्यवाद का,
लोकतंत्र के साथ धर्म के फूल खिलाये।
गहरी जड़ें समाजवाद की डाल गए तुम,
राजनीति को छूकर सौ-सौ चाँद उगाये॥

ज्ञान-धर्म-विज्ञान समन्वित मंत्र दिया तो,
भारत का हर प्राणी अंगड़ाई ले जागा।
श्रद्धानत हो जिसने तुम्हें न शीश झुकाया,
नहीं धरा पर ऐसा कोई देश अभागा।।

सिखा दिया निज कर्मों द्वारा, मृदु कलियों से,
फौलादी चट्टानें कैसे कट जाती हैं।
कैसे सच्चे वीर सिपाही के आगे से—
खाई, खन्दक, गिरिमालायें हट जाती हैं।

जिसे प्यार से देखा उसकी उम्र बढ़ गई,
परस तुम्हारा मिला—मुखर साहित्य हो गया।
जुगनू को भी यदि हाथों पर उठा लिया तो,
वह महिमा-मण्डित होकर आदित्य बन गया।।

हुए देह से दूर, हृदय के पास बहुत हो,
तन की दूरी भी होती है कोई दूरी।
तुम भारत में, भारत तुममें, सच कहते हैं,
बिना तुम्हारे भारत की कल्पना अधूरी।।

धरा में कम्प आता है

—भरत व्यास

अचानक विश्व में जब युग पुरुष का अंत आता है,
गगन में कड़कती बिजली, धरा में कम्प आता है।
चिता की ज्वाल में जब रक्त वर्ण गुलाब जलता है,
दिशाओं के नयन झरते, हिमालय भी पिघलता है।
जवाहर लुट गया कैसे, जो यह संसार रोता है,
यह किसकी मृत्यु पर इतना बड़ा परिवार रोता है ?
करोड़ों आज कंधों पर यह अर्थी जा रही किसकी,
पिता यह कितने पुत्रों का, जले चंदन चिता जिसकी !
पवन किसकी विदा का दुःख भरा संदेश लाता है,
गगन किसके विरह का आज गीला गीत गाता है ?

तिरंगा आज क्यूँ आधा झुका आँसू बहाता है,
यह मोतीलाल का अनुपम जवाहरलाल जाता है !
भले जाओ, न पीछे से वतन बेहाल रखेंगे,
तुम्हारे भव्य भारत का समुन्नत भाल रखेंगे।
करोड़ों आंधियाँ आयें, हजारों घेर लें तूफाँ,
मगर जलती हुई हम यह अमर मशाल रखेंगे।
तपस्वी, यह तुम्हारा तेज दुगना जगमगाता है,
तुम्हारी मृत्यु में जीवन का अमृत छलछलाता है।
जलाकर ज्योतियाँ कितनी तुम्हारा दीप जाता है,
रुको, देखो, तुम्हारा ध्वज विजय का गीत गाता है॥

केशर की खुशबू की आत्मा वाला गुलाब

—डॉ० परशुराम शुक्ल

केशर की खुशबू की आत्मा वाला गुलाब,
उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम—
सभी जगह महका था।
जमाना जब बहका था
उसने उड़ाये थे श्वेत कपोत
युद्ध के तूफान से बच जाये मनुष्यता-पोत।
वर्ण, जाति, देश
मनुष्यता हो निर्विशेष,
मनुष्यता हो धर्म, जीवन का ध्येय,
धरती में मनुष्यता हो एकमात्र गेय।
विश्वास यह लेकर—
नापता रहा गोलार्ध
बाँटता रहा सौहार्द।
पीढ़ियों की पीढ़ियाँ सम्मोहित
युग उसने गढ़े,
इतिहास के पृष्ठ जो बढ़े
उसका नाम लेकर बढ़े।

वह भारतीय जनता का हृदय-सम्राट्
जिसके क्रोध पर जगे प्यार
ऐसा तुनुकमिजाज़।
केशर की खुशबू की आत्मा वाला वह गुलाब—
विज्ञानी दृष्टा
स्रष्टा नये विश्वासों का,
संस्कृतियों का संगम,
प्रतीक जनतंत्री आदर्शों का,
जब औचक देश की बगिया की मिट्टी में मिला,
सहसा सूरज बुझ जाये
सारा शहर लुट जाये
ऐसा लगा।

जीना सार्थक रहा तुम्हारा

—रामानुज लाल श्रीवास्तव

जीना सार्थक रहा तुम्हारा।
रो-रो कर, सब पूछ रहे हैं, अब क्या होगा हाल हमारा?

अथ की इति होती ही है, पर तुम को नहीं बुढ़ापा आया।
रोग-शोक के सम्मुख तुम ने, कभी नहीं निज माथ झुकाया।
कल ही हरे-भरे पाहुन के, 'सहसधार' ने पाँव पखारे।
हे विमान-यात्रा के प्रेमी! किस विमान से आज सिधारे?
ढूँढ़ रही व्याकुल मानवता—कहाँ जवाहर जग का प्यारा?

गान्धी जी ने सौंपी तुमको, दुखिया भारत की सिवकाई।
सकल विश्व में कीर्ति छा गई, ऐसी तुमने नीति निभाई!
दुःख सह, बन्धन-मुक्त हुए तुम, औरों को भी मुक्त कराया।
कितने देशों ने अपने संकट में, तुम से सम्बल पाया!
अब भी हैं विपत्तियाँ सब पर, कह दो किसका गहें सहारा?

तुम तो पलक झपकते पहुँचे वहाँ, जहाँ है राज्य शान्ति का।
दुनिया में अब भी फैला है, सभी ओर साम्राज्य भ्रान्ति का!
कल जाना था तुम्हें समुन्दर-पार, गुत्थियों को सुलझाने।
आज अचानक चले गए तुम, रुला सभी जाने-अनजाने।
क्या हम ने ही तुमको अपने सच्चे मन से नहीं पुकारा?

आज विश्व में सन्नाटा है, आज अँधेरा नभ में छाया।
आज चर-अचर सभी रो रहे, आज उदधि का उर अकुलाया।
एक जवाहर था, जिसके जौहर से सभी ज्योति पाते थे।
एक सितारा था, जिसकी रौनक पर सभी रीझ जाते थे।
किया आज उस तेज-पुंज ने, हम से, हा हतभाग्य! किनारा।

जीना है अब व्यर्थ हमारा।
जीना सार्थक रहा तुम्हारा॥

एक स्वप्न, एक मूर्ति, एक चित्र

—शंकर शुक्ल

एक स्वप्न !

एक स्वप्न था युग युग का वह जग पर जो सच बन छाया था
नहीं उसे हम बाँध रख सके देवलोक से वह आया था।
एक स्वप्न जो भटक रहा था किसी अरस्तू—
और किसी रूसो के मन में,
झाँक चुका था जो निराश हो
ग्रीक, रोम औ' आर्य सभ्यताओं के खंडहर!
कौन सभ्यता नहीं; जहाँ हो नहीं दलित जन?
किस संस्कृति में नहीं मिले हैं असहायों के विवश अश्रुकण!
वह सपना था ऐसी भव्य विश्व संस्कृति का
जिसमें नहीं शृङ्खलित मानव कहीं—कभी भी!
जिसमें नहीं अश्रु का विक्रय! जिसमें नहीं स्वर्ण का संचय!

एक मूर्ति !

एक मूर्ति थी जिसे किसी ऋभु ने तराश कर

भेंट किया था मानवता को
प्राणों का अनन्त स्पन्दन भर,
जिसके शब्द-शब्द में मुखरित होते रहते थे सामस्वर !
भग्न हो गयी मूर्ति नहीं हम बना सके उसका देवालय !
प्राण प्रतिष्ठा नहीं कर सके हम उसकी जन-जन में !
पूर्वापर का रुदन आज बन गया एक वरुणालय !

एक चित्र !

एक चित्र था करुणा और कला का !
जिसे बनाया था रच-रच कर किसी देव-शिल्पी ने
किसी झील पर झुकी साँझ की रक्ताभा ले,
नील गगन में मुक्त शिखर का तुहिन स्पर्श ले,
कोमलतम प्रसून से सोरभ बच्चों के होठों से मधुस्मिति
माँ की आँखों से ममता-जल वह भी चित्र कहाँ रह पाया
मानव के सूने हाथों से वहा ले गया उसे वरस कर
आज न जाने कहाँ शून्य नभ !

ओ जीवित नगराज

—मलखानसिंह सिसौदिया

ओ जीवित नगराज, शान्ति के शृंग आँधियों से भिड़ते,
ओ अक्षय तारुण्य, तेज के द्वादश रवि चलते फिरते।
स्वतंत्रता के केतु, कौंधते और तड़पते बिजली से,
ओ भूतल के चाँद, उगे तुम विश्व-क्षितिज की बदली से ॥

तुम थे ज्वाला, खून, पसीना, आँसू और गुलाब-कुसुम,
तुम स्वदेश की धूल, नदी, वन, पर्वत औ' चन्दन कुंकुम।
तुम थे भूत, भविष्यत्, आगत, तुम आशा-विश्वास अमर,
तुम्हीं कल्पना, तुम जीवन थे, अपराजेय सत्य सुन्दर ॥

स्वतंत्रता के तुम विवेक थे, पंचशील निर्माता थे,
मानवता के मन-मानस थे, द्रष्टा, स्रष्टा, त्राता थे।

तुम नव भारत के शिल्पी थे, चिन्तन थे, नव-सर्जन थे,
नव वसन्त की गंध-गुंज थे, रंग-रूप थे, दर्शन थे ।।

तुम इस्पात भिलाई के थे, तुम्हीं भाखड़ा-नंगल थे,
विध्वंसक आणविक शक्ति के शमक तुम्हीं जन-मंगल थे।
तुम सागरमाथा की जय थे और विलय थे गोआ के,
थे वान्दुंग सदेह प्रेरणा, ज्योति-विहान एशिया के ।।

तुम जन-तंत्र, समाजवाद थे, युग के भाग्य-नियन्ता थे,
संस्कृतियों के तुम्हीं त्रिवेणी-संगम, ताज, अजन्ता थे।
तुम क्या-क्या थे नहीं, बुँद में तुम विराटता-सागर थे,
तुम थे हिन्द, स्वेज़, काँगो थे, राष्ट्र-संघ के नागर थे ।।

पर तुम देव नहीं, मानव थे, कोमलता थे, दृढ़ता थे,
तुम योगी थे, तुम भोगी थे, तुम विराग थे, ममता थे।
तुम त्यागी थे, तुम रागी थे, अन्तर्द्वन्द्व डोलते थे,
जिन्दा एक शहादत थे तुम औ' इतिहास बोलते थे ।।

एक चरण था क्रान्ति तुम्हारा और शान्ति दूसरा कदम,
तुम जग के ग़म में घुलते थे, भूल गये थे अपना ग़म।
राजनीति था कर्म तुम्हारा, काव्य तुम्हारा सहज स्वभाव,
दर्शन था मस्तिष्क तुम्हारा और हृदय था शैशव भाव ।।

एक हाथ में लिये लेखनी और एक में सत्ता-भार,
युद्ध-अनय-शोषण से पीड़ित तुम्हें बुलाता था संसार।
कहीं तुम्हारा दिल, दिमाग़ था कहीं, कहीं थे खुद रहते,
एक साथ अनगिन दर्दों के गरल-घूँट पीते रहते ।।

कभी धरा के कटु यथार्थ में, कभी कल्पना के जग में,
कभी भूत में, वर्तमान में, कभी सुदूर अनागत में।
राजनीति में कभी, कभी दर्शन में, मानस-मंथन में,
कभी विवादों में, वादों में, कभी क्रान्ति-परिवर्तन में ।।

तुम आकुल, अविराम, अकुण्ठित, रहे खोजते आजीवन—
एक स्वप्न—जिसको पाने को जलते रहे प्राण-तन-मन।
तुम्हें जागते-सोते, चलते-फिरते स्वप्न बुलाता था,
ऊभ-चूभ अन्तर्द्वन्द्वों में, आँखों में तिर आता था ।।

स्वप्न कि भू पर युद्ध नहीं हों, न हों धर्म की दीवारें,
भेद नहीं हों जाति-वर्ग के, नहीं दमन की तलवारें।
सत्य बनाने को वह सपना, रहे तड़पते तुम बेचैन,
न्यूयार्क, मास्को, पीकिंग, पिंडी, लन्दन घूमे दिन-रैन ॥

तुम ऐसे थे सौम्य कि एटम-ब्रम भी शीश झुकाता था,
देख तुम्हें गुर्राता हिंसक पशु पीछे हट जाता था।
घिरीं बहुत-सी ध्वंस घटायें, गरजे युद्धों के बादल,
जादू किन्तु तुम्हारा ऐसा एक न उनकी पायी चल ॥

कई बार भूडोल द्वार पर, आये आँगन में तूफ़ान,
सिर पर बिजली तड़पी, टूटी, किया अँधेरों ने अभियान।
किन्तु जहाँ तुम पहुँचे जैसे नयी हवाएँ साथ लिये,
जैसे मुरझाये तरु फूले, जैसे जलने लगे दिये!!

गोया जीवित चमत्कार थे, या तिलस्म थे, या वर थे,
या सम्मोहन मंत्र हो गये तुम साकार धरा पर थे।
तुम्हें सौंप चिन्ताएँ अपनी जैसे थी दुनियाँ निर्भय,
सौंप समस्याएँ सब तुमको वर्तमान था निस्संशय ॥

केवल एक वर्ष बीता है पर जैसे युग बीत गया,
तुम क्या गये, चमन दुनियाँ का जैसे सहसा रीत गया!
जैसे बेकाबू घटनाओं का हय सरपट दौड़ रहा,
जो वल्गा थामे, रुख़ मोड़े, तुम जैसा न सवार रहा!!

आज गरजती हैं चुनौतियाँ, क्षुब्ध घुमड़तीं ललकारें,
बाँबी बाहर काले विषधर मार रहे हैं फुफकारें।
दुश्मन पच्छिम, उत्तर, पूरब, दुश्मन हैं भीतर-बाहर,
व्यक्ति और गुट के स्वार्थों में डूबा देश-भक्ति का स्वर ॥

ऐसी संकट की घड़ियों में याद तुम्हारी आती है,
स्यात् तुम्हारी त्यौरी तो समाधि में भी चढ़ जाती है।
लगता है तुम तोड़ मृत्यु के पट सरोष उठ आये हो,
फिर त्रिमूर्ति में तमक उठे हो, लोक-सभा में छाये हो!!

तड़प तुम्हारी राख देश-भू को झकझोर जगायेगी,
उसकी ज्वाला धधक खून को, पानी को खौलायेगी।

और तुम्हारे भाषण बिजली बन कर जैसे तड़पेंगे,
काश्मीर, लद्दाख, कच्छ में अंगारों से बरसेंगे ।।

आज तुम्हारी पुण्य-स्मृति के दिन यह शपथ ले रहे हम,
इंच-इंच अपनी धरती दुश्मन से लेकर लेंगे दम।
छोड़ अधूरा जिसे गये तुम पूरा उसे करेंगे हम,
शपथ रक्त से लेते, स्वप्न तुम्हारा सत्य करेंगे हम ।।

लो, प्रणाम, लो

—डॉ० श्यामसुन्दरलाल दीक्षित

बिखर गयीं लो पावन प्राणों की पंखुरियाँ,
माना मन गर्वी गुलाब का टूट गया रे !

अभी कामना की कलियों के स्वप्न जगे थे,
भावों के भ्रमरों का गुंजन मौन हो गया।
अभी गुणों की गंध प्यार पाकर नाची थी,
किंतु काल जीवन के जल से हाथ धो गया।
मन-माली के सात स्वरों का बाँध खुल गया,
धरती काँपी और गगन का हृदय रो गया।
आशा का उद्यान चला पतझर के पथ पर,
जन-जौहर की ज्योति जवाहरलाल सो गया।
कौन कर सकेगा अपनी पीड़ा का अंकन,
हर्ष-हिमालय से दुःख-निर्झर फूट गया रे !

मृत्युंजय बन गये राष्ट्र को जीवन देकर,
आज काल के गाल आँसुओं से गीले है।
अभी-अभी निकले थे अंकुर आजादी के,
प्रजातंत्र के वांछित बौर अभी नीले है।
सदा विश्व-विग्रह के विष को पीने वाले,
धीरज की धरती के सब बंधन ढीले है।

इधर अग्नि का अंतर जलता राजघाट पर,
उधर चंद्र के और सूर्य के मुख पीले हैं।
यश:शरीर, अपार्थिव आत्मा, लो, प्रणाम लो,
भौतिकता से भरा स्नेह-घट छूट गया रे!

शून्य तिमिर में चमके थे तुम, बन करके ध्रुव-तारा

—भीष्मसिंह चौहान

कोटि-कोटि का मुक्ति-प्रदाता, मानव का पथदाता।
चिर निद्रा में लीन सो रहा, तोड़ जगत से नाता॥
विश्व-शांति का दीप सँजोकर, लाया जो आलोक।
वही अचानक हमें छोड़ कर चला गया सुरलोक॥
जिसके संकेतों पर चल कर युग ने ली अंगड़ाई।
जिसके सफल प्रयासों द्वारा मानवता मुसकाई॥
जिसकी दृष्टि सृष्टि करती थी, वाणी थी कल्याणी।
जिसको खोकर आज दु:खी है अग-जग का प्रति प्राणी॥

त्याग, तपस्याओं का जो था जगमग एक प्रतीक।
जिसने जन्मीं परंपरायें, और अनेक सुलीक॥
नेहरू! निधन तुम्हारा जग को बना गया है निर्धन।
तुमसे हुई अनाथ मनुजता, दु:खी, त्रस्त जन-जीवन॥

वरद् पुत्र भारत माता के, जग-जननी के प्यारे।
स्वप्न सदृश्य अदृश्य हो गये, फूटे भाग्य हमारे॥
पंचशील के अमर प्रणेता, विश्व-शांति के दूत।
शक्ति तुम्हारी अंतिम क्षण तक सका न कोई कूत॥

कोटि-कोटि भारतीय जनों के, तुम ही थे जननायक।
स्वतंत्रता के महासमर के बने तुम्हीं अधिनायक॥
तुममें केन्द्रित अखिल विश्व था, तुम थे जग-पथ-दर्शक।
जीवन की मंजिल पर दृढ़ हो, बढ़े सदा ही अनथक॥

ज्ञान और गरिमा से मंडित, थे व्यक्तित्व महान्।
निखरा सुयश तुम्हारा क्षण-क्षण, बन करके वरदान॥
रहे कर्मरत अंतिम क्षण तक, बढ़ करके अविराम।
नहीं स्वप्न में भी तो तुमने लिया कभी विश्राम॥

वर्तमान ऐटमी जगत् में शांति-बीन बजवाई।
नफरत के बारूद महल में तुमने आग लगाई॥
भव्य कल्पनायें बापू की तुमने कीं साकार।
दीनों, दुखियों, असहायों को तुमने लिया उबार॥

शून्य तिमिर में चमके थे तुम बन करके ध्रुवतारा।
मुक्त पवन से बहे निरन्तर, बन गंगा की धारा॥
अंगारों पर चलने में ही तुमने था सुख पाया।
दिग दिगंत में आज तुम्हारा कीर्ति-केतु फहराया॥

सत्य स्नेह विश्वास शक्ति के थे अतुलित भंडार।
दानवता के दानव-दल पर करते रहे प्रहार॥
आज तुम्हें खोकर जग सारा है हतभाग्य अकिंचन।
तुम-सा पुष्प न खिल पायेगा, सूना है जग-उपवन॥

अवनि और अंबर उदास हैं, खोकर तुम-सा रत्न।
युग समाप्त कर गये एक तुम, बन कर जग को प्रश्न॥
तुम हो अजर-अमर, हैं जब तक नभ में चांद सितारे।
भारत माता के मंदिर में संचित त्याग तुम्हारे॥

बूढ़ा विश्व

—कृष्ण नारायण खरे

एक क्षण में हो गया क्या ?
हाय ! मेरे राम ! जग बूढ़ा हुआ है !!
दृष्टि खोई, सुन न पाते कान कुछ,
पग शिथिल, तन जर्जर, हुआ दिग्भ्रम।
गगन से ले उठा भागा, कौन रवि को—

तिमिर के दुर्दांत आँचल में लपेट अबाध !
अंधकार अनंत, विस्मृत, अमित तारक-लोक, मानव-लोक।
डगमगाई भूमि सत्वर, चिहुँक
और घन कज्जल सदृश छाये—तुरत धाये—
साथ ले अंधड़, प्रलय-वातास।
ले गये जो छीन सब कुछ, प्रिय हमारा
देखते भर हम रहे निरुपाय—
बस ! आँखें पसारे—हाय, मेरे राम !
एक क्षण में हो गया क्या ?

हो गया हाँ ! एक परिवर्तन
कि हम जैसे बदलते वस्त्र नित नूतन
मिटा अक्षर समय की पट्टिका से
लिखे जैसे नवल अक्षर भविष्य का बालक।
क्योंकि आत्मा नित्य शाश्वत !
"नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः
न चैनं क्लेद यन्त्यापो, न शोषयति मारुतः"
तब हमारे प्यार का सिन्दूर
भावना का, कामना का इन्दु
अमिट आशा का अमर वह सिंधु—
छलछलाता नित्य जन-जन में कि जैसे आँख में आँसू,
कि जैसे सीप में मोती
कि जैसे श्याम घन में बिंदु !
दूर तब कैसे हुआ ? वह प्रिय हमारा—
लाल, मोती का—जवाहर
है खड़ा जो नित हमारे पास : हम जानें—न जानें।
हम नहीं बूढ़े—सदा हैं चिर युवक।

एक कसीदा : एक मर्सिया

—ललितमोहन श्रीवास्तव

वो अम्न का उन्वान, वो इन्सानियत की रूह
पैग़ामे—'उहुरू', वो नये वक्त की आवाज
हर सख्त मरहले में वो सुलझा हुआ जमीर
वो जिन्दगी का हुस्न, वो फ़नकार का जज़्बा
रोशन-दिमाग दिल, वो मोहब्बत का इन्क़िलाब
नेहरू था जिसका नाम वही सुर्ख-रू गुलाब !

अब फिर न खिलेगा, न खिलेगा वो तबस्सुम
खोजे न मिलेगा कि कहीं हो गया है गुम !
जनता का वो मेहबूब, जवानी का वो सुहाग
अपने वतन की खाक में जो खाद बन गया !
धरती पे था मेहमान वो बेदार, मस्त-ख्वाब
घर-घर का दिया, सारे जमाने का आफ़ताब !
'मोती' की आब से भी ताबदार व बेजोड़
जिसका न कोई बदल है, जिसका न कोई तोड़ !

दिल के क़रीबतर, नजर से दूर···दूर···दूर···
शायद वो सो गया है बहुत थक के चूर-चूर
खामोश हो गया है बाग़बाँ अरी बुलबुल
'आनन्द-भवन' का चिराग़ हो गया है गुल !
हर आँख ढूँढ़ती है, हिल रहे हैं दर-वो-बाम
ऐ सुर्खरू गुलाब, तुझे आखरी सलाम !

दुल्हिन दिल्ली का सुहाग नीलाम हो गया

—सतीश गर्ग

मन्दिर लगता है उदास सूना-सूना-सा,
बुझी-बुझी आरती, शंख भी बे-जुबान-सा ।
सुबह खिली पीले पत्ते-सी झरी-झरी-सी,
सूरज भी डर गया कि आँगन था मसान-सा ॥

वे मोके कवि कालिदास का मेघ रो उठा,
यक्ष धरा की पीड़ा समझ नयन भर लाया।
मरी मन्थरा की मन-चीती आज हो गई,
राम नहीं लौटे, सुमंत्र आकर बिलखाया।।

थकी-थकी चल रही साँस, दशरथ बेसुध है,
कौशल्या सहमी-सहमी-सी खड़ी हुई है।
नगरी का दम घुटी-घुटी साँसें भरता है,
मौन चित्रवत् मातु सुमित्रा जड़ी हुई है।।

फूटी चूड़ी देख रो उठे जैसे विधवा,
देख खिलौना फूटा बिलख पड़े ज्यों शैशव।
राखी बन्द भाई रूठा हो जिस भगिनी से,
वैसे ही लुट गया आज जनता का वैभव।।

दुल्हिन दिल्ली का सुहाग नीलाम हो गया,
लालकिला, इण्डियागेट पर गाज गिर गई।
चीत्कार करते है आज भाखड़ा नगल,
लावारिश-सा काश्मीर है, शान मर गई।।

रावी तट पर ली सौगन्धें पूर्ण कर चुका,
गांधी के सपनों के भारत का ख्याल था।
लगा कि जैसे निर्माणों ने ली अँगड़ाई,
भारत ऊँचा उठे, यही मन में सवाल था।।

मगर काल ने अनुनय-विनय कहाँ मानी है?
राजघाट का गांधी बेत्र(अकुलाया है।
जनता का प्यारा नेहरू जन-जन का तजकर,
बापू की गोदी में सुख पाने आया है।।

लगा पाटली-उपवन जैसे बिलख रहा हो,
लाल गुलाब झरा, मानो असहाय हो गया।
इन्सानों की वस्ती का शृंगार-देवता,
मानवता के घर-आंगन को मौन कर गया।।

वज्र गिरा, ढह गया हिमालय

—गुरुभक्त सिंह 'भक्त'

जिसमें मोती का पानी था, जिसे त्रिवेणी ने जाया,
वह योगी फिर ब्रह्मलीन हो, छोड़ गया जग की माया।
प्राण-प्रभंजन, काया-कारा से विमुक्त हो, बना अलख,
वह अनन्त में ऐसा खोया, देख न पाते जग के चख।
वाणी उसकी ब्रह्माण्डों में लघुतरंग बन समा रही,
कर्मयोग औ शान्तिपाठ वह विगत आत्मा सुना रही।
लोक संतरण में विलीन रह, सूर्यकिरण-सा उज्ज्वल था,
मानव-मन अपना लेने का देवदत्त आत्मिक बल था।
सत्य शान्ति औ सत्य अहिंसा का प्रतीक बन आया था,
भारत का आदर्श धर्म उसने जग को सिखलाया था।
जग-प्रपंच-सागर में रह कर भी निर्लेप सदा शरणी,
विषम परिस्थिति में भी ऊपर रह खेती रहती तरणी।
देशयान-पतवार आज जन-कर में दे पथ दिखा गया,
अमर जीव वह निज लीला कर, योग भोग में सिखा गया।
राजनीति कालिमा-शीश चढ़ शांति बांसुरी गया बजा,
देवतुल्य ऐसे मानव को देख देवगण गये लजा।
आज विश्व के हृदयमंच पर उसका ही अभिनय होता,
आज उसी की अमर कहानी सुनता है जग बन श्रोता।
देश जाति दल रंगभेद के भावों से वह ऊपर था,
रुँधे गले से गुण गाथाएँ उसकी विश्व रहा है गा।
अब साकार कहाँ देखेगा 'भक्त' ध्यान धर मूक हुआ,
वज्र गिरा, ढह गया हिमालय, धरा-हृदय दो टूक हुआ।

ममता-भरा नमन

—तन्मय बुखारिया

आज देश के सूरज को अँधियारा निगल गया है,
शोक,शोक की हद कि हिमालय रोया पिघल गया है !
कहने को यह मौत एक इन्सान जवाहर की, पर,
लगता जैसे आज जनाजा युग का निकल गया है ! !

आज हमारा भाग्य नियति के द्वारा छला गया है,
आशा-कलिका के पराग को पतझर जला गया है।
जिसके एक इशारे पर जन-गोपी सुधि-बुधि खोती,
वह चालीस करोड़ों का नटनागर चला गया है ! !

हँसो-हँसो हे क्रूर नियति दृग-भारत आज सजल है,
हर पौरुप अवरुद्ध कंठ है, गीला हर आँचल है।
किसकी ऐसी मौत धन्य है, जिसकी पुण्य चिता पर-
अनुयायी ही नहीं विरोधी भी विह्वल-पागल है ! !

मँझधारों के बीच न जाने बेड़ा कहाँ फँसेगा,
उन्नत मस्तक, विनत, उभरता सीना सँकुच धँसेगा।
और सभी हम सह लेंगे हे महाकाल, पर बोलो,
'चाचा नेहरू' कहकर, बच्चे किससे मगर हँसेंगे !

पंचतत्व का कर्ज चुक गया, अब उन्मुक्त गगन है,
गाँधी के हाथों को पूँजी अब गाँधी का धन है।
उपनिषदों, वेदों, गीता के हे वैज्ञानिक गायक,
अंतिम बार तुम्हें भारत का ममता-भरा नमन है।

पंचशील जनमंगल गायक

—जगदीश ओझा 'सुन्दर'

जनमंगल के गीत ! विश्व-वीणा के सुमधुर सरगम,
पंचशील-गायक ! अक्षय स्वर ! अमृत-भीना परचम।

तुम्हें मिटाकर काल कलंकित हुआ, नहीं कुछ पाया,
एक मिटा तन, कोटिक उर में तेरा रूप समाया।
दिग्दिगन्त से बरस रही श्रद्धा की सुमनावलियाँ,
जग पवित्र हो रहा तुम्हें दे, सादर श्रद्धांजलियाँ।
प्रभु का यह कैसा कौशल, कैसी यह उल्टी माया;
अमर पुरुष की रचना कर, देता है नश्वर काया!

अम्बर का दिल झुलस रहा, धरती की फटती छाती,
दरक गये है दीप हृदय के, कौन जलाए बाती।
तेरी बिछुड़न में बिखरी जाती गुलाब की कलियाँ,
तपसी! त्यागों से ही सम्भव तेरी श्रद्धांजलियाँ!

तव पग में मानवता का मग देखा जा सकता था,
तव स्वरूप में भारत क्या, जग देखा जा सकता था।
अनगिन प्राणों की ममता से भरा तुम्हारा था दिल,
अनगिन पन्थ जहाँ मिलते, तुम रहे निराली मंजिल!

आज सड़क पर मातम होता, सिसक रही है गलियाँ,
भर भर नयन समर्पित है पलकों की श्रद्धांजलियाँ।
तेरी गति से विश्व-शान्ति की राह आज सस्मित है;
तेरे शब्दों से निर्मित इतिहास आज गर्वित है!
तेरी किरणों से धरती का कण-कण आलोकित है,
सहअस्तित्व का उदय भेद तम कंपित आतंकित है।
तेरी सुधि में जोड़े नित समता की स्वर्णिम कड़ियाँ,
युगस्रष्टा! युग मानव!! संकल्पों की श्रद्धांजलियाँ!

सारी दुनियाँ भर में मातम है जवाहरलाल का

—'बिस्मिल' इलाहाबादी

कौन है जिसको नही गम है जवाहरलाल का,
सारी दुनिया भर में मातम है जवाहरलाल का।
देश की सेवा से मतलब था, उसी से काम था,
इक उसी धुन में मगन हर वक्त सुब्होशाम था।

इस तरह ऐसी लगन से काम कर सकता है कौन,
हर तरफ संसार में यों नाम कर सकता है कौन।
उसके दम से थी बड़ी आनेवतन शानेवतन,
सब उसे कहते रहे रूहेवतन जानेवतन!
मर्द मैदानेसियासत था, कभी डरता न था,
झुक के दुनिया में किसी से काम वह करता न था।
हर किसी के दिल में था जिसका इजारा, चल बसा,
बेकसों का और दुखियों का सहारा चल बसा।
मौत की आगोश में मेहमान होता कौन है,
इस तरह अब देश पर कुर्बान होता कौन है।
सच्चा रहबर और सच्चा रहनुमा जाता रहा,
दरहकीकत एक मर्दे बावफा जाता रहा।
दोस्त-दुश्मन सबके दिल पर वह हुकूमत कर गया,
ऐसे नाजुक वक्त पर अफसोस है क्यों मर गया।
कौन कहता है किसी की वह बुराई कर गया,
देश की हर हाल में दिल से भलाई कर गया।
कौन है 'बिस्मिल' जो उसकी मौत से बिस्मिल नहीं,
वह तमन्ना अब नही, हसरत नहीं, वह दिल नही।

महामानव नेहरू के देह-त्याग पर

—रामदयाल पाण्डेय

शोक, तमिस्रा, कुहेलिका में सृष्टि हुई संसृत है,
महामनुज के देह-त्याग से विश्व लग रहा मृत है।
लगता जैसे मानवता ही कहीं न मृत हो जाये,
स्वतन्त्रता, समता, सुशान्ति का पथ विस्मृत हो जाये।
ध्वस्त हो गया सहसा जैसे दृढ़ जनतन्त्र हिमालय,
अस्त हो गया आदर्शों का ग्रहमण्डल ज्योतिर्मय।
ज्वलित हो गया शान्ति-प्रीति का ज्यों प्रशान्त-सा सागर,
मरु में परिणत हुआ प्रगति का महाक्षेत्र ज्यों उर्वर।

भारत का ही नही, मनुजता का प्रियतम अपना था,
लगता है वह अर्द्धशती का महासत्य सपना था।
सबका ही वह सखा-बन्धु, सबका रक्षक शुभचिन्तक,
सबका उर-सम्राट दुलारा, निर्भय, दृढ़ जननायक।

गया सहारा ज्यों वृद्धों का, पिता गया तरुणों का,
पुत्र गया ज्यों माताओं का, वीर गया बहनों का।
शिशुओं का सर्वस्व गया, आसरा गया श्रमिकों का,
दलितों का आधार गया, पर्जन्य गया कृषकों का।

वृद्ध नही था, वह तो तरुणों का तारुण्य प्रखर था,
वह कैसे हो गया दिवंगत, वह तो अजर-अमर था।
भारत के स्वातन्त्र्य समर का वह महान् सेनानी,
मुर्दों में भी जान डालती जिसकी निर्भय वाणी।

बापू ब्रह्मा, किन्तु विष्णु था वह स्वतन्त्र भारत का,
तूफानी अभियानी था संघर्ष-सृष्टि के पथ का।
पाल रहा था शिशुवत् वह सद्यःस्वतन्त्र भारत को,
प्राण-रक्त से सींचा करता अपने पावन व्रत को।

लगता जैसे देश नही, यह विश्व अनाथ हुआ है,
गांधी के मानवीकरण पर वज्र-निपात हुआ है।
कहाँ मिलेगा हमको फिर वैसा त्यागी बलिदानी,
जीवन के नव उच्चादर्शों का वैसा अभियानी ?

लगता विश्व-प्रशासन को वह गौरव नही मिलेगा,
देव मिलें, पर जग को वैसा मानव नही मिलेगा !
हुआ पराजित नगपति, पर नेहरू ही है अपराजित,
कठिन परीक्षा की घड़ियों मे सिद्धान्तों पर सुस्थित।

नही जवाहरलाल रहे, जग लगता आज अकिंचन,
मानवता निस्तेज लग रही, निर्बल, निःस्वर, अशरण।
कौन करेगा तम से ज्योतिष्पथ पर मार्ग-प्रदर्शन,
जड़ पशुता का चेतन मानवता से सजग नियंत्रण ?

चरम कर्मयोगी इस युग का, नवयुग का निर्माता,
मानव के अभिनव मूल्यों का संस्थापक-व्याख्याता।

वार-बार के सर्वनाश से जग को कौन बचाये,
राजनीति को पंचशील का अमृत-मार्ग बतलाये ?

वह मुड़ता था जिधर समय को मुड़ना ही पड़ता था,
वक्ष खोल एकाकी वह दानवता से लड़ता था।
प्राचीनता-आधुनिकता का उसने किया समन्वय,
पूर्व और पश्चिम के शुभ तत्वों का मंगल-परिणय।

श्रद्धांजलि है, अमर नेहरू के आदर्श अमर हों;
भारत के, भय के पद गतिमय, चिर उसके पथ पर हों।
सहस्राब्दियों का ले सम्बल तप.पूत, तेजोमय,
भारत बढ़ता रहे प्राण-दर्शनमय, बलमय, चिन्मय

नर-नाहर जवाहर

—रमेश 'नीलकमल'

उमस भरी दोपहरी थी वह मई सताइस वाली,
जब भारत के भाग्य-गगन में घिरी घटा थी काली।
दिग्-दिगन्त में शुष्क पवन ने क्षण में फैलाया था,
क्रूर काल ने एक बार फिर नर-नाहर पाया था॥

ज्योति-जवाहर ! ज्योति देश की बुझी, उदासी रोयी,
विश्व रह गया सन्न, विकलता विकल हुई औ खोयी।
एक नया भारत जिसके सपनों में झाँक रहा था,
चित्रकार वह नवल तीर्थ की छवि को आँक रहा था॥

जन-जन के सम्राट, तपस्वी, पंचशील-उद्गाता,
कोटि-कोटि कंठों से भारत जिसकी महिमा गाता।
कर्मठता ही ध्येय रहा उसके जीवन का प्यारा,
प्रेमपूर्ण व्यवहार, सौम्यता. दया, क्षमा की धारा॥

राजनीति मर्माहत, सूनी चित्राटवी हमारी।
और तूलिकायें अतीत की सूनी एक पिटारी॥

जिसकी गहराई में इन्द्रधनुप व्याकुल होता है।
किन्तु चितेरा रहा नहीं सारा अग-जग रोता है।।

श्रीहत हुई कला—अवचेतन मन की कोमल छाया।
सरस्वती ने विकल स्वरों में मौन रुदन ही गाया।।
और हिमालय गल-गल कर आँखों से बरस पड़ा है।
वर्तमान विह्वल, भविष्य-देहरी पर मौन खड़ा है।।

वह क्या गया, गया धरती का फागुन परम सुहावन।
वह क्या गया, दुःखोदधि बन बरसा है रिमझिम सावन।।
कलाकार! धरती की आँखें हैं विपण्ण पथराईं।
चिर पतझड़ की व्यथा सृष्टिकर्ता को समझ न आई।।

अमर रहेगा नाम जवाहरलाल का

—गिरिजा शंकर त्रिवेदी

नव चेतनता के विकास में, मानव के इतिहास में,
युग-प्रभात-सा अमर रहेगा नाम जवाहरलाल का!

झेंप गईं रवि-शशि की किरनें, तू ऐसा था उजियारा।
पिघली फौलादी जंजीरें, टूटी पशुता की कारा।।
ऊँचा हुआ हिमालय-मस्तक, गहरा हिन्द महासागर।
सप्तद्वीप ऋषियों में चमका जगमग भारत ध्रुवतारा।।
'बापू' कर से किया तिलक था तू प्राची के भाल का!

अमर हुआ वह गीत कि जिसके अधरों पर तू लहराया।
गूँज गया संगीत राग से जिसने भी तुझको गाया।।
सद्भावना पली तुझसे ज्यों औषधि लतिकाएँ वन की—
हो उठती स-प्राण उल्लसित पा शशि की अमृत छाया।।
श्रेय लिए तू प्रेय बन गया, हर गति लय हर ताल का!

सजते थे मधुमास, वधू राहें करती थी अगवानी।
धोते थे अश्रांत चरण सब तीर्थ लिए कर में पानी।।

तेरे मुख-मण्डल पर छाई कभी न सन्ध्या की छाया।
जब देखा तब पड़ी दिखाई इठलाती ऊषा रानी ।।
तू ही एक महोत्सव था प्रिय, कोटि-कोटि दृग-जाल का !

हन्त ! एक दिन शून्य विवर ने तेरी मनुज-कथाओं को।
लीन कर लिया, छोड़ विलखती लगी असंख्य सभाओं को ।।
किन्तु निरंतर प्रात-सांझ के चरण बढ़ाकर ऋतुमाला—
करती जाएगी अनन्त तक तेरी परिक्रमाओं को ।।

अविनश्वर, तुझ पर चल सकता दाँव न कोई काल का !
प्रथित रहेगा यश सदियों 'मोती' 'स्वरूप' के लाल का !!

रोशनी बुझ गयी

—चन्द्रकान्त देवताले

गुलाबों का रुदन
सारी पृथ्वी पर बिखर गया है
काँच के नुकीले टुकड़ों की तरह······
सिसकियाँ हिचकी आँसू खिड़कियों में
विलाप और स्तब्धता दरवाजों पर
एक भूकम्प मकानों में
जलती हुई धूप सड़कों पर······

आकाश, और आकाश के परे महा आकाश
सागर, और सागर के परे महासागर
लपटों से घिरे हुए
मृत्यु की गन्ध में डूबती हुई दिशाएँ
हम कहाँ जायें, हम कहाँ जायें—

मृत्यु व्यक्ति की नहीं हुई
किन्तु घटित होकर एक व्यक्ति में
(जो व्यक्ति नहीं, देश था)

फैल गयी है विश्व में……
ब्लैक आउट : मृत्यु के गिरने का अँधेरा
इतिहास के रोशनदान ढक गये हैं काले परदों से

कैसा पटाक्षेप !
ग्रीन-रूम में थी शान्ति
और सूत्रधार नहीं रहा
मंच पर अँधेरा
प्रेक्षागृह में फैल गयी बेहोशी—
रात—सत्ताईस मई
आँधी रो रही है सड़कों पर
अपने आप बज रही हैं
चर्च की शोकातुर घण्टियाँ
शिप्रा उदास !

महाकाल का मंदिर तूफ़ान से घिरा हुआ… ..
डरावने सपनों से आतंकित करोड़ों लोग
सोते नहीं—रोते हुए कुत्तों को सुनते हैं
खिड़की दरवाज़ों की भड़भड़ाहटों के बीच
संक्रमण के कुहरे में
पथ दिखाती मशाल बुझ गयी है गिर कर
शीत युद्ध की हवाओं को जो रोकता रहा
शांति का वही सबसे ऊँचा बुर्ज़ ढह गया है आज……

वह जो अपने में बसन्त लिये घूमता था
स्फटिक की तरह निर्मल
सन्देहों से परे और विश्वसनीय
मनुष्यों का मित्र
वह जो शब्द नहीं, हृदय बोलता था
जिसे हम सुनते थे दिलों से
उसे हम नहीं सुन पायेंगे—

अट्ठाईस मई—
सारा दिन : एक महायात्रा की तरह
कन्याकुमारी से हिमालय तक सिर्फ एक महायात्रा

सूर्यास्त : चिता को लपटों में अदेह होती हुई महान् आत्मा
शाम : महाशान्ति—अपने प्रिय को अंतिम विदा देकर
लौटा हुआ भारत अवसाद में डूबा, थका, ख़ामोश
रेडियो कहता है : रोशनी बुझ गयी।
और एक उदास संगीत प्रार्थनाओं में समाये
करोड़ों झुके चेहरों के बीच उभरता है……
संवेदनाओं को चीरती उल्टी आरी की तरह……

जवाहर मरा नहीं !

—डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त 'बरसैया'

कौन कहता है कि—
नीले आकाश में
मुक्त रूप से
कबूतरों को उड़ाने वाला
जवाहर मर गया—
नही, नहीं, नहीं,
जवाहर मरा नही, जिन्दा है।
कबूतर उड़ते है—
लालकिले पर
ध्वज फहरते हैं—
मानवता के भवनों पर
मानवता विहँसती है
अन्तस् में
भाखरा, नंगल, भिलाई और राउरकेला
कुछ कहते है;
हम सुनते हैं।
यदि वह मरता तो-—
कबूतर न उड़ते,
ध्वज न फहरते,

मानवता रोती
दुनिया कुछ और होती।

अब वह भौतिक नही, अभौतिक है
प्रतिमा नही, प्रतीक है
कबूतर का पंख नहीं, मानस है,
ध्वज नही वायु है
मानवता को दुलारने वाला भाव है -
जिसे हम सुनते नही,
अनुभव करते हैं।

एक युग-पुरुष

—जयमोहन

एक युग-पुरुष और
जलाकर मैत्री के मृदुदीप
अजर बन गया।

एक युग-पुरुष और
काल के कठिन करों को बाँध
अमर बन गया।

एक युग-पुरुष और
घृणा की कुण्ठाओं को जीत
अजित बन गया।

एक युग-पुरुष और
युगों की सीमाओं को लाँघ
अमिट बन गया।

कपोत

—कृष्णकुमार तिवारी 'रंजन'

नन्हें-मुन्ने पूछते हैं
जब तुम्हारा पता
आँखें समो लेती हैं
नीला आकाश !
एक सफेद चाँद
बेवा की चूड़ी की तरह
टूट जाता—
तारे झिलमिल,
यादों के आँगन में मोती-से बिखरे।
पोखर सूख जाता।
वह कपोत उड़ जाता !!

अमिट हस्ताक्षर !

—कामता तिवारी 'राज'

उस दिन भी
रोज़ की तरह
रेडियो खोला
और 'एनाउन्सर'
रोज की तरह बोला।
रोज की तरह गीत मचले,
हवा के कन्धों पर चढ़े;
खाने लगे फेरे पर फेरे—
अचानक ही बदल गये शब्दों के घेरे।
दिन में ही उतर आई शाम !
सिसकते रहे स्वर तमाम—
राम······राम······राम।

यांत्रिक मन ठिठका
ये क्या हो गया ?
चुप्पियों को चीरती
वोली 'मशीन'—
'युग देवता प्यारा जवाहर सो गया।'

एक क्षण में दृश्य वदले
खो गये सारे कथानक !
एक क्षण में प्रकृति-रूपा
हो गई कितनी भयानक !
वह निस्तेज है, निष्कम्प है, हत है,
कोई तो कहे—
यह खवर सच नहीं, झूठ है
गलत है।
कि वो तो अजर है, अमर है
प्रगति की पुस्तक पर
अमिट हस्ताक्षर है !

कर्म के अध्याय

—आनन्दकुमार तिवारी

ओ जवाहर !
सुन रहे है हम
तुम्हारा स्वर।
और आंखें देखती है
प्रगति का उज्ज्वल शिखर।
इतिहास का दर्पण
कि जव झुंझला रहा था,
सभ्यता का आचरण
धुंधला रहा था,
वह तुम्ही तो थे

कि जिसने मनुजता के पग पखारे,
ज्योति ऐसी दी कि जो
काल का चीवर उतारे।
वेद-सा जीवन जिया तुमने
कि तुम तो
कर्म के अध्याय से थे,
विश्व में जो श्रेष्ठ था
उस श्रेष्ठता के
महत्तम समुदाय थे।
भा गई इस देश की माटी तुम्हें इतनी—
तुम स्वयं को वो गये।
प्रत्येक जन का मन तुम्हारा
पुण्य स्मारक,
कौन कहता है कि अब तुम खो गये!

पथ नजर आते नहीं हैं

—वीरेन्द्र शर्मा

ओ महामानव! तुम्हारे साथ ही निर्माण आया,
तुम गये तो रुक गया रथ, पथ नज़र आते नहीं हैं॥

तुम गुलाबों से खिले थे, तुम गुलाबों से पले थे,
अवतरित जिस दिन हुए तुम, हर जगह दीपक जले थे।
सजल दृग जो पूछते हैं, वह इन्हें कैसे बताऊँ,
पंथ पर पदचिह्न तेरे, आरती इनकी जगाऊँ॥
वेदना इतनी दृगों में भर गई मेरे सिमटकर,
घुट रहा है मन, मगर लोचन बरस पाते नहीं हैं!
पथ नज़र आते नहीं हैं॥

प्राण पर छाये हुए तुम, चल दिये फिर भी अकेले,
तुम नहीं हो, अब न पहले से रहे त्यौहार मेले।

फूल, माली, गंध, शबनम सब यहाँ रोने लगे हैं,
और भावी स्वप्न सब विक्षुब्ध-से होने लगे हैं ।।
ओ मनीषी ! देख मन्दिर में सृजन सोने लगा है,
वंदना के स्वर किसी के गीत अब गाते नहीं हैं !!
पथ नजर आते नहीं हैं ।।

राख तक तुमने समर्पित कर, स्वयं अमरत्व पाया,
किन्तु मेरे देश के हर गाँव में सन्ताप छाया।
शाह तुम थे, सन्त तुम थे, पंथ तुम थे, राह तुम थे,
हर दुखी की बाँह तुम थे, हर सुखी की छाँह तुम थे ।।
गूँजती आवाज मेरी खुद मुझे छलने लगी है,
सिर्फ आश्वासन किसी के प्राण बहलाते नहीं हैं !!
पथ नजर आते नहीं हैं ।।

यह कौन चला

—शिवशंकर वशिष्ठ

धरती काँपी, आकाश हिला, हिमगिरि चिल्लाया फाड़ गला—
यह कौन चला ? यह कौन चला ? यह कौन चला ?

हो गईं दिशायें मूक मौन, चलते-चलते रुक गया पवन।
उठते-उठते थम गई लहर, डूबा-डूबा जन-जन का मन ।।
गंगा रोती, यमुना रोती, रोता सागर, रोते निर्झर।
रोते मन्दिर, रोती मस्जिद, रोते गुरुद्वारे गिर्जाघर ।।
रो रही पत्थरों की आँखें, रो रहे आज सब जड़-चेतन।
रो रही मनुजता उसी तरह, जैसे विधवा का बेकल मन ।।
कुछ देर पूर्व ही मचल रही, जो कली गुलाबी खिलने को।
वह सिसक-सिसक कर कहती है, 'मैं चली धूल में मिलने को' ।।
मैं जिस सीने की धड़कन से मिलने को थी इतनी विह्वल।
वह सीना धड़कन-शून्य हुआ, मेरा जीवन होता निष्फल ।।

यह कैसी अशुभ घड़ी जिसमें सब ओर अँधेरा फैल गया।
सन् चौंसठ सत्ताईस मई दो बजे दिवस में सूर्य ढला!!
धरती काँपी, आकाश हिला, हिमगिरि चिल्लाया फाड़ गला—
यह कौन चला? यह कौन चला? यह कौन चला?

चल पड़ा कहाँ यह राजहंस, धरती की आँखों का मोती।
धरती से इसको प्यार रहा, धरती अनाथ होकर रोती॥
यह विश्व-शांति का अग्रदूत, नूतन भारत का निर्माता।
यह मानवता का राजहंस, समता, स्वतंत्रता का दाता॥
यह दीन-हीन का स्वाभिमान, पीड़ित-शोषित की अभिलाषा।
यह नव स्वतंत्र एशिया राष्ट्र के प्राणों की नूतन आशा॥
इसने गुलाब की तरह मनुज की आत्मा को खुशबू दी है।
वासंती सुषमा लुटा-लुटा दुनिया की कड़वाहट पी है॥
जग के संहारक तत्व इसी से सीख रहे थे वह बोली—
जो बोल कभी वे पाते तो जलती न जंग की फिर होली॥
दुनियाँ को स्वर्ग बनाने का सपना आँखों में बन्द किये।
यह वीर जवाहर! नर-नाहर-आँखों को रोता छोड़ चला!!
धरती काँपी, आकाश हिला, हिमगिरि चिल्लाया फाड़ गला—
यह कौन चला? यह कौन चला? यह कौन चला?

रोशनी रोने लगी है

—नारायणलाल परमार

मर गया सूरज हमारा, रोशनी रोने लगी है!

लुट गई है आज धरती, आसमाँ बेचैन-सा है।
नियति ने अपनी कसौटी पर हमें फिर से कसा है॥
धैर्य को भी अब सहारे की फिकर होने लगी है!

आँसुओं की बाढ़ इतनी, आदमी तिनका हुआ है!
जिन्दगी की बाँसुरी में स्वर नहीं, केवल धुँआ है!!
चेतना ही स्वयं अपना हौसला खोने लगी है!

आज हर पत्थर पिघल कर बेसहारे बह रहा है।
समय का यह फूल अपने कंटकों को सह रहा है॥
हर दिशा ग़म की कहानी, हर डगर बोने लगी है!

बन्धु जवाहर

—नटवरलाल स्नेही

बन्धु जवाहर ! तेरा गौरव मुझको भाता है।
इसीलिए तो पद पर मस्तक झुक-झुक जाता है॥

तेरे यश में कीर्ति निहित है मेरे वरणों की,
इसीलिए मैं धूलि बना हूं तेरे चरणों की।
मेरा भाग्य बंधा है तेरे पद की गतियों से,
पर तू अपने भव्य भाग्य का स्वयं विधाता है।
बन्धु जवाहर ! तेरा गौरव मुझको भाता है॥

मेरा अभ्युत्थान नहीं तेरे उत्कर्ष बिना,
वीणा में झङ्कार न कोमल कर के स्पर्श बिना।
वंशी के स्वर मौन, प्यार यदि मिले न अधरों का,
धन्य मुखर होते जब इनमें तू बस जाता है।
बन्धु जवाहर ! तेरा गौरव मुझको भाता है॥

तू सरोज, मैं पङ्क, पिता तो एक सरोवर है,
मैं काजल, तू लौ, प्रदीप ही मेरा भी घर है।
तेरे यश से यशस्विनी है मेरी वाणी, क्योंकि—
तेरी जननी से मेरा भी सुत का नाता है।
बन्धु जवाहर ! तेरा गौरव मुझको भाता है॥

ऐसी नेहरू की लगन, मुक्त वतन का जन-जन

—बृजेश 'माधव'

कैसा वह बाग जो मिट कर भी अमर है अब तक
जिसके कन कन से गुलाबों की महक आती है !

ये गली मौन थीं, गाँवों में उदासी की घुटन,
ये हवा कैद थी, चलती तो बढ़ाती थी तपन ।
ये सभी साज, ये शृंगार, ये यौवन के नयन,
ये सभी जलते, जलाती थी गुलामी की जलन ।।

कैसा वह तेज था, कर्त्तव्य का कैसा दिनकर,
जिसकी यादें—जो सुबह शाम उभर आती हैं !

देखो यह आँख का काजल, ये पाँव की पायल,
कैसी भारती छागल जो कभी भी घायल ।
सूना आनन्दभवन, आ गए तम के बादल,
ये थे गांधी की अहिंसा, पवित्र गंगाजल ।।

कैसा ईमान था इस आदमी के सीने में,
कैसी पीड़ा है जो रह-रह के कसक जाती है !

कैसा विश्वास था, कैसा अटूट संरक्षण,
कैसा विश्राम जहाँ श्रम को मिला आमन्त्रण ।
ऐसी नेहरू की लगन—मुक्त वतन का जन-जन,
कैसे छलके थे नयन, जाब उठे नेहरू के चरण ।।

ये जनम और मरण, मिलते-बिछुड़ते ऐसे,
जैसे दीवार की हर ईंट धसक जाती है !

जिसने वैषम्य के फोड़े थे मिटाए जड़ से,
जिसने मारा था गलत बात को चाँटा तड़ से ।
जिसकी ललकार से अंबर भी दहल जाता था,
भौंह खिचती थी, लहू तन का उबल जाता था ।।

मर के जीते हैं सदा देश पे मिटने वाले,
ऐसी एक बूँद जो स्वाँती की टपक जाती है !

अमृत के पर्याय

—असीम शुक्ल

दृढ़ता में शैलेश और कोमलता में वातास।
सागर से गम्भीर और तुम गुरुता में आकाश।।
युगों युगों तक अक्षर नेहरू, अमृत के पर्याय।
प्राणों के प्रतिरूप हमारे, मात्र हुए निष्काय।।

जिन नयनों में प्रेम, उन्हीं में अरि के प्रति अंगार।
रूप रंग पुष्पों ने पाया है तुमसे साभार।।
राष्ट्र-पुरुष की प्रतिभा से यह राष्ट्र सकल आबद्ध।
आओ स्मृति के सागर में डूबें सब करबद्ध।।

अम्न का दीप

—बेकल उत्साही

(१)

अम्न का दीप बुझा, जग का सहारा टूटा,
हिन्द के चर्खे-मुकद्दर का सिता टूटा।
देख कर जिसमें सियासत ने सँवारी जुल्फें,
बदनसीबी कि वो आईना हमारा टूटा।।

(२)

अब क्या चमन में जश्ने बहारों की बात हो,
रूहे गुलाब ही न रही जब गुलाब में।
अब बेकसों के घर में उजाला करेगा कौन,
जब रोशनी सिमट ही गई आफताब में।।

नेहरू : चार मुक्तक

—देवीशरण मिश्र 'देश'

नेहरू मरा नहीं है, अमर नाम कर गया।
पीकर खुशी से ज़हर, बड़ा काम कर गया॥
दुनिया की लज़्ज़तों को दिया किस खुशी से त्याग,
भारत औ' शान्ति सत्य को सरनाम कर गया॥

हक़ की लड़ाइयों का एक बाँका सिपाही था।
मंजिल कदम थी चूमती जिसके वो राही था॥
जुल्मों ने जिसे हर जगह झुक कर किया सलाम,
तूफाँ में कश्ती खेने का मश्शाक़ माही था॥

दानी ग़जब का था कि दिया दुश्मनों को प्यार।
ज़ुल्मत के पहाड़ों से न खाई कभी भी हार॥
एखलाक था शिकवे ने शिकायत कभी न की।
गुल बन चुका राह में-जिसके हर एक खार॥

था वह अमल कि जिसकी उसूलों को चाह थी।
हिम्मत की ज़माने ने भी पायी न थाह थी॥
कुछ बात ही उसके ज़मीर में अजब थी 'देश'।
हर एक की जुबाँ से जो हुई वाह-वाह थी॥

मानवता के चरणों में

—सत्यप्रकाश 'बजरंग'

स्वयं दूध ने जिसकी काया धोई थी,
कल जिसको चुप देख बदरिया रोई थी।
धरती भी काँप गई, धैर्य डगमगा गया,
कल जब जनपथ पर वह अर्थी ढोई थी॥
सब आँखों से बहती यमुना की धारा,
पटक-पटक सिर पवन रो उठा दुखियारा।

लालकिले का लाल जवाहर,
हाय ! मृत्यु से छला गया !
विश्वशान्ति का उज्ज्वल तारा चला गया !!

नहीं दीखता कोई भी उसका सानी,
नहीं दीखता वैसा कोई वलिदानी।
जिसने हँस-हँस कर दुश्मन-संकट झेला,
पंचशील का था वह अद्भुत सेनानी ।।
राजघाट का कण-कण देख उसे रोया,
गांधी का वह हृदय-दुलारा चला गया !
हाय ! काल के हाथों से वह छला गया !!

सत्ता के हित देखा सब ही जीते हैं,
अमृत तज कर गरल वहुत कम पीते हैं।
किन्तु जवाहर नीलकंठ लासानी था,
उसके विन अब सारे ही घट रीते हैं ।।
हर परिस्थिति को वह अटल चुनौती था,
युग शंकर अजेय ध्रुवतारा चला गया !
विश्व शान्ति का उज्ज्वल तारा चला गया !!

उसके बिन सब पुष्प दीखते हैं सूखे,
उपवन में कलियों के चेहरे हैं रूखे।
कैसे पुष्प चढ़ाऊँ चरणों में बोलो,
मातम छाया, मानो परमेश्वर रूठे ।।
सकल दिशाओं में गुंजित ये हो स्वर है—
दुखिया भारत का रखवारा चला गया !
विश्व शान्ति का उज्ज्वल तारा चला गया !!

जवाहरलाल नेहरू के निधन पर

—जयकुमार 'जलज'

अँधियारा गहरा
आकाश हतप्रभ
भीत हवाएँ सिर धुनती हैं।
रोशनदानों पर
पुस्तक के पृष्ठों पर
फूले हुए गुलाबों
बच्चों के मुख पर
मुख तक आती दूध भरी चम्मच पर
सहसा ढेर ढेर मकड़ियाँ जाला बुनती हैं।
हार गया इतिहास, ज्ञान-विज्ञान पराजित,
नतशिर हैं आशाएँ, आकांक्षाएँ
चिन्तन का फैलाव--दूर हटती सीमाएँ!
सहसा सारा महल आज खण्डहर हो बैठा।
टूट गई जड़
खड़क रहे हैं हम सूखे पत्तों-से।
अभी और कुछ दिन जीना था तुम्हें
अभी बहुत विष था, पीना था तुम्हें!

बच्चों के भविष्य पर अब भी अँधियारा है
बूढ़ी आँखों पर अब भी चिन्ता की जाली
सम अवसर की बात बहस की बात आज भी
कोटि-कोटि कर अब भी है खाली के खाली!
राजमार्ग पर चलता है जुलूस रिश्वत का
अब भी चोरी को व्यापार कहा जाता है
काले पैसे से सफेद दीवारें बनतीं
अब भी यह सब कुछ चुपचाप सहा जाता है।
सीमाओं पर संकट के काले क्षण में भी
मिलावटों से जूझ रहा निर्माण देश का
रातों-रात धनी होने के स्वप्न देखते
लोग समझते है महत्व बस मात्र वेष का।

अर्थ-व्यवस्थाओं की लम्बी-चौड़ी राहें
अब भी रोटी के द्वारे तक पहुँच न पातीं
आजादी की महलवासिनी सब रोशनियाँ
खुद को किसी दिये के तन में बदल न पातीं।
सूखे खेत रहे सूखे के सूखे लेकिन
आजादी का जल बागों में क़ैद हो गया
पैसा बढ़ा, सम्पदा उभरी, सुख भी शायद
लेकिन कौन तिजोरी में किस जगह सो गया!
राजनीति के रथ में कीर्ति जुती फिरती है
खैरातों की उँगली पकड़े हैं प्रतिभायें
बिकता है साहित्य मनोरंजन के हाथों
अनुवादों में डूब रही हैं मौलिकताएँ।
नाच-गान पर्याय बन रहे हैं संस्कृति के
भोजों और क्लबों में सिमटी हुई सभ्यता
चौराहों पर धुरीहीन व्यक्तित्व घूमते
ढूँढे से मिलती न आज निर्भय अदम्यता।
फ़िल्मी गानों की धुन पर सड़कें गति करतीं
अभिनय की पूजा है, है अभिनेय उपेक्षित
बढ़ती भीड़ चीखते ट्रांजिस्टर, सोफ़ा की
करती जाती है अध्ययन का कमरा सीमित।
विशेषज्ञताओं के अपने खूँटे गाढ़े
सहज बोध को लोग भूलते-से जाते हैं
सहज मानवीपन पीछे है, दीन हीन है
आगे पद-पदवी के झण्डे फहराते हैं!

उठो जवाहरलाल, देश अब भी दरिद्र है
उठो जवाहरलाल, देश अब भी भूखा है!
तुमसे भूल हुई—तुम जूझे एक अकेले
वेगवती धारा के सम्मुख नंगा सीना
बलिवेदी के ईसा—से फैले हाथों को
लेकर खड़े हो गये।
तपा हुआ मुख, उठी शिराएँ,
क्षण-क्षण कम्पित डग,

डिगता साहस,
क्रोध भरे झुँझलाए तुमको देखा हमने।
रहे देखते कौतूहल से खड़े किनारे।
तुमसे भूल हुई, तुमने आवाज़ नहीं दी।

सम्मुख खड़े हुए बहरों को देखा तुमने
तुमको भ्रम हो गया कि सब बहरे बहरे हैं।
देख न पाए तुम अग्रस्थों के पीछे हम—
कविता लिखते हृदय,
किताबें पढ़ती आँखें,
आटे भरी अँगुलियाँ।
धूल भरे तन,
फूल भरे मन,
फसल काटते,
सड़क बिछाते,
बाँध उठाते हाथ प्रतीक्षा में बैठे थे!
सहसा तुम गिर गए।
तुम्हारी लाश लिये बैठे हैं हम हाथों में
हम—
जो हर मज़हब के, हर प्रदेश के हैं।
बहरों को पीछे कर, पास खड़े हैं।
उठो जवाहरलाल,
वेगवती धारा अब भी ज्यों की त्यों बहती
अब भी देश दरिद्र, देश अब भी भूखा है!

नेहरू के प्रति

—डॉ० इन्द्रपाल सिंह 'इन्द्र'

आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है।
यादें आकर हमें रुलातीं, आह, अधर पर हास नहीं है॥

उस दिन विहँसी धरा, गगन था हँसा, प्रकृति ने रास रचाया।
निर्झर की तालों के संग-संग विहगों ने संगीत सुनाया॥
पीड़ित भारत माँ का कण-कण आशा से भर कर मुसकाया।
जिस दिन देवि स्वरूपा की गोदी में लाल जवाहर आया॥
मोती का वह आँगन सूना, उसमें हाय, सुहास नहीं है।
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

दोनों की कुटिया में उस दिन सुख ने भी ली थी अँगड़ाई।
गीले नयनों की पलकों पर मृदु सुहास की रेखा आई॥
तमस-कालिमा भेद ज्योति की उज्ज्वल आभा पड़ी दिखाई।
माता के चरणों की बेड़ी शिथिल हुई, खुलने को आई॥
आज मुक्त है यद्यपि, उसके उर में पूर्ण विकास नहीं है।
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

वैभव के पलने में झूले, प्रभुता ने तुमको दुलराया।
मात-पिता की महत् कल्पनाओं ने सुन्दर रूप सजाया॥
शैशव से यौवन के पथ पर मृदुल प्रसूनों पर चढ़ आया।
राजकुमारों-सी शिक्षा पा, जीवन में विकास-फल पाया॥
किन्तु हृदय ने कहा—'अरे, यह जीवन क्या उपहास नहीं है?'
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

क्रन्दन सुना पीड़ितों का, चौंका—'यह अरे विषमता कैसी?'
दास्य-शृंखला की झंकृति से उठी ऊर्मियाँ उर में ऐसी—
जिनसे विप्लव के भावों का वेग उठा, सागर लहराया।
बापू का आह्वान-मंत्र सुन वीर रणाङ्गण में उठ धाया॥
वैभव को ठुकरा कर बोला—"है यह पतन, विलास नहीं है।
जब तक है परतन्त्र मातृ-भू, सुख में कुछ विश्वास नहीं है॥"

जाया, भगिनी, सुता रूप रख, रमा रमाने तुमको आई।
निस्पृह, वीतराग, संन्यासी! क्या वह तुम्हें मोहने पाई?
उसको भी निज पथ-अनुगामी बना दिया ले उर में ज्वाला—
और पिता को भी स्वतन्त्रता-समर हेतु लाया मतवाला॥
कष्टों की झंझा से लड़ता रहा, कहा—'कुछ त्रास नहीं है।'
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

माता के चरणों में जीवन अर्पित किया, कष्ट बहु झेले।
कारावास, दमन, लाठी-डंडों के सहे अनेक झमेले॥
किन्तु अधर पर रही सदा मुसकान, हृदय में अमित उमंगें।
माता के काटे बन्धन, लहराईं सुख-उत्ताल-तरंगें॥
पराधीनता का भारत में कहीं आज आवास नहीं है।
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

भारत के मस्तक को ऊँचा किया, जगत में मान बढ़ाया।
गर्वित मदोन्मत्त राष्ट्रों को शान्ति-सत्य का पाठ पढ़ाया॥
प्रिय स्वदेश के सौख्य और समृद्धि हेतु निज प्राण गँवाया।
राम-राज्य की सुदृढ़ नींव हित अपना तन-मन सभी लगाया॥
तुम से तुम ही रहे, हाय, अब निर्मल मधुर सुहास नहीं है।
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

माँ रोती, हा शान्ति-दूत! अब क्रान्ति-दूत बन करके आओ।
पंचशील के प्राण! देश की प्रभुसत्ता का मान बचाओ॥
सीमा पर दुर्वृत्त शत्रु हैं अपनी-अपनी घात लगाये।
दो प्रकाश की किरण, पुनः आकर जागृति का शंख बजाओ।
सुनने को सन्देश तुम्हारा खड़ी उत्सुका आज मही है।
आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, पर उर में उल्लास नहीं है॥

बापू और नेहरू की याद साथ आती है

—विश्वदेव शर्मा

मूल के साथ ही महाभाष्य भी गया हो ज्यों,
रह-रह कर चुभता है
गांधी के साथ आज नेहरू का अभाव भी।
बापू और नेहरू की याद साथ आती है।
बापू था चित्रकार जिसने रूप-रेखा दी
नेहरू ने खाक़े में रंग कुछ उरेह दिये,
इतना है घुला-मिला योगदान दोनों का,
दोनों मेघों ने यों बहुरंगी मेह दिये।

वर्तमान भारत है किसका साकार स्वप्न—
कठिन यदि बताना है, कठिनतर है समझाना !
ताना यदि गांधी थे, बाना बन नेहरू गये,
भारतीय जीवन की चादर यों बुनी गयी !
साँचा थे गांधी जी, माटी थे भारतीय,
जिनसे नेहरू जी ने मूर्तियाँ गढ़ीं नयी।
श्रेय कहो किसका है : साँचे का ? माटी का ?
कुंभकार के कर का या कुंभकारिता की,
सदियों से आती हुई प्रौढ़ परिपाटी का ?
कठिन यदि बताना है, कठिनतर है समझाना !
निगेटिव, एनलार्जमेण्ट दोनों ही पृथक् हैं
दोनों का अभेद किन्तु जाना-पहचाना है,
बीज और अंकुर में कुछ ऐसा रिश्ता है
अभेद हो न सत्य, किन्तु भेद भी बहाना है !
मूल और अनुवाद दोनों ही नहीं रहे !
किन्तु अमर हो गयी हैं गाथाएँ किताब की,
प्रगतिशील भारत है शोभा औ' सुगंध सना,
चर्खे को ढँके हो ज्यों पांखुरी गुलाब की !
प्रगति-चक्र चलने में, पूस की गुलाबी-सी धूप के फिसलने में,
पाटल की मदमाती गंध के मचलने में
गांधी और नेहरू में कौन अधिक दिखता है ?
कठिन यदि बताना है, कठिनतर है समझाना !
दोनों युग-पुरुषों के लिये श्रद्धा नतशिर है,
आलोचन हतप्रभ है, निन्दा है हतज्ञाना।

जय जवाहर

—राजकुमार सुमित्र

सत्ताइस मई की मनहूस दोपहरी
कुहराम से भर गई काल की कचहरी।
आह ! वो रात-सा दिन, वो साँझ-सी दोपहर,
जब सुनी गई धरती के 'ध्रुव' के टूटने की ख़बर।
दिलासा दे गया दगा—और लगा,
जैसे गर्म सीसा पड़े कानों में
अनदेखा अनीदार तीर चुभे प्राणों में !
सहसा न विश्वास हुआ, ऐसा अट्टहास हुआ—
जैसे कोई शह को मात कहे
दिन को रात कहे
या कोई असम्भव बात कहे—
कहे कि सारा सूरज जल गया है,
पूरा का पूरा हिमालय गल गया है !
माना कि ऐसा हो सकता है
पर क्या जनता का प्यारा जवाहर खो सकता है ?
मुझे तो लगता है,
कहीं कुछ भी गलत नहीं : सब ठीक है।
क्योंकि 'नेह की रू' नेहरू सबके नजदीक है।
जीवन तो क्रम है : मरण केवल भ्रम है।
तो जवाहर हरसू है, वह हरदम हमारे पास है
जैसे पैरों के नीचे धरती या सर के ऊपर आकाश है !
दुनियाँ के दिल में उसकी मूरत है
जो बेइंतिहा खूबसूरत है
लेकिन उसे बुत परस्तों की नहीं वतन-परस्तों की जरूरत है !
उसके लिये रोना तो जहालत होगी
यों ही रोयेंगे तो मुल्क की क्या हालत होगी ?
इसलिए घर और बाहर—होने दो 'जय-जवाहर।'

मौसम के मुताबिक ढलो—
उसके उसूलों पर चलो।

राहें भरम गई हैं

—हलधर

दिन का सूरज अस्त हो गया, खोये चांद सितारे,
चली देश की नाव किनारे लगकर फिर मँजधारे।
सहमा-सहमा अमन, शान्ति के प्रहरी लौटो आओ,
लंगर छिन्न-भिन्न वोझिल-सा थकी-थकी पतवारें॥

तुमको परसे बिन मुरझाया फूलों का यह राजा !
नयन-नयन प्यासे, किरनों के ठगे-ठगे अँधियारे !!

श्री चरणों की दासी बनकर विधवा रही सुहागिन,
किन्तु न पलक उठाई पल-भर आँख-आँख वैरागिन।
बैठ त्याग की कौंध दिशा का कोना-कोना परखा,
अपने और पराये की डँस पाई जिसे न नागिन॥

शोला बनकर जिया जगत में जो जन जन जीवन हित,
वही जवाहरलाल अकेले जायें देश पराये !

मोह-लोभ जिसके विवेक का नव-नव रहा पुजारी,
दुखियों के दुख-दर्द-चुभन में साँसे सहित सवाँरी।
पंचशील रोए सिसकारे तुम सा नायक खोकर,
राष्ट्रसंघ चीत्कारे सिर धुन, बनकर आज भिखारी॥

ओ ताजों के ताज ! प्यार ने तुमसे सबक लिया है,
प्रगतिपंथ में राजनीति मुँह आँचल दे बिलखाये !

जीनें की सौ वर्षो साधें यम से छली गई है,
साहस की दुहिता की कसमें बिसुरी मौन भयी है।
तुमको कभी न देख सकेंगी ललक-ललक अकुलाईं,
मनुहारें थक गई, भरम की राहें भरम गई हैं॥

अभी सपन सब रहे अधूरे, पूरा नहीं हुआ कुछ,
खण्डित व्रत की कसक कसकती, हूलें चुभ-चुभ जायें !

था निराला एक लाल

—अरविन्द

इस निराली सरजमीं का था निराला एक लाल,
हिन्द क्या सारे जहाँ में थी नहीं जिसकी मिशाल !
शांति लेकर गांधी की, गौतम का वह प्यारा संदेश,
गूँजता था दिलों में, सारा जहाँ था उसका देश !

धड़कता था धमनियों में, दिलों का वह शहंशाह,
पोंछता हर आँख-ग्रौर इंसानियत थी उसकी राह !
गंध बन जन-जन में गम का वह गुलिस्ता की तरह,
राह दिखलायी जहाँ को ढक फरिश्ते की तरह !

थे निराले रंग उसके, थी निराली उसकी शान,
कभी बन जाता हिमालय तो कभी अकबर महान् !
ऐसे मायावर को पा इन्सानियत को नाज था,
ताज से चिढ़ थी-मगर सारे दिलों का ताज था !

नाम उसका था जवाहर, वैसा ही रग-रग में आब,
रोशनी ऐसी थी उसकी शरमा जाए आफताब !
थी निगाहों में लचक, लफ्जों में जादू, बाँकपन,
जिन्दा दिल इन्साँ, मगर फूलों से भी नाजुक बदन !

बन तिरंगा, आस्मां में जाके लहराया कभी,
बमों, जुर्मों, गोलियों से हँसके टकराया कभी !
शान्ति, समता, एकता की नज्म गाता था सदा,
'एक है अपना वतन' नारे लगाता था सदा !

हँसी आयी लबों पर तो हँसा चौवालीस करोड़,
दर्द आया. आँख में तो मर मिटा हर मोड़-मोड़ !

यह अजब इन्सान, माँ का लाड़ला वह लाजवाब,
झूम उठे मुर्दा दिल भी—ऐसा था उसका शबाब !

करोड़ों के हृदय सम्राट्

—दामोदर शर्मा

तुम करोड़ों के हृदय-सम्राट थे पंडित जवाहर,
शत्रुओं तक ने तुम्हारी मृत्यु पर आंसू बहाए।
आज सारा विश्व तुमको दे रहा श्रद्धांजलियां,
जिन्दगी-भर तुम गुलाबों की तरह से मुस्कराए ।।

आज मानवता जगत की आँख में आँसू लिये है,
विश्व भर के बन्धु थे तुम यह प्रमाणित हो गया है।
आज भारत के निवासी हम अनाथों से खड़े हैं,
देश का सबसे बड़ा अनमोल मोती खो गया है।।

वीर वह है, जो विनाशी युद्ध के सैलाब रोके,
वीर, जो इन्सानियत को मृत्यु के मुख से बचाले।
दासता से मुक्ति दे जो, कौन है उसके बराबर,
वीर, जो संसार के विष को स्वयम् पीकर पचाले ।।

सृष्टि का संहार करने होड़, शस्त्रों की लगी थी,
सभ्यता का खोल ओढ़े क्रूर हिंसक पशु खड़े थे।
और अपने अणुबमों से सागरों को मथ दिया था,
तुम अहिंसा का लिये व्रत मध्य में उनके खड़े थे ।।

'स्वर्ण का मृग' सामने आकर तुम्हे ललचा न पाया,
राजनैतिक पंडितों की बाजियां तुमने उलट दी।
होड़ सी निर्माण की चारों तरफ दिखने लगी है,
मार्ग दर्शन ने तुम्हारे, देश की काया पलट दी ।।

देश पिछड़ा रह न जाए, आधुनिकता के पुजारी,
जो गुलामी के बचे थे दाग, उनको धो रहे थे।
अब न भावी पीढ़ियां निर्भर विदेशों पर रहेंगी,
वह प्रगति के बीज भारत-वर्ष में तुम बो रहे थे ।।

अब हमारा प्रण यही होगा, मनुजता के मसीहा,
देश के निर्माण में अपना सभी कुछ दान देंगे।
मार्ग जो तुमने दिखाया है हमें, उस पर चलेंगे,
और अपने देश के सम्मान के हित प्राण देंगे।।

हे गीतकार

—केवल गोस्वामी

हे गीतकार, झंकृत कर ऐसी गीत आज
जिसको सुनकर झूमें धरती पाताल गगन।
हे शिल्पी! दे ऐसी मूरत कोई जग को
हर कोई जिसको मुक्त कण्ठ से करे नमन।
हे चित्रकार! ऐसी कोई तस्वीर बना
अनुयायी हो जाए जग जिसका देख चलन।
हे वादक ऐसी तान छेड़ कोहे सुमधुर
घर घर जिसको संदेश सुनाती फिरे पवन।
हे माली! ऐसा फूल खिला दे उपवन में
पाकर जिसकी सुरभि अघाए कभी न मन।
हे माँ! ऐसा कर लाल कभी पैदा जग में
सदियां दोहराती फिरें कि जिसका सदा वचन।
हे नेता! तुमको काम है यदि काम कभी
सच्चे अर्थों में केवल वीर जवाहर बना।
हे गीतकार! झंकृत कर ऐसी गीत आज
जिसको सुनकर झूमें धरती पाताल गगन।

मानव का अवतार

—माणकचन्द रामपुरिया

कहाँ मिलेगा, ढूंढ रहा क्या-ऐसे यह संसार?
पंचतत्व में लीन आज है - मानव का अवतार!
गगन बताता-मुझ में ढूंढो, उसका शब्द मिलेगा।
धरती बोली- गन्ध यहाँ है, सूंघो, हृदय खिलेगा।।
पानी बोला-रस है मुझ में, आओ प्यास बुझाओ।
पावक बोला-तेज मुझो में, आकर हृदय जुड़ाओ।।
चला पवन उनचास उफन कर, बोला-स्पर्श यहां है।
एक न कण इस पावन भू का ऐसा, नहीं जहां है।।
भारत बोला-आज कहूं क्या, स्वयं भविष्य कहेगा।
भारत का बच्चा, बच्चा तक नेहरू बना रहेगा।।
लहरायेगा सबके दृग में नये लोक का सपना।
उज्ज्वल भव का रूप सुनहला, चित्र रहेगा अपना।।
जहां कहीं भी सत्य-न्याय का गुंजे स्वर कल्याणी।
सभी कहेंगे-यही, यही है जननायक की वाणी।।
सभी जगह होंगे उसके ही सद्गुण भू पर अंकित।
हृदय-हृदय के सिंहासन पर, होगा सदा प्रतिष्ठित।।

शोक : रूपायन टूट गया

—रघुनाथ प्रसाद घोष

कांपते अंधा समय
गंध के गाँव जले!
एक उजाले का रूपायन टूट गया
दर की शून्य-परात
स्वप्न-वन छूट गया!
झुकी उम्र की धूप
रंग के पाँव गले!

सूंघ गया है प्रश्न-चिन्ह के सूनेपन को
दुहर गया है जाल छन्द के टूटे मन को
नसें ऐंठती हुई
धुआँयी छाँव तले !

दर्पण हुआ उदास, काँपती-कुचली लौ में
अवचेतन का दंश चढ़ गया उठती पौ में
दिशाहीन - सी दिशा
टापती, ठांव पले !
कांपे अंधा समय,
गंध के गाँव जले !!

एक हस्ताक्षर अकेला

— नीलम

धान खेतों में उतरती कोहनूरी भोर जैसी,
याद तेरी चेतना की घाटियों में डोलती है।

आँधियों में उड़ रहे आकाश को बाँधे हुए सा।
आस्था की डगमगाती भूमि को साधे हुए सा।।
तू गुलाबों के चिटखते रंग से जो लिख गया है—
आज उस इतिहास का हर पृष्ठ ज्योतित है दिये सा।।

जब धुआँ सारे क्षितिज को स्याह हथकड़ियाँ पिन्हाता,
एक चिड़िया हर दिशा के द्वार-सांकल खोलती है।

तैरती है गन्ध तेरी आज भी पूरे चमन में,
है कहाँ इन्सानियत का दोस्त तुझ जैसा भुवन में।
दो ध्रुवों के बीच धरती की पुतलियों का सितारा—
जी रहा है तू फरिश्ता सा अभी मेरे वतन में।।

एक गौतम और जन्मा रूप धर तेरा धरा पर,
लाख जीभों से सदी जिसकी कहानी बोलती है।

तख्त से तूने उठाकर ताज जनता को पिन्हाया,
धूल-माटी को पहाड़ों के गले मिलना सिखाया।
तोड़कर अन्धी गुफाएँ मुक्त धरती के सहन में—
हर मनुज की आँख में तूने नया सूरज उगाया॥

जिस सुआपंखी फसल पर नाग कन्याएँ कुपित हैं,
नीलकंठी रागिनी तेरी वहाँ रस घोलती है।

एक हस्ताक्षर अकेला, सब कतारों से अलग तू,
उंगलियों में धार बाँधे, सब किनारों से अलग तू।
बुर्जुआ सीमान्त से आगे सिंदूरी-गूँज जैसा—
बंजरों में फूल महकाता, बहारों से अलग तू॥

मूलधन तूने दिया जिस पर नई पीढ़ी खड़ी है,
हर नज़र तेरे बकाया कर्ज को अब तोलती है।

हे प्रजातंत्र के उद्घोषक

— महेशचन्द्र गुप्त

हे शांति-अहिंसा के प्रहरी, जन-जन के मन के इष्ट प्राण।
बापू की तुम्हीं विरासत थे, चल दिए कहाँ नेहरू महान्॥
स्वातंत्र्य युद्ध के सेनानी, हे प्रजातंत्र के उद्घोषक।
झकझोर बेड़ियाँ दासी की, उन्नयित किया माँ का मस्तक॥

'भारत की खोज' तुम्हीं ने की, तुमने भारत निर्माण किया।
तुम वर्तमान में बँधे नहीं, तुमने भविष्य पर ध्यान दिया॥
हे सार्वभौम, दर्शी त्रिकाल, तुम देश काल से ऊपर थे।
तुम नहीं हमारे ही केवल, तुम युग दृष्टा, जग स्रष्टा थे॥

तुमने ही हे कलियुगी कृष्ण, चीनी कंसासुर ललकारा।
वेदी पर शांति अहिंसा को, तुमने कर्तव्य नहीं वारा॥

हे भारत रत्न, 'जवाहर' तुम, थे 'लाल' अमर भारत माँ के।
जाते हो जाओ, 'नेहरू' सदा, यश-ओज तुम्हारा ही दमके॥

स्वर्ग में जवाहर

— रुद्र काशिकेय

चकित फरिश्ते चौंक-चौंक कर खड़े हो गये,
क्या कोई आ गया नया फिर देवदूत है ?
पा प्रकाश का पानी जिनके नयन धो गये,
वे बोले पहचान कि भारत का सपूत है !
नंदन-वन कुसुम, फूल गुलशने हरम के,
चुन-चुनकर पंखुरियाँ पथ में बिछायी गयी ;
कोने कोने देवलोक के उनसे गमके,
किन्नरियां भी दल-बादल की बुला ली गयीं।
वीर जगत्—प्राचीर जवाहर धीर स्वर्ग में,
ज्योंही पहुंचे; सुनी दिव्य ध्वनि शुभ कल्याणी—
"क्या कर लौटे वहाँ वीर ! वर्गो पवर्ग में ?"
उत्तर में सुन पड़ी कड़ी नाहर की वाणी—
"शैतानी सैलाबों को धमका आया हूं ।
तेरी धुंधली दुनियाँ फिर चमका आया हूं ॥"

वह साकी-ए-अंजुमन कहाँ है

— मसूद अख्तर जमाल

वही है अब भी वतन की रौनक मगर वह नाजे वतन कहाँ है ?
वही तबोताब है चमन में, मगर वह जाने चमन कहाँ है ?
कहां है ऐ मौसमे बहारां वह खुश खरामे बहिश्त अरमां,
सबा के दामन में थी जो पिनहाँ, वह निकहते पैरहन कहाँ है ?
नजर थी जिसकी पयोम साहिल, नफ़स था जिसका नवोदे मंजिल,
वह महरमे सोज ओ साजे महफिल, वह पैकरे इल्मो फन कहाँ है ?
हर इक सुखन बे नजीर जिसका, हर इक कदम नूए-शोर जिसका,
जो कर गया कैसरी दिलों पर, वह तीशागर कोहकन कहाँ है !

जे शर्क ता गर्व ताव इम्कां, रहो है कल तक जो नूर अफ्शां,
वह गैरते सद हजार अंजुम, जबोने जुल्मत शिकन कहां है ?
सनमकदे में कोई है ऐसा जो हकपरस्तों के नाज उठाये,
जो पासदारी करे हरम को बताओ ऐसा ब्रहमन कहां है ?
वह हुस्न लगजिस में अब कहां है, निसार दुनिया ए होश जिसपर,
फिदा जहाने शऊर जिसपर, जुनु में वह बांकपन कहां है ?
चिरागे जामो सुबू बुझा दो, सुराही-ए-मुश्क-ओ-बू हटा दो,
वकार था जिससे मैकदे का वह साकी-ए-अंजुमन कहां है ?
जमाल क्या राजे दिल कहूं मैं, यही है बेहतर कि चुप रहूं मैं,
सुखन की थी जिससे कद्रो कीमत, वह नुक्ता संजे, सुखन कहां है ?

नेहरू जी की याद में

— हफीज बनारसी

कुछ ऐसा हुस्न रखती थी हमायते कामे
लबे तारीख दोहराता रहेगा दासतां तेरी।
तुझी पर खत्म है तेरा हर एक अन्दाजे रानाई,
हजारों हैं मगर उनमें कोई खूबी कहां तेरी॥
अरब हो या अजम हर अन्जुमन में तेरा मातम है,
मेरे नेहरू हर इक बज्मे जहां है मदद खां तेरी॥
तुझे जाना था लेकिन ऐसे आलम में न जाना था,
रुलाएगी हमें बरसों ये मर्गे नागहां तेरी।
जमाले सुब्हें नौ इक परतवे हुस्ने नजर तेरा,
हरीफे जुलमते दौरां जबीने जौफिशां तेरी॥
अमल की शाहराहों में चरागां कर दिया तूने,
बुढ़ापा था मगर किस दर्जा हिम्मत थी जवां तेरी।
किसी दुशमन से भी तूने कभी नफरत न फरमाई,
मुहब्बत के सिवा कुछ भी न थी तब अखां तेरी॥

मुसल्माँ हो कि हिन्दू हो मगर ऐ पीरे मैखाना,
हर इक मैकश पे यकसा थी निगाहे महरवाँ तेरी।

तुझे रोते हैं बुतखानों में अहले बुतकदह अब तक,
हरमवाले सुनाते हैं हरम में दास्ताँ तेरी।
दरखशाँ है तेरे खूने जिगर से शमये आजादी,
है ममनने करम पे अजनते हिन्दोस्ता तेरी।
पशेमा है हर इक जंग आजमा आज अपनी हरकत पर,
मुबारक किस कदर थी कोशिशे अमनो अमाँ तेरी॥
अभी मंजिल तो है आसाइशे मंजिल नहीं हासिल,
जरूरत थी अभी हमको अमीरे कारवाँ तेरी॥

तेरे नक्शे कदम पर चलने का हम अहद कहते हैं,
न जायेगी कोई कुर्बानी हरगिज रायगाँ तेरी॥
तुझे मुर्दा समझना भी तेरी तौहीन करना है,
अमर है तू जवाहर है हयाते ज़ावेदाँ तेरी।

ऐसा दीपक कहाँ मिलेगा

—राधेश्याम पाठक

त्याग, तपस्या, सेवा-संयम, यश, वैभव, गौरव, गरिमा, गुन।
ये सब आखिर में दो मुट्ठी भस्म बन गये बिखराने को॥

तुमने उधर कफन ओढ़ा, इधर बुझ गये अनगिन दिये।
हम जीवित निर्जीव बन गये, तुम तो मर करके भी जिये॥
हम पर फैल गया अंधियारा, चले गये तुम बन उजियाला।
धुँआ धुन्ध, घुटन कितनी है, पीने वाला क्या क्या पिये॥
कितना धुंध लाया है दर्पण, कितना फैल गया सूनापन।
कितने काँटे उभर रहे हैं अब दामन को उलझाने को॥

तूफानों में जाने कैसे तुमने ये सब दीप जलाये।
भूले भटके इन्सानों के, एक राह पर कदम मिलाये॥

एक फूल के मुरझाने से लगता है वीरान चमन क्यों ?
समता, शान्ति, शील, सुन्दरता ने क्यों आँसू आज बहाये ।।
पूरब पश्चिम के मृदंग की पंच शील के जलतरंग की,
गूँज कह रही रोने वालो, याद करो उस दीवाने को ।।

दृष्टि हो गयी धुंधली धुंधली, स्वप्न हो गये पथ-भूले से ।
भारतवासी गिरे अचानक चढ़ काफी ऊंचा झूले से ।।
चूर चूर हो गया हमारी सहज सिद्धियों का सम्मोहन,
जिसके बल पर फिरे जगत में हम गर्वित फूले फूले से ।
निठुर हुआ सौभाग्य विधाता, टूट नहीं सकता यह नाता ।
गीले स्वर ही साथ रहे हैं, अब प्राणों के बहलाने को ।।

हर उत्सव, हर समारोह का स्वाद मिल गया मीठा मीठा ।
अमलतास गुल मोहर गुलाबों का सौंदर्य हो गया फीका ।।
बन्द हो गया चलता फिरता बातें करता वह विद्यालय ।
जिससे हमने तुमने सबने, जितना चाहा उतना सीखा ।।
बहुत बहुत रोयीं भाषायें, चकरायीं चिंतित आशायें ।
ऐसा दीपक कहाँ मिलेगा, जग के हित में जल जाने को ।।

शान्ति दूत का महाप्रयाण

ताराचन्द पाल बेकल

लगी चिता में आग, धुआँ बन फैली घोर निराशा ।
मिट्टी के जीवन की सुलझी, हर उलझी परिभाषा ।।
धूम्र रेख पर उसके यज्ञ का बनता गया नमूना ।
लगा सभी को उजड़ा कानन, विश्व हुआ है सूना ।।
मंत्रों को पढ़ बड़े पुरोहित, घी सामग्री डाली ।
कंचन काया जली चिता में ले चंदन की लीला ।।
मृदु गुलाब के रंग-बिरंगे नव सुमनों की माला ।
जली साथ ही शांति दूत के, देकर नव्य उजाला ।।

मिली ज्योति से ज्योति प्रवर की और पानी से पानी।
गाएगा इतिहास युगों तक उसकी अमर कहानी।।

भस्मी भूत हुई लखते ही देह सजीली क्षण में।
व्याप्त हुआ संताप अतुलतम धरती के कण कण में।।
विश्व शांति का अमर पुजारी वह गांधी का चेला।
चला गया नव ज्योति दिखाकर जग में आज अकेला।।
जिस मिट्टी से बनी देह, अब हुई उसी में लय थी।
धरा, गगन के छोर छोर पर, मानवता की जय थी।।
कर्म भूमि पर लिखकर अपने अंतिम क्षण का लेखा।
लीन हुआ नर-कृष्ण लोक में, रवि ने झुककर देखा।।

गीता के सुश्लोक स्वयं में आज हुए ध्रुवध्यानी।
गाएगा इतिहास युगों तक उसकी अमर कहानी।।

पूछ रहा, है संगम रोकर यमुना आँखें खोलो।
पूछ रहा है तीर्थराज अब दिल्ली वालो बोलो।।
हमने तुमको दिया जवाहर हँसता औ मुस्काता।
हमने सौंपा लाल सलोना दमक-दमक दमकाता।।
आज हमारे जीवन की निधि हमको तुम लौटादो।
चला गया जब संबल हो तो कैसे जिएँ बतादो।।
क्या इसदिन के लिए दिया था हमने फूल चमन का?
क्या इसदिन के लिए धरा था सिर पर भार वतन का।।

सुनकर रोता हृदय मसोसे, हा यमुना का पानी।
गाएगा इतिहास युगों तक उसकी अमर कहानी।।

मिला सत्य से सत्य सभी ने देखा सबने जाना।
मिला शान्ति से शान्ति सदन का प्रहरी, सबने माना।।
मिला जवाहर जा मोती से लाँघ परिधि की रेखा।
मिला व्योम से, व्योम रत्न जा सबने ऊपर देखा।।
मिला धर्म से धर्म, त्याग तप औ फूलों से लाली।
दे जन जीवन को नव चेतन मानवता का माली।।

वसुधा के कर शांतिदीप दे जग के भ्रम को तोड़ा।
जग का वन कर रहा, कहा जो पूरा करके छोड़ा।।

दी दुनिया को सहन शक्ति की उसने अमिट निशानी।
गाएगा इतिहास युगों तक उसकी अमर कहानी।।

अथनिर्वाण न्यास

अंग देवी—

इस आधुनिक भारत के (जो कि मंत्र है) मानवान् गांधी ऋषि थे—
गणतंत्र अनुष्टुप् छन्द है, ।
श्री नेहरू मन्त्ररूप भारत के भी मन्त्र थे,
अन्तरात्मा थे।
आसेतु हिमालय की अनेकान्त प्रज्ञा वीज है,

सब धर्मो-मतों को ग्रहण करना,
समदर्शी भाव से सहावस्थान में रहना यहाँ की शक्ति है।
मैं तुम्हें सब पापों से, उभय युद्धों से मुक्ति-शान्ति दूँगा।
देता हूँ—यही कीलक है।

जो मानव थे, मन्त्र थे, शान्ति के ऋषि थे,
गुलाब के ऋषि थे :
गणतंत्र-गगा के अवशिष्ट भगीरथ थे।
आज श्री नेहरू का प्रथम एवं पुनीत श्राद्ध दिवस है।

आज विश्व शोकाहत है,
उनके वंशज भी शोकाहत हैं।।
ऐसे में कर्ण संकल्प उत्थित हो रहे हैं :

यहाँ को सामाजिक निद्रा भंग हो —
आर्थिक मैथुन का नियोजन हो :
राजनीतिक भय का प्रशमन हो ! !

और हम सब के सब आधुनिक भारत के मन्त्र का अनुष्ठान करें —
उनकी स्वर्गासनासीन सिद्धि से द्विफल प्राप्त करें ......
ओम् नमो-नमो नेहरू। ओम् नमो-नमो नेहरू॥ ओम् नमो नमो !!

देवपुरुष भी तुच्छ दीखते

—रमाकान्त आजाद

तुम चले गये, तो चला गया ऋतुराज,
साज-आवाज-बुलन्दी चली गई !
बुझ गई अलौकिक ज्योति।
बाँझ हो गई शाम
लग गया ग्रहण जैसे सूरज को !

हर अन्तर में समा गया फिर शून्य —
दिशाओं का विस्तृत चौराहा ;
जैसे विवेक पर जड़ता का अधिकार हो गया।
या रोते शिशु के तप्त भाल से,
हाथ उठ गया युवा बाप का !
फटी रह गई दोनों आँखें —
अब जन जन की कौन सुनेगा ?
किस पर हम, सब गर्व करेंगे ?
निर्भय किसकी छाँव चलेंगे ?

किसकी मुस्कानों में
इतना आकर्षण हैं !
ठगे ठगे रह जाएँ सभी हम !
एक नही व्यक्तित्व दीखता —
भारत में क्या, विश्व सदन में —
था जैसा व्यक्तित्व तुम्हारा !
देव लोक के वर्णित सारे देवपुरुष भी,

तुच्छ दीखते —
जब आता हैं उतर तुम्हारा दिव्य रूप —
इस रूप-पिपासे युगल नयन में,
मन के इस चिर शून्य सदन में !

अनिर्दिष्ट घाटियाँ

जितेन्द्र नाथ पाठक—

ओ जवाहर अब तुम नहीं हो
आदमी का दिल दुखी है
उसका एक बहुत खूबसूरत सपना बेपनाह है
किन्ही अनिर्दिष्ट घाटियों में
उसकी खोई खोई निगाह है

एक बारगी ऐसा हुआ कि
बूढों का जवान छिन गया
और बच्चों का बूढ़ा चाचा
सभी बहनों का भाई छिन गया
सचमुच कितनों की वाचा
अतीत की आँखें अंधी हो गई हैं
और भविष्य का कलेजा धड़क रहा है

लेकिन आसमान खुश है
कि उसे एक बहुत प्यारी गंध
एक निश्शेष हो गई जिदगी की अवशिष्ट गंध मिली
कि शायद कोई नई गंध उठे !
रत्नाकर खुश है
कि उसे एक ऐसी भस्म मिली
जिससे शायद कोई नया रतन निकले ।

हवा खुश है
कि उसे एक बीत उद्यान की समूची खुशबू
सिर्फ उसे ही ढोने के लिए मिली
कि शायद कोई नया उद्यान खिले !
धरती खुश है
कि उसके हर कैद से टकराने वाला उसका त्राता
उसमें ही आ मिला
कि शायद कोई नई फसल उगे !
स्वर्गस्थ शहीदों की आत्माएं खुश हैं
कि उन्हें उनका बिछुड़ा भाई मिला
कि शायद कोई नया शहीद जगे !

किन्तु यह भी सच है
कि दिलेरी अब भी उठेगी-उभरेगी
लेकिन दिलेरी को ऐसा दूल्हा नहीं मिलेगा ;
शान अब भी दिखेगी-मुसकराएगी
लेकिन हर शान जिसकी दुल्हन बन जाए
ऐसा शानी नहीं मिलेगा ;
सचाई अब भी जगेगी-जीतेगी
लेकिन उसे ऐसा शौहर नहीं मिलेगा ;
जौहरी को रतन तो बहुत मिलेंगे
लेकिन ऐसा जवाहर नहीं मिलेगा !

जनगण-मन-अधिनायक

डॉ० ओम्प्रकाश दीक्षित

शान्ति दूत ! संस्कृति उन्नायक !
जय हे जन गण-मन-अधिनायक !
राम, कृष्ण, गौतम, गांधी की पुण्य धरा पर जन्म तुम्हारा।
विचलित जीवन जलयानों का पथ निर्देशक ज्यों ध्रुवतारा ।।
एक व्यक्ति में स्वयं राष्ट्र तुम श्रेयस पंचशील-परिचायक !

लहर लहर सागर की अंकित, सतस अहिंसा से कर डाली ।
गगनाङ्गण के वाल अनिल की यश-सौरभ से भर दी प्याली ।।
युग को नव सन्देश दिया हैं तुमने भारत भाग्य-विधायक !

रावी-तट की शपथ, मर्म था मानो कर्म योग गीता का ।
स्वतन्त्रता का पाना, जैसे लंका से लाना सीता का !!
शत्रु सशस्त्र पराजित थे जब राघव उठे विना धनु-सायक !

कमलापति ! स्वातन्त्र्य यज्ञ की पूर्णाहुति में 'कुल' दे डाला ।
उत्तर-दक्षिण भेद मिटाकर भाव-सूत्र में गूँथी माला ।।
"है आराम हराम" बताया, तुमने हे श्रम के गुण गायक !

विदा हुए तुम अखिल विश्व ने आँखों से गंगाजल वारा ।
सिसक रही है भारत माता, रोती पूत त्रिवेणी धारा ।।
यमुना का उर दग्ध हुआ है, श्याम गये शीतलता दायक !

इस युग का इतिहास लिखेगा मुख्य पृष्ठ पर नाम तुम्हारा ।
भावी सन्तति कहा करेगी "चाचा नेहरू" अमर हमारा ।।
यहाँ प्राण था वह जनता का और स्वर्ग में है सुरनायक !

ज्योति-पुरुष, जय हे

—सुरेश दुबे 'सरस'

मानवता के पावन पथ के अविचल पथिक निरामय हे !
पंचशील की महाज्योति-से ज्योतित ज्योति-पुरुष, जय हे !!

शान्ति, एकता, समता, ममता प्रीति-नीति के अनुरागी ।
पा विराट व्यक्तित्व हुए हम भारतवासी बड़भागी ।।
गागर में सागर की गरिमा, सजग सिंधु-स्वर संचय हे !
पंचशील की महाज्योति से ज्योतित ज्योति-पुरुष, जय हे !!

निर्विकार,हिम-शृंग-समुन्नत उर, विचार प्रिय जलज धवल ।
नवयुग के हुंकार, शान्ति के दूत अभूत, महान प्रवल ।।

जयति जवाहरलाल कि तुम रवि-ज्वाल-पुंज-निधि अक्षय हे !
पंचशील की महाज्योति से ज्योतित ज्योति-पुरुष, जय हे !!

याद मन में पल रहा है

—विद्याभूषण मिश्र

तुम नहीं हो पर तुम्हारी याद मन में पल रही है।
कौन छीनेगा उसे जो ज्योति उर में जल रही है॥

तुम जले ज्यों साधना में आरती का दीप जलता।
तुम खिले ज्यों उलझ करके कंटकों में फूल खिलता॥
तुम उगे ज्यों भानु हँसकर प्राण का रस बाँट जाता।
तुम बढ़े जैसे कि निर्भर से विजन है सृजन पाता॥
चेतना की आज पगडंडी सिसक कर रो रही है।
तुम नहीं हो पर तुम्हारी याद मन में पल रही है॥

टूटकर भी सुमन यश के विश्व-वन में मान पाते।
याद में अब भी करोड़ों भ्रमर मधुरिम गान गाते॥
आँसूओं को भर उषा है हास दुहराती तुम्हारा।
फरफरा करके बुलाता ध्वज तिरंगा है हमारा॥
योजनाओं के नयन से आज पीड़ा ढल रही है।
तुम नहीं हो पर तुम्हारी याद मन में पल रही है॥

अब झुकाकर शीश नगपति याद प्रिय की कर रहा है।
समय का रथ ठिठकता-सा कर्म-पथ पर बढ़ रहा है॥
उलझनों की नागिनें फुफकारना क्यों चाहती है!
नेहरू की बीन क्या वे आज सुनना चाहती हैं?
नव व्यथा की कोकिला दुखभरित स्वर दुहरा रही है।
तुम नहीं हो पर तुम्हारी याद मन में आ रही है॥

उड़ गये तुम नीड़ तजकर, गूँजता पर स्वर तुम्हारा!
क्यों न सिसके गीत कवि का रुदन दुर्दिन का सहारा!!

एक स्वर था, पर हजरों मौन का स्वर बाँटता था !
एक दीपक से हमारा तम निरंतर काँपता था !!
आज लहरों के थपेड़े नाव सहती जा रही है !
तुम नहीं हो पर तुम्हारो याद मन में आ रही है !!

एक सूरज की मौत

—नर्मदाप्रसाद त्रिपाठी

आसमान की आँखें डबडबायी हुयी
हवा किसी एक गुनहगार औरत की तरह
दबे पाँव निकल जाती है !
जाने क्या हो गया है
दुनिया के इन तमाम लोगों को
जैसे कि अपने ही घर में लगी आग को
देखते हों लोग भौचक्के से !
ये भरी दुपहरी में
कैसे उजाले की रफतार रुक गयी,
अभी अभी
मुझसे किसी ने कहा है कि —
सूरज की मौत हो गयी !

सामने सोया पड़ा है —
पूरा का पूरा एक युग
सीने में गुलाब की कली सजाए !
नेहरू ! तुम प्रतीक थे —
कैक्टस की उस सभ्यता के बीच
महकती हुयो गुलाबी आस्था के !

मैं गुलाब का फूल हूं

—डॉ० राजकिशोर पाण्डेय

मैं गुलाब का फूल हूँ
कांटों के बीच में खिलने वाला गुलाब,
वह गुलाब जो जवाहर का वर्षों से साथी था।
मुझे दुलार प्राप्त था उस महामानव का
उसने मुझे स्नेह दिया
रखा हृदय के पास
कितना भाग्यशाली था उसके सान्निध्य में
कितना गौरवान्वित था चरणों में पड़ा हुआ।

प्रतिक्षण मैंने —
सुना है दिल धड़कन को,
उस महामानव के
जो देव - लोक को जाना चाहता था
धरती माता की गोद में
जिसके सम्मुख मानवता का महान् आदर्श था
ऐसा आदर्श जिसके सम्मुख
देवत्व भी घुटने टेक दे।

मैंने नजदीक से उस दिल को देखा है
जिसमें सागर की गहराई, हिमगिरि की ऊँचाई
आकाश का विस्तार
और गंगा की पवित्रता थी
जो चट्टान - सा अडिग और अचल था
जिसमें फूलों की मुस्कराहट
और बादलों की बरसात थी
जिसमें शोले जलते थें
आँधी और तूफान आते थे
और जिसमें कभी कभी—
प्रलय का समाँ भी बँध जाता था।

मैंने आवाज सुनी है उस दिल का,
उसका हँसना देखा है, रोना देखा है
और वह मुस्कराहट देखी है
जो विश्व के करोड़ों नर-नारियों को
जीवन देती थी
जीवन के प्रति आस्था का संदेश देती थी।
वह दिल जो विश्व के दुःख की आग में पिघला,
पिघल पिघल कर
दृढ़ से दृढ़तर होता गया।
तप्त कंचन-सा निखरता गया।

आज मैं धूल हूँ
किन्तु कभी खिला हुआ फूल था।
वैसे ही मुस्कराता हुआ
जैसी जवाहर की मुस्कराहट थी।
आज मैं सोया हूँ
चिर विश्राम-निद्रा में
जवाहर के अवशेष भस्मों के साथ
सोचता हूँ—क्या निद्रा ही जागृति की चरम सीमा है ?
जीवन का ध्येय क्या मृत्यु का वरण है ?

मन के विषाद के क्षणों में
दूर से सगीत की ध्वनि-सी सुनाई पड़ी
स्वर स्पष्ट से स्पष्टतर होता गया
"उठो जागो, सत्कर्म में लगो।"
—उत्थितव्यं जागृतव्यं,
नियोक्तव्यं भूति कर्मसु—
मानो उपनिषदों की वाणी नई शक्ति ले आई हो।
संगीत का निर्झर लाखों कंठों से फूट पड़ा
सुनो, इस स्वर-लहरी को
जो अब भी विश्व के कण-कण से मुखरित है।

यह ध्वनि है उन अवशेषों की
उस महापुरुष के अवशेषों की, विश्व जिसका अपना था,

'आराम हराम' जिसका नारा था
जो प्रत्येक क्षण जागृत था, कर्म में निरत था।
मृत्यु के बाद भी जिसे विश्राम नहीं;
जो जीवन भर जीवित रहा
मृत्यु के बाद भी जीवित है,
सीमित शरीर—
देश और काल की सीमा से मुक्त;
विश्व के कण-कण में व्याप्त, नेहरू-युग के रूप में।

है तुम्हीं को इस विजय का श्रेय

—रमेश 'मणि'

ओ भविष्यत् के चितेरे !
युग पुरुष ! युग प्राण !
यह तुम्हारी चेतन की ज्योति का ही
है अमित आलोक
जो कि माथे पर हमारे
जगमगाता विजय बनकर आज,
यह तुम्हारी दृष्टि की गहरी परख है—
जो कि भारत को सफलता के शिखर पर ला सकी है आज।
है तुम्हीं को इस विजय का श्रेय,
क्योंकि यदि तुम
स्वतन्त्रता के इस उभरते से युवक को
झोंक देते युद्ध में कुछ वर्ष पहले
बिन दिये ही विपल-श्रेष्ठ-शस्त्रास्त्र,
बिन सिखाये आग्नि-शमनक-मंत्र,
तो भला क्या—
झुलस कर तन हो न जाता राख,
या कि फिर कोमल बदन पर
पड़ न जाते वे भयंकर दाग—

जो न मिटते युग-युगों इतिहास के मरहम लगाए,
व्यथा जिनकी कम न होती पीढ़ियों आँसू बहाए।

गुलाब के फूलों का संकल्प

—दिनकर सोनवलकर

नेहरू के निधन पर
दुनिया के तमाम गुलाबों ने
शोकसभा आयोजित की ;
और तब उस गुलाब ने
जो उनकी शेरवानी पर
आखरी बार लगा था,
कहा :—
"जवाहर के अन्तिम क्षणों में
मैं ही था उनके पास,
मैंने सुने है उनकी साँसों के स्वर
मैंने जानी है उनके दिल की बेचैनी
जो हिन्दुस्तान को
नए रूप में गढ़ना चाहती थी
जो हर एक की आँखों में
मोहब्बत की भाषा पढ़ना चाहती थी
जो जगाना चाहती थी,
सोए हुओं के भाग,
जो मिटाना चाहती थी—
दुनिया के नक्शे से
गुलामी के दाग।
जो पूर्व को देना चाहती थी
वैज्ञानिक क्षिप्र गति
जो पश्चिम को सिखाना चाहती थी

आध्यात्मिक सन्मति"
इसलिए हम सब गुलाब पुष्प
करते हैं संकल्प :
"कि हम उसके व्यक्तित्व के
विभिन्न रंगों को
अपनी पँखुरियों में
करेंगे अभिव्यक्त ;
और अपनी खुशबू में
उसकी आत्मा की सुगन्ध बटोरकर,
ले जाएंगे दिशा दिशा में
गली ग्राम, नगर डगर ।
और जब तक
पूरा नहीं होगा यह काम
हम
काँटों में ही पलेंगे
काँटों पर ही चलेंगे ।"

जीत गया देवत्व आज फिर

—ब्रजेन्द्र अवस्थी

जो भी जग में मानवता के सेवक अन्य हुए हैं।
वे धरती पर आकर जीवन पाकर धन्य हुए हैं।।
पर नेहरू, वह मानवता का भक्त अनन्य हुआ है।
जिसके जीवन से धरती का जीवन धन्य हुआ है।।

नवयुग का दिनमान तिमिर में असमय लीन हुआ है।
मृत्युजंय का अक्षय तन भी कालाधीन हुआ है।।
जग का ज्योतिस्तंभ टूटकर कण कण बिखर गया है।
खण्ड खण्ड हो पंचशील का उन्नत शिखर गया है।।

जो कि शाँति का कल्पवृक्ष था, नवयुग का जीवन था।
सत्य अहिंसा का तन मन था, जो धरती का धन था।।

वह निधनञ्जय हाय धनञ्जय का आहार बना हैं।
उसके क्रूर निधन से ये निर्धन संसार बना है।।

जीत गया देवत्व आज फिर से मानवता हारी।
वह सच्ची मानवता का उठ गया आज पुजारी।।
विश्वबन्धु भूखण्ड-विजेता युग का शील-प्रणेता।
छिना विश्व की राजनीति के नेताओं का नेता।।

आज एकता राँड हो गई ढाढ़ मार कर रोती।।
बन अनाथिनी-सी तटस्थता उर का धीरज खोती।।
सिसक उठी घायल मानवता तड़प उठी आजादी।
वसुन्धरा ने है सर्वोतम पूँजी आज गवाँ दी।।

गगन रो उठा धरा हिल उठी आई भीषण आँधी।
हाय खो गया भारत माँ का एक दूसरा गाँधी।।
नेहरू का स्वरूप क्या था भारत ने रूप धरा था।
उसकी वाणी में अविनश्वर शब्द ब्रह्म उतरा था।।
उसके उर में मानवता का करुणा सिन्धु भरा था।
आत्मा अमर न होती तो ये भारत स्वयं मरा था।।

आश्वासन

—शचीन्द्र भटनागर

कल मैंने एक गीत गाया था,
शोक-गीत गाया था,
कल मेरी झील से एक बिन्दु छलका था,
तोड़ा जब काल ने फूल वह कमल का था।

वह कपोत,
जिसके पंखों की मृदु मेघीली छाँह में
देश सभी कुछ सहकर मौन था,
उड़ गया

(याद कर रहा हूँ)
तब
मेला था जुड़ गया
देश-देश के अगणित तीर्थयात्रियों का इस धरती पर;
मन की धरती पर आशंका का,
शोक का,
विषाद का,
रुग्णवत् प्रमाद का,
उस क्षण तो लगता था, मुक्ति मिली
अंधकार और अनिश्चय को,
भय को,
एवम् संशय को,
लगता था, वह निमिष साँझ का धुंधलका था,
लगता था, वह तिमिर नहीं एक पल का था।

आज अश्रु सूख चुके
(रोने की भी सीमा होती है)
गीली आँखों का धुंधलापन
दृष्टि नहीं मेरी असमर्थ या नियन्त्रित है;
देख रहा हूँ
मेरी आशंका बिल्कुल निर्मूल थी
कुन्दन-सी निखर रही, कल तक जो संध्या की धल थी।
जन-मन के स्नेहपात्र !
आज तुम हुए अगात्र,
किन्तु तुम्हारी हर उपलब्धि संजोने वाला
सतत् जागरूक है,
सतत् यत्न शील है,
तुमने निज प्राण फूँक देश को दिया था—
जो स्थैर्य और यश का घट
आज भी भरा है, वह अभी नहीं रीता है
कभी नहीं रीतेगा,
देश का विकास-काल कभी नहीं बीतेगा,

हो रह सतेज वह प्रकाश-पुंज
प्रथम किरण जिसे मिली थी तुमसे,
मेघों की ओट में लगता जो हलका था !
प्रेरणा हुई कि जो शोक-विन्दु कल का था।

सूर्य अस्त हो गया

—नर्मदाप्रसाद खरे

मानवता धन्य हुई, चूम-चूम ज्योति-चरण,
युग का इतिहास बदल, नाच उठी किरण-किरण,
कण-कण को ज्योतित कर ज्योतिपुंज खो गया !
सूर्य अस्त हो गया ।।

जिसके लघु इंगित पर कंठ-कंठ बोल उठे,
पत्थर भी पिघल गये, धरा-गगन डोल उठे,
जन-जन को वाणी स्वयं मौन हो गया !
सूर्य अस्त हो गया ।।

अतुल अगम सागर में जीवन की नाव चला,
आँधी—तूफान बीच समता का दीप जला,
युग—युग का अन्धकार आभा से धो गया ।
सूर्य अस्त हो गया ।।

स्नेह-प्यार-ममता के सुन्दरतम फूल खिला,
जन-जन को हृदय लगा, अमृत के घूँट पिला,
नयी-नयी मिट्टी में नये बीज बो गया !
सूर्य अस्त हो गया ।।

शान्ति के सुपथ पर वह दुनिया को मोड़ गया,
धरती की छाती पर अमिट छाप छोड़ गया,
अभी-अभी जगता था, अभी-अभी सो गया।
सूर्य अस्त हो गया ।।

कौन गुलाब चुनेगा

डॉ० रामसेवक 'दीपक'

विध्वंसक विज्ञान प्रेम से जनहित पथ पर मोड़ा,
हो जाएँ साकार कल्पना विश्वासों को जोड़ा।
तुमने तोड़ीं सभी रूढ़ियाँ नई दिशा दी तुमने,
सह अस्तित्व भाव के पथ पर युग के रथ को मोड़ा॥

विघ्न और व्यवधानों से वह कभी नहीं घबराया,
स्वयं भाग्य निर्माण करें हमें ऐसा पाठ पढ़ाया।
रत्न-राशि भरने की खातिर तेरा यत्न जवाहर,
चिन्तन के सागर में डूबा चुन-चुन मोती लाया॥

गौरवपूर्ण हमारी संस्कृति, था उसका प्रतिपादक,
भारतीय आध्यात्म कोष का जीवन में संपादक।
सत्य, अहिंसा और न्याय का था प्रतीक युग नेता,
स्वर्गलोक की सुख समृद्धि का धरती पर उत्पादक॥

राजनीति का सफल खिलाड़ी ऐसा पलटा पांसा,
सिकुड़ी-सिमटी मानवता को मिली मुक्त परिभाषा।
नील गगन से विश्वयुद्ध का सब छट गया कुहासा,
विश्व जनों में नव जीवन की जागी नव अभिलाषा॥

भारतीय अर्जुन के रथ पर नेहरू का संचालन,
कितने ही कौरव आए थे औ कितने ही रावण !
कर्मक्षेत्र में मरना जीना उसने हमें सिखाया,
धर्मनीति से जुड़ी हुई थी राजनीति यह पावन॥

प्रेमी था वह निर्माणों का बदल रहा था ढाँचा,
बच्चों के मुखड़ों पर उसने आगामी 'कल' बांचा।
वर्तमान का संयोजक था तो भविष्य निर्माता,
कोटि-कोटि जनता का नेता बच्चों का वह चाचा॥

महाकाल का रूप कि जिसने पिया हलाहल प्याला,
मातृभूमि के लिए स्वयं को न्यौछावर कर डाला।

लाल जवाहर मोती का वह पूरब का उजियारा,
नीति उपासक बापू का आजादी का मतवाला ।।

दुर्दिन ने कर दी है हम पर ऐसी चोट करारी,
क्यों न हिमालय गल जाएगा गंगा-जमुना खारी ।
मेरी श्रद्धा की डाली से कौन गुलाब चुनेगा,
अब गुलाब की आँखें नम हैं भीगी क्यारी-क्यारी ।।

तस्वीर-ए-आजादी

—रामबिहारी लाल श्रीवास्तव 'आजन'

क्यों दहेल उठ्ठी जमीं, क्यों आस्माँ रोने लगा,
आज सत्ताईस मई चौंसठ को, क्या होने लगा ।

सब का दामन, हर इक इन्सान से क्यों छुट गया,
क्यों ये आलम, खून के आँसू बहा कर रो दिया ।

अम्न का अवतार, मज्लूमों का रहेरू चल बसा,
अल्विदा कह कर जवाहर लाल नेहरू चल बसा ।

आज अपना नाखोदा-ए-कारवाँ, जाता रहा,
आज अपनी सरजमीं का आस्मां, जाता रहा ।

क्या है ये मुम्किन, कि वह आ जाय फिर से होश में,
आज जो सोया हुआ है, मौत की आगोश में ।

देश दीवानों में जा पहुंचा था, इश्रत छोड़ कर,
रख दिया था, कौम की पस्ती का धारा मोड़ कर ।

वक्फ़ कर दी जिन्दगी, अम्न-ओ-चेरागाँ के लिये,
आग पानी में लगाई, पस्त इन्साँ के लिये ।

हर घड़ी, हर आन, इक तदबीर-ए-आजादी था,
आप खुद अपने में, इक तस्वीर-ए-आजादी था ।

उसकी दुनिया और ही थी, उसका आलम और था,
ज़ख्म-ए-दिल ही था जुदा, उसका मरहम और था।

ज़ोर की चलती हुई आँधी, जवाहर लाल था,
दर हक़ीक़त, पैरू-ए-गाँधी, जवाहर लाल था।

अपने काँधे पर लिये फिरता था हिन्दुस्तान को,
मश्रिक़-ओ-मग्रिब, भुला सकते न उसकी आन को।

इस भरी महफ़िल में यो, तन्हा अनोखा रिन्द था,
सूरमा-ए-जंग-आज़ादी, मुंजस्सम हिन्द था।

अब न दुनिया में, जवाहर लाल ऐसा आयेगा,
रहती दुनिया तक रहेगा नाम मोती लाल का।

कौन सा जादू था आजम, शेर की आवाज़ में,
बन्द हो जाते थे लब, झुकती थीं सब की गर्दनें।

जननायक : नेहरू

—जगदीशचन्द्र शर्मा

वीर जवाहर ने दुनिया को देकर प्रबल सहारा
रोका विश्वयुद्ध से होने वाला क्रूर विनाश

(१)

राजनीति की अकुलाहट में जो न कभी अकुलाया,
कूटनीति की प्रवंचना में भी सदैव मुस्काया।
विकट समस्याओं के जिसने झेले क्रुद्ध थपेड़े,
साहस का श्रद्धेय मनस्वी बन कर वह हुलसाया।।

वह जननायक, भारत माँ का प्यारा पुत्र जवाहर,
जिसने द्वेष-तिमिर में नित फैलाया स्नेह-प्रकाश।

(२)

बापू का सच्चा अनुयायी, नवयुग का निर्माता,
रामराज्य के आदर्शों का जागरूक परित्राता।
गौतम-सा तेजस्वी, करुणा-न्याय-सत्य का प्रहरी,
सर्वप्रिय विक्रमादित्य-सा भारत-भाग्य-विधाता ॥

परशुराम-सी ज्यों ही उसने रण-हुंकार भरी तो,
चीन इधर फिर अतिक्रमण करने में हुआ हताश।

(३)

वह मानवता का सेवक, आजादी का सेनानी,
सह अस्तित्व जगाने वाला कर्मवीर बलिदानी।
विश्वशांति के संवर्धन में जिसकी देन अमर है,
महासफलताओं से जिसको मिली मधुर अगवानी ॥

महाप्रयाण किया है उसने महाकाल के पथ पर,
सदा कृतज्ञ रहेंगे उसके, धरा और आकाश !

मेरे देश का माथा झुका है

—रमेश कुमार तैलंग

शोक के ये क्षण सहन करते न बनते,
लोचनों में ज्वार-से लाखों उमड़ते।
मुट्ठियाँ सब पड़ चुकी हैं आज ढीलीं,
वक्ष में अंगार रह रह कर सुलगते ॥
यह नियति का क्रूरतम आघात ! मेरे देश का माथा झुका।

वह गुलाबी मुस्कराहट अब न दिखती,
वह नजर वह तमतमाहट अब न दिखती।
जो सुबह से शाम तक जलती सदा थी—
रोशनी वह जगमगाहट अब न दिखती ॥
शीश पर घिरने लगी है रात ! मेरे देश का माथा झुका है।

अम्न की तस्वीर जैसे खो गई है,
प्यार की जंजीर टुकड़े हो गई है।
नींद में केवल जवाहर ही न सोया,
हर जगी तक़दीर जैसे सो गई है॥
आज फिर मँहगी पड़ी यह मात ! मेरे देश का माथा झुका है।

रुध गये हैं कंठ, शिशुओं की ठिठोली,
दर्द से बोझिल बनी हर एक बोली।
स्मरण बन कर रह गया है एक हमदम,
शून्य में कुछ ताकती हर आँख भोली॥
छीन ली किसने अमर सौगात ! मेरे देश का माथा झुका है।

फूल किसकी शेरवानी में लगायें,
आज किसके साथ खेलें मुस्करायें ?
तड़फड़ाती हैं विवशता की घड़ी में—
आज हिन्दुस्तान की खाली भुजायें॥
आह, सत्ताइस मई के प्रात ! मेरे देश का माथा झुका है।

इतिहास मर सकता नहीं

—चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित 'ललित'

लोग कहते हैं जवाहर सृष्टि से अब खो गया।
एक युग बीता, गगन का सूर्य भू पर सो गया !!
किन्तु अँधियारा किरन को कैद कर सकता नहीं !
व्यक्ति मरता है मगर इतिहास मर सकता नहीं॥

पंख खोले काल उड़ता है क्षितिज को मापने को।
बाँधने को संग सीमायें लिये अपने अनेकों॥
बाँह में लेकिन कभी आकाश भर सकता नहीं !
व्यक्ति मरता है मगर इतिहास मर सकता नहीं॥

दुधमुँहों की आश थे औ' विश्व के विश्वास थे।
जीर्ण खंडहर के लिये तुम मिल गये मधुमास थे।।
फूल मरता है मगर मधुमास मर सकता नहीं !
व्यक्ति मरता है मगर इतिहास मर सकता नहीं ।।

शीश दे-दे कर उठेंगी मनुजता की सीढ़ियाँ।
और लेकर नाम जिन्दा रह सकेंगी पीढ़ियाँ।।
साँस मर जाये भले, विश्वास मर सकता नहीं !
व्यक्ति मरता है मगर इतिहास मर सकता नहीं ।।

तुम राष्ट्र-भाल के इन्दु तिलक

—केदारनाथ लाभ

तुम थे भारत-मानस के अनुपम राजहंस,
चालीस कोटि मनुजों के प्राणों की भाषा;
भावी भारत-प्रतिमा के ज्योतित कुम्भकार,
थे वर्तमान के स्वप्न, जागरण, अभिलाषा ।।

तुम वह दर्पण थे, जिसमें भारत प्रतिबिम्बित,
वह महाकाव्य थे, जिसमें अंकित था स्वदेश;
तुम थे भारत, भारत तुममें साकार मुखर,
तुम राष्ट्र-भाल के इन्दु-तिलक, गौरव-नगेश !

हर क्रिया तुम्हारी युग-गीता बन जाती थी,
हर शब्द तुम्हारा राष्ट्रगीत बन जाता था;
हर साँस देश को देती थी अक्षय प्रकाश,
विश्वास तुम्हारा भारत-भाग्य विधाता था !

हे प्रजातंत्र के नायक ! गायक जन-स्वर के,
क्यों आज नही जन-मन-अभिलाषा जान रहे;
सो गये मौन चिर निद्रा में क्यों हाय अभी,
क्यों नही विकलता भारत की पहचान रहे !

सो गये आज तो लगता है फिर भारत के,
मानस में जैसे व्याप्त हो गया अंधकार;
आलोक स्निग्ध लुट गया धरा के आँगन का,
छा गया विश्व पर ज्यों संकट-घन दुर्निवार !

मैनाक-मेरु मानवता का ढह गया अचिर,
सुकुमार स्वप्न-चिन्तन का सूख गया सागर;
भारत का पाटल-पुरुप उठा, उपवन काँपा,
हो गयी रिक्त गंधों से भरी-भरी गागर!

तुम चले गये, हम खड़े कूल-तरु-से दुर्बल,
अपने भविष्य के लिए विकल अकुलाते हैं;
जलयान देश का हुआ हाय नाविक-विहीन,
हम किसी महामरु में विषण्ण बिलखाते हैं।

तुम चले गये, अब कौन देश को एक साथ,
अपनी किरणों में बाँध, राह पर लायेगा;
तुम चले गये, अब कौन महागुरु-सा हम पर,
इस क्षण गुस्सा, उस क्षण स्नेह बरसायेगा!!

नेहरू! चले तुम गये, तुम्हारे पग-चिह्नों,
पर चलने का हम आज मौन प्रण करते हैं;
नेहरू! चले तुम गये, तुम्हारे पग-पग पर,
हम नत श्रद्धाओं के पाटल-दल धरते हैं।।

धर्म चक्र

—शिवसिंह 'सरोज'

जब तक हिमगिरि का सिर ऊँचा, प्रतिद्वन्द्वी का मस्तक नत है,
नेहरू तो नहीं रहे लेकिन नेहरू का प्यारा भारत है।
यह देश, जहाँ ध्वज गाड़ उड़ा पौरुष प्रतिबार पताका बन,
धरती से ऊपर उठ सूरज चमका सारी दुनिया का बन।।

जब तक शरीर था सीमित था, अशरीरी व्यापक शुद्ध हुआ,
सिद्धार्थ सामने जब न रहे, वसुधा-तल सारा बुद्ध हुआ !
जब तक अशोक थे तो स्फुलिंग-सा केवल हुआ कलिंग विजित,
निर्वाण प्राप्त करके असीम बन गया सजीवन-सा जनहित ।।

परिवर्तन और प्रगतिवादी सरिता में दोनों नीर-चक्र,
ढह गया विजय का शिलालेख, रह गया घूमता धर्म-चक्र।
यह धर्म-चक्र इस धरती का धीरज है, धन है, धारण है,
गंगा-यमुना की धवल धार-सा स्वयं कार्य है, कारण है ।।

यह धर्म-चक्र इस धरती पर तब से, जब से नभ में तारे,
हम कितनी बार जिये जिसमें, हम कितनी बार मरे प्यारे !
घूमता शीश पर चक्र अमर, तो हम भी चलते जाते हैं,
छलता है हमको काल अगर, हम उसको छलते जाते हैं -।

युग-युग के योजन कूद-कूद कर कौतुक करते युगल चरण,
इसमे तब किस को मृत्यु कहें, किस को कह लें जाग्रत जीवन ।
जीवित थे नेहरू जिनके थे, मर कर भी नेहरू उनके हैं,
पहले के सगुण, सदोप मनुज, देवता आज निर्गुण के हैं !!

खाली न हुआ है हस्ती का प्याला, छलका हर घर में है,
मिट्टी के घेरे के बाहर, नेहरू-नाहर हर नर में है।

देवदूत जवाहर के प्रति

—मुचकुन्द शर्मा

देवदूत ! सम्पूर्ण देश की बन कर आशा-भाषा ।
राजनीति, नव अर्थ-नीति की भी बन कर परिभाषा ।।
युग-युग की सांस्कृतिक-चेतना-धारा के उन्नायक ।
राष्ट्र-तंत्र स्वातंत्र्य-मंत्र के सर्जक नूतन गायक ।।
शांति-दूत बदला युग का इतिहास, धरातल मौन ।
विश्व चकित रह गया धरा पर आया सूरज कौन !!

यक्ष-प्रश्न के उत्तरदाता, शांतिजीय युग-नेता।
लगा आ, रहा था भारत में राम साथ युग-त्रेता ।।
महाज्योति, घनघोर तमिस्रा बीच उगी आ पायी।
पंकिलता सम्पूर्ण सृष्टि की डरती-सी भरमायी ।।
मातृ-कौख से अमर जवाहर आये इस धरती पर।
नव प्रयोग के साथ चले बंजर युग की परती पर ।।
रूस, चीन, अमरीका, पेरिस, लन्दन की हुंकार।
सर्वोपरि भारत का नारा गूँजा, जयजयकार ।।
महासिन्धु को मथकर अमृतमय करके ससार।
जीवन-यज्ञ बीच में आहुति देकर अंतिम बार ।।
गांधी-दर्शन-मंत्र सिक्त कर थार बना रसधार।
मानवता के अमर तपस्वी ! चले सृष्टि के पार ।।
नये क्षितिज के नये सूर्य को मिली अमरता वाणी।
ओ भारत के नये धर्म-ध्वज ! ओ युग-युग के ज्ञानी ।।
अमर जवाहर ! तुमको पाकर भारत-धरती धन्य।
विश्व ऐक्य की वाणी में तुम सबसे पूजित गण्य ।।
तुम भारत की नव अंगड़ाई, राष्ट्र-यज्ञ के होता।
मानवता के महासिन्धु में लगा चले सब गोता ।।
राष्ट्र-धर्म के नये प्रवर्तक, भारत का इतिहास।
सदा सुरक्षित बना रहेगा जब तक तेरे पास ।।
यहाँ जवाहर-ज्योति जली है, अंधकार है दूर।
बढ़ो नये पथ पर, संधानो ज्योति नयी भरपूर ।।

देखते ही देखते तम छा गया

—नरेश 'अनजान'

वह जवाहर देश का जो प्राण था।
वह जवाहर देश का जो मान था ।।
वह जवाहर जो कि इक इनसान था।
जो न हिन्दू था न मुसलमान था ।।

अमन का अवतार कहते थे जिसे।
पुण्य का आगार कहते थे जिसे॥
सत्य का शृंगार कहते थे जिसे।
प्रेम की झंकार कहते थे जिसे॥
वैर की दीवार जो ढाता रहा।
एकता का गीत जो गाता रहा॥
युद्ध से जिसका नहीं था वास्ता।
प्यार का जिसने दिखाया रास्ता॥
देश की जो नींव था, आधार था।
देश के हर रोग का उपचार था॥
देश की जो बन गया आवाज़ था।
देश को जिस पर बड़ा ही नाज था॥
जो समझता पाप था आराम को।
जिन्दगी जिसने कहा था काम को॥
जब हुआ यह ज्ञात वह है चल बसा।
हो गया हर जीव बुझते दीप-सा॥
देखते ही देखते तम छा गया।
हर गली बाजार मातम छा गया॥
हर खुशी आघात बन कर रह गई।
जिन्दगी अब रात बन कर रह गई॥
अश्रु बनकर रह गया हर एक कण।
शोकमय-सा हो गया वातावरण॥

हे गुलाबर्षि !

—कार्तिकनाथ ठाकुर

एक गर्वदायक गुलाब झर गया है
उसकी गर्वकारिणी सत्ता
रक्तबीज की तरह जन्मान्तरित होगी
देश में, विदेश में, आचार में, विचार में, कर्म में।

कर्म का
सौरभ करके पान
वह चला गया है। विश्व-शांति का अवतार…
पुनरागमनाय च
गुलाब का रक्त-रंग निवेदन कर रहा है !
शोकोत्सव की प्रेरणा
मुझे, मेरे देश को, उनके विचारों को
मरने-मारने नहीं देगी।
आधुनिक भारत के राजर्षि !
तुम्हें
अपने कर्म में
कर रहा हूं संजीवित।
हे गुलाबर्षि !
तव अनुसरणं इच्छामि ‥
पंचशीलं शरणम् गच्छामिः
विश्व-शान्तिम् शरणम् गच्छामिः
हे गुलाबर्षि !

वह ऐसा गतिमान

—धीरेन्द्र कश्यप

जब तक चमकें चाँद-सितारे, धरा न बदले चाल,
मुसकाएगा सदा गगन पर लेकर उन्नत भाल।
आएगा अब सारे जग को याद करोड़ों साल,
हमारा वीर जवाहर लाल !
जीवन भर खेला करता था जो केवल तूफानों से,
अमृत के निर्झर छलकाए थे जिसने पाषाणों से।
भारत के अरमानों को जिसने अपने अरमान कहा,
अपने-तन-मन जीवन को जिसने जन-जन का प्राण कहा ॥
कैसे बिसरेगा धरती से वह धरती का लाल !

मुसकानों से झेला था जिसने जीवन के शूलों को,
मानवता के हित में ही देता था जन्म उसूलों को।
उसकी मानवता का यूँ मानव से कर्ज न चूकेगा,
कैसा सच्चा रंग, नहीं पल भर चूनर से छूटेगा!
देश-प्रेम में रँगा सदा ही, कर के गया कमाल!

मेहनत का मतवाला वह मेहनत पर जान लुटाता था,
मेहनत के मन्दिर अपने लोहू से रोज रचाता था।
पूजा नई सिखा कर जिसने नई दिशाएँ चमका दीं,
भारत माँ के माथे की बूँदें मोती-सी दमका दीं॥
वह ऐसा गतिमान कि सोया सागर गया उबाल!

आज कसम खाते हैं उसके सपने चमन बनाएँगे,
उसके अरमानों के हर डाली पर फूल खिलाएँगे।
उसने जो वरदान दिया है उसे लहू से सींचेंगे,
उसकी ज्योति नहाए हैं हम, आँख न तम से मींचेंगे॥
उसी डगर हम चलें जहाँ से वह ले गया मशाल!

कविता तुम्हारी करे आरती

—राधेश्याम योगी

ज्योति के पुंज-से जगमगाते हुए,
सत्य आकाश में चमचमाते हुए;
विश्व की वंदना के विमल देवता,
आज कविता तुम्हारी करे आरती।

शान्ति की गोद में क्रान्ति-सा जन्म ले,
क्रान्ति के शुचि सुमन तुम खिलाते चले;
भ्रान्ति को मेटते-मुस्कुराते हुए,
पग बढ़ाते चले—पथ बनाते चले।
राह ने राह दी, चाह ने चाह दी—
देश की आह ने मुक्ति की थाह दी।

झुक रही अर्चना, मूक है साधना,
गुनगुनाती तुम्हारे लिए भारती !
आज कविता तुम्हारी करे आरती !!

बेड़ियाँ काट दीं, खाइयाँ पाट दीं,
मौर धर मुक्ति को व्याहने तुम चले;
स्वर्ग के मंच से रागिनी गा उठी,
देश में राग, स्वर शुभ सुनाते चले।
हिन्दुओं के लिए राम की रम्यता,
और इस्लाम को शान्ति-मय-सभ्यता;
मित्र के मित्र-से, शत्रु के मित्र-से,
लेखनी श्रेष्ठता आज स्वीकारती !
आज कविता तुम्हारी करे आरती !!

धर्म विज्ञान को तुम मिलाते चले,
रूढ़ियों के किले सब ढहाते चले;
आदमी रह सके आदमी इसलिए—
पूर्व पश्चिम सदा पास लाते चले !
दुःख घटाते चले, सुख बढ़ाते चले,
देश की नाव आगे बढ़ाते चले;
माँ तुम्हारे लिए विश्व के शृंग से—
राष्ट्र-ध्वज को लिए भावना वारती !
आज कविता तुम्हारी करे आरती !!

तुम्हें पा धनी हुआ इतिहास

—धन्यकुमार जैन 'सुधेश'

तुम्हें पा धनी हुआ इतिहास, तुम्हें खो दीन हुआ भूगोल।
एक बिखराता उज्ज्वल हास, गिराता एक अश्रु-कण गोल ॥

लिखे हों जैसे एक करोड़, पुनः मिट जाये संख्या एक।
नहीं तो रखते कोई अर्थ, शेष जो बचते शून्य अनेक ॥

इसी विधि बिना तुम्हारे आज, शून्य-से हम हैं चारों ओर।
'जवाहर' के अभाव में व्याप्त चतुर्दिक दिखता है तम घोर॥
विदित हो रहा विश्व को आज, रहे तुम हो कितने अनमोल!
तुम्हें पा धनी हुआ इतिहास, तुम्हें खो दीन हुआ भूगोल!!

जवाहर' थे तो तुम्हीं यथार्थ, शेष हम सब साधारण काँच।
तुम्हारा ही पौरुष था जो कि न आने पायी माँ पर आँच॥
कँपा देती थी अरि के प्राण, तुम्हारी एकमात्र ललकार।
अतः यह भारत था निश्चिन्त सौंप कर तुमको निज पतवार॥
क्योंकि जय-वधू तुम्हारे हेतु, लिये फिरती थी माला लोल!
तुम्हें पा धनी हुआ इतिहास, तुम्हें खो दीन हुआ भूगोल!!

तुम्हें आमन्त्रित कर पर-राष्ट्र, रहे करते सादर सत्कार।
मानता रहा राष्ट्र वरदान सदृश ही तव अनुपम अवतार॥
अतः औरों के लेकर प्राण, छोड़ यदि देता तुमको काल।
प्राण देने को तो फिर होड़ लगाने लगते लाखों लाल!!
किन्तु कब आँक सका है काल किसी के भी जीवन का मोल!
तुम्हें पा धनी हुआ इतिहास, तुम्हें खो दीन हुआ भूगोल!!

गुलाब का ख्वाब रोता है

—नलिनीकान्त

गांधी के बहुत बेटे रहे
-ोग्य योग्यतर योग्यतम रहे—
विद्वान् रहे, राजनीतिज्ञ रहे
त्यागी रहे, वैरागी रहे
इशारे पर सिर कटाने वाले रहे—
किन्तु राजा बेटा तो बस एक ही था,
जिसने आज दिल्ली की गद्दी
और माँ की गोदी
कर दी सूनी!

संसार का सबसे बड़ा वृक्ष
आज उखड़ गया—
जिसकी गहन छाया में
अन्तर्राष्ट्रीय शीतलता थी
विश्व-बन्धुत्व की कुशलता थी
सुरक्षापूर्ण स्वस्थता थी
शान्ति और अहिंसा थी
प्राचीनता थी, नवीनता थी !

आश्चर्य ! महा आश्चर्य !
वह जय विजय अजय
जिसने न जानी कभी पराजय !
चमकता आया, चमकता गया
सोने के ढेर पर पैदा हुआ
राजमुकुट ले विदा हुआ
नरों में नाहर
रत्नों में जवाहर
मोती का लाल
आदि से अन्त तक कमाल !

लक्ष्मी भी उसी की
कमला थी उसी की
इन्दिरा तो उसी की
कृष्णा भी उसी की
और सरस्वती ?
उसका तो वह वरद् पुत्र ही था !
उसने अपनी कलम दी थी उसे
उसने अपनी वाणी दी थी उसे !

एक ही साँस में वह जी गया,
उसने न कभी करवट वदली !
जवानी उसके इशारे नाचती रही,
रवानी उसके पीछे दौड़ती रही !
जिसने उस तेजपुंज को ताका
वह स्वयं हुआ तेजोद्दीप्त,

जिसने किया विरोध
वह स्वयं हो गया अवरोध !
आज वह अस्त
उसके साथ एक युग अस्त, एक इतिहास.........
श्रद्धा-भक्ति के बड़े-बड़े विशेषण औरों के हैं,
वह जो दुनिया के लोगों का
सिहरन कम्पन स्पन्दन था—
उसे नौनिहाल केवल चाचा ही कहते थे !
आज गुलाब रोता है
उसका आब रोता है
ख्वाब रोता है
कि अब उसका गौरव
कौन रखेगा ऊँचा
हृदय से नित लगा कर !

डूब गया धरती का सूरज

—प्रेम 'निर्मल'

डूब गया धरती का सूरज,
कैसी घिरी बदरिया काली !
हाय ! मनोरथ कितना अस्थिर,
छोड़ सदन चल दिया देवता।
हों जैसे अनजान अपरिचित,
चुरा नयन चल दिया देवता ॥
निष्फल हुए अर्चना वंदन,
औंध गई दीपों की थाली !

हम भी रहे अभागे कितने,
पल भर भी तो टोक न पाये।
जाने वाले परदेशी को,
तन के बन्धन रोक न पाये ॥

क्रूर विधाता ने यह हमसे,
कब कब की शत्रुता निकाली।

आज निराशा की कारा में,
तन बंदी है, मन बंदी है।
कैसा यह परिवर्तन पल में,
सारा ही उपवन बंदी है॥
रोते सुमन सिसकतीं कलियाँ,
आज कहाँ जा सोया माली ?

ओ ! उदास मधुबन के फूलों,
भूलो व्यथा, सँवारो जीवन।
शांति दूत के संदेशों का,
करो विवेकपूर्ण अभिनन्दन॥
होगी शस्य-श्यामला धरती,
छायेगी घर-घर हरियाली !

चाचा नेहरू के नाम

—हरजिन्दर सिंह सेठी

चाचा नेहरू !
हम सब बच्चे भारत माँ के
भेज रहे हैं नाम तुम्हारे एक निवेदन !
छोड़ गये क्यों हम बच्चों को बिना सहारे,
कौन बनेगा अब हम बच्चों के सँग बच्चा ?
कौन हँसेगा हृदय खोलकर, काम छोड़कर ?
कौन करेगा पथ-निर्देशन ?
बाल-दिवस के शुभ अवसर पर देगा कौन निमन्त्रण ?
हम सब बच्चे भारत माँ के
पले तुम्हारे प्रेम-भाव में
अब तुम छोड़ भँवर में हमको

चले गये हो स्वर्ग-लोक में !
वहाँ, जहाँ पर काम-काज कुछ नहीं किसी को
चिन्ता, भय से मुक्त देवता करते बस आराम !
जहाँ कल्प के वृक्ष घने हैं
मनचाही चीजें मिलती हैं
कमी नहीं है किसी बात की।
पर सच कहना, चाचा तुमको—
ऐसे बच्चे वहाँ मिले क्या
जो तुमसे मिलकर खुश होते
और तुम्हें 'चाचा' कहते हों ?
अमरों से सम्पन्न लोक में
बालक-धन का महाकाल है !
और, बिना बच्चों के चाचा
तुम उदास हो जाते होगे !

इसीलिये, हे चाचा ! तुमसे—
हम सब बच्चों का आग्रह है—
छोड़ स्वर्ग को, इसी धरा पर
बच्चों में मन को बहलाने
जल्दी से वापिस आ जाओ !

जौहर नहीं जवाहर खोता कभी काल के कर से

—फूलचन्द भारती 'कमल'

दीप बुझ गया किन्तु भुवन में आभा फैल रही है,
सिर्फ ज्योति का पुनर्जन्म है, यह निर्वाण नहीं है।
अब तक बँधी एक दीपक से थी सारी उजियाली,
अब फैली है बन कर धरती के कण-कण की लाली।
जौहर नहीं जवाहर खोता कभी काल के कर से,
अमर भला कब बिंध पाते हैं कभी मृत्यु के शर से।

वड़ा नेहरू का जीवन है, क्षण से बहुत वड़ा है,
वह गांधी का निकट पड़ौसी बनकर अमर खड़ा है।

राजनीति की भले हो गयीं सारी गलियां सूनी,
राजघाट की किन्तु प्रेरणा बढ़ी, हो गई दूनी।

रोना मत! आँसू के मोती, भला जवाहर लेगा?
दीपदान का अर्घ्य भला क्या स्वयं तमोहर लेगा?

श्रद्धा दिखलाओ पूरे कर उसके काम अधूरे,
तभी सार्थक श्रद्धांजलि—हों उसके सपने पूरे।

वह माली जितने ये तरु, फल-फूल खिला गया है,
उनसे ज्यादा बीज और बिरवे वह लगा गया है।

वे आंसू से नहीं,—बढ़ेंगे पाकर खून, पसीना,
उन्हें जिला पाएँ तब ही है अपना जीना जीना।

राजघाट अब एक नहीं दो-दो आवाज लगाता,
देखो! निर्धन और अरक्षित रहे न भारत माता।

कहता है, सरहद पर जागो, घर निर्माण जगाओ!
जन-जन के स्वप्नों की गंगा इस धरती पर लाओ!

मिटा जवाहर, बीज बन गया, वसुन्धरा गायेगी,
जगमग भरी सभी की खुशहाली जग में आएगी।

अमर है, अमर जवाहरलाल

—फूलकान्त मिश्र 'प्रशान्त'

सृष्टि का जनमंगल-जयगान,
विश्व का नूतन भव्य विहान,
स्नेह का व्यक्ति, व्यक्ति का राग,
राग का छंद, छंदमय वर्ण,
वर्ण का गौरवमय इतिहास,
सकल जन-गण का मुक्त विचार,
जवाहर! भारत का विस्तार!

तिरोहित प्रजातंत्र में आज,
ब्रह्म की ज्यों मधुमय अनुभूति !

सृष्टि की शांति, अहिंसा की नूतन उत्क्रांति,
सत्य के जीवन का विस्तार,
विश्व का अपना सोदर बन्धु,
स्नेह का उज्ज्वल शाश्वत स्रोत,
प्रलय में स्थिर हो ज्यों आकाश,
विपद में हिमगिरि का-सा रूप,
प्रकट था जिसमें सारा विश्व,
उसे ही दिया जगत ने नाम—
'जवाहर', 'जन-गण-जीवन-प्राण'।

विश्व का हित-चिंतन उद्देश्य,
रहा जिसके जीवन का मन्त्र,
दिया जिसने जन-गण को प्राण,
अमर वह राम-कृष्ण का रूप,
अनश्वर वह नूतन भगवान !

मृत्यु को मार, दिशाओं की सीमा के पार,
गगन-सा कर अपना विस्तार,
धरा के अणु-अणु में भर ज्योति,
विचरता मलयानिल-सा मुक्त,
मरेगा कैसे वह अमिताभ ?

किसी ग्रह-सा अपने में लीन,
समेटे वह अपना आलोक,
विश्व का सोच रहा कल्याण,
उसी को खोज रहा है युक्ति।

मृत्तिका के सुहाग का भाल,
अमर है, अमर जवाहरलाल।

तुम्हारी याद

—जीतसिंह 'जीत'

युग स्रष्टा
युग नायक पंडित नेहरू
तुम्हारा व्यक्तित्व
छाया है भारत के कण-कण में
तुम अमर हो,
तुम्हारी याद अमर है।
तुम्हारे द्वारा उद्घाटित
कल-कारखाने में लगे हुए पुर्जे
तुम्हारा ही गीत गाते है
सुनते है, सुनाते हैं।
और यह वृक्ष
जो वन-महोत्सव में तुमने लगाया था
तुम्हारे व्यक्तित्व का दर्शन है,
क्योंकि थका हुआ व्यक्ति
इस के नीचे ठहर
सुख पाता है,
तुम्हारी याद दोहराता है।
और यह विश्व शांति
जो तुम्हारे व्यक्तित्व का सार है
अमर है,
क्योंकि तुम अमर हो,
तुम्हारी याद अमर है।

नेहरू के प्रति

—नरेन्द्र श्रीवास्तव

रास्ते रोने लगे सब मंजिलों के,
पाँव थक कर रह गये जिन्दा दिलों के;

क्या बड़प्पन था, दिशायें चीख उठीं,
कौन अब आगे चलेगा काफ़िलों के!
देश मेरे किन्तु तुम हरगिज़ न रोना—
आँसुओं के बोझ से दब कर नहीं दम तोड़ देना।

क्या करेगी देह, अब कुछ फूल बासी,
छिप गया चन्दा, न होगी पूर्णमासी;
देश मेरे किन्तु तुम हरगिज न रोना,
कर गया है काम अपना वह प्रवासी।
देश मेरे किन्तु तुम हरगिज न रोना,
आपदा के इन क्षणों में तुम नही मुँह मोड़ लेना।

सरफरोशी की तमन्ना थी जेहन में,
बागवां था थक गया रहते चमन में;
खून को जो कहा करता रस गुलों का,
लाल था ऐसा जवाहर इस वतन में;
देश मेरे किन्तु तुम हरगिज न रोना,
कफ़न पावों तक चढ़ा है और तुम मत ओढ़ लेना!

तुम चमकते रहे शान्ति के सूर्य से

—उमेश

तुम चमकते रहे शान्ति के सूर्य से,
साँस में नव सृजन स्वप्न पलते रहे।
गूँजते नित रहे कर्म के तूर्य से—
लक्ष्य खुद ही सदा साथ चलते रहे।

नीति का रंग फीका तुम्हारे बिना,
याग का राग फीका तुम्हारे बिना।
तुम अँधेरे हमेशा मिटाते रहे,
शौर्य के यंत्र थे, शील ढलते रहे।

तुम निडर साहसी, देश की आन थे,
पंचशीलों में फूँके नए प्राण थे।

तुमने तूफ़ाँ में खेयी तरी देश की,
आँधियों के कहर हाथ मलते रहे।

तुमने मन्दिर प्रगति के बनाये नए,
तुमने पूजा के साधन जुटाये नए।

तुम महकते रहे स्नेह के फूल से,
नित अमृत-फल अहिंसा के फलते रहे।

तुम रहोगे अमर विश्व-इतिहास में,
कब बँधोगे छली काल के पाश में ?

तुमने दी साँस, सुख-शान्ति की विश्व को,
आग के साज, बन बर्फ गलते रहे !

राष्ट्र-नायक नेहरू के प्रति

—ब्रजकिशोर प्रसाद 'पंकज'

एक व्यक्ति वह नहीं, व्यक्ति वह जागृत भारतवर्ष था !!

ज्योति-चक्षु चैतन्य, उल्लसित हिमगिरि-शिखर ललाट,
शील-शान्ति-सीमन्त-राग प्रज्ज्वलित पुरुष विभ्राट !
अतिमानव, कारुण्य-मूर्त्ति, रक्षक समर्थ भुजदण्ड,
उद्ग्रीव, चेतना-कान्ति-र्चाचत वह पुरुष प्रचण्ड !

दुराधर्ष गतिमान, पुरुष वह मूर्त्तिमान संघर्ष था !
एक व्यक्ति वह नहीं, व्यक्ति वह जागृत भारतवर्ष था !!

हृदयस्थली पुनीत गीतमय, गंगा-सिन्धु-निकेत,
अथक चरण निर्बन्ध संवरणशील नियति-संकेत !
स्वर समर्थ, छवि तिमिर-त्राण, तन सहनशील अभ्यस्त,
एक कथा वह नहीं, विश्व-मुखरित इतिहास समस्त !

मृदुल हृदय, स्वर सजल, चरण से चक्रवात दुर्द्धर्ष था !
एक व्यक्ति वह नहीं, व्यक्ति वह जागृत भारतवर्ष था !!

लो अमर्त्यपुर ! सिद्धि, मर्त्यपुर का पवित्र अमरत्व,
लो भूतल की तृप्ति, अमरपुर ! लो मिट्टी का तत्त्व !
लो भविष्य, आदर्श विगत का, वर्तमान का हर्ष,
लो, सहर्ष दे रहे तपश्चर्यारत भारतवर्ष !

एक व्यक्ति मनुजत्व-सत्व, सत्कार्य-कीर्त्ति-उत्कर्ष था !
एक व्यक्ति वह नहीं, व्यक्ति वह जागृत भारतवर्ष था !!

ओ प्रवासी, स्वर्गवासी !

—इन्द्रा

ओ प्रवासी ! स्वर्गवासी ! हम धरा से कर रहे मिल-जुल तुम्हारा
चरण-वन्दन !

धरा—कहते थे जिसे तुम स्वर्ग-सुन्दर,
स्निग्ध हरियाली-भरे मैदान उर्वर।
है जहाँ बहती तुम्हारी प्राण-गंगा,
झर रहे करुणा द्रवित दिन-रात निर्झर ॥
विषम विषधर भी जहाँ निर्द्वेष मन से उर लगाये लहलहाते
शीत-चन्दन !

देवता ! कल तक मनुज तुम थे हमारे,
स्नेह के अवतार ममता के दुलारे।
त्रस्त मानवता कि जिसको दे गए तुम,
शान्ति मैत्री के युगल अनुपम सहारे ॥
मुक्त मानव ऋण चुकाए किस तरह से, तोड़ तुम जिसके गए दृढ़
लौह-बन्धन !

रो रही है आरती कर में सँवारी,
है विलखती थाल की हल्दी विचारी।

आज क्षत-विक्षत हृदय है अक्षतों का,
मौन मंगल मन्त्र की है सृष्टि सारी ॥
फूल कुम्हलाए गुलाबी उपवनों में, मच गया आमोद के घर
घोर क्रन्दन !

तुम रहे इस भूमि को कितना उठाए,
दीन-दलितों को सदा उर से लगाए।
निज परिधि अपनत्व की इतनी बढ़ा ली,
भेद खोकर बन गए अपने पराए ॥
शान्ति प्रेमी ! सत्य नेमी ! देश सारा है तुम्हारा, फिर करें क्या
और अर्पण !

२७ : मई-इतिहास का एक रेखांकित दिन

—बलराज जोशी

हवा बन्द हो गई, उफ़ कितनी घुटन है !
सहसा धरती काँपी, दीवारों पर टँगे चित्र उलट गये
एक काँपती हुई शाम उतर रही है
गुम्बदों, मीनारों, रोशनी की बाहों,
रेल की पटरियों, गुलाब की पाँखुरियों पर।
आकाश की छाती पर तेज़ी से भागता एक नक्षत्र
पहाड़ों, घाटियों, वन-उपवनों को—
लाँघती, प्राण पटकती मानवता !

सिसकियाँ······सिसकियाँ······
सन्नाटे के भीतर सन्नाटा
जैसे समय को कारकोटक ने डस लिया हो।
जो जहाँ है वहीं पथरा गया
वाणी मूक, प्राणों में मर्मान्तक पीड़ा !
कोटि-कोटि कण्ठों का सैलाब—
मौन कोलाहल ! (ऐसा कभी देखा नहीं)
इतिहास का क्षण कहीं कुछ घट गया है ?

अभी अभी····· सूरज निकला था
कैसे अस्त हो गया सागर के मध्य दिन-दोपहर में ?
शायद तिरते-तिरते कोई चील-पंख
सूरज के मुख पर छा गई है।
या सूरज के रथ की वल्गा टूट गई है
या लापरवाह ट्रेफिक-पुलिस की तरह
नियन्ता के लेखे-जोखे में—
कहीं कोई भयंकर दुर्घटना घट गई है—भूल से।

अन्तिम यात्रा

—जसविन्द्र 'अशान्त'

यह राजघाट की ओर चला शव किस महान् सेनानी का ?

इस तरफ़ भीड़ उस तरफ भीड़, कुछ भी तो और नहीं दिखता,
जिस तरफ़ न सागर लोगों का, मुझको वह छोर नहो दिखता।
हर तरफ़ शोक, हर तरफ दर्द, चल रहे लोग, उड़ रही गर्द,
सच, किसी नयन का आज मुझे अनभीगा कोर नहीं दिखता।।
उमड़ा पड़ता है सिंधु आज, आँखों के खारे पानी का !
यह राजघाट की ओर चला शव किस महान् सेनानी का ?

हैं टूट गईं युग की साँसें, युगनायक के ही साथ आज,
दु:ख का यह कैसा बोझ पड़ा, झुक गये सभी के माथ आज ?
दिखती हर तरफ़ उदासी है, लगती हर दिशा प्यासी है,
सबको विधि ने ज्यों लूट लिया, खाली दिखते सब हाथ आज।
लगता अन्तिम परिच्छेद चला, जीवन की अजब कहानी का !
यह राजघाट की ओर चला शव किस महान् सेनानी का !

यह कैसी घटना घटी आज, सबके होठों का हास लुटा,
हर तरफ दीखता है पतझर, हर उपवन का मधुमास लुटा।
फैला जाता है शून्य आज, अम्बर से कैसी गिरी गाज ?
युगनायक ने आँखें मूँदी, लगता जैसे इतिहास लुटा।

सबके सब दर्शन माँग रहे, सूरत जानी पहचानी का।
यह राजघाट की ओर चला शव किस महान् सेनानी का?

अमिताभ नेहरू को नमन

—धीरजपालसिंह 'अधीर'

सौ बार मेरा युगपुरुष अमिताभ नेहरू को नमन।

परतन्त्रता के ताप से पीड़ित हुआ जब देश था,
संकल्प के पग डगमगाये, रुदन ही जब शेष था;
आये तभी तुम वीर गांधी-ज्योति से उद्दीप्त हो,
नैराश्य-तम का तो अरे, क्षण में किया तुमने दमन।

जब शक्ति से मदमत्त देशों की रही यह धारणा—
"बलहीन कैसे कर सका है शान्ति की अवतारणा";
रह कर गुटों से दूर उसने सिद्ध यह कर ही दिया,
है पथ्य औषध से बड़ा जो रोग का करता शमन!

वह राष्ट्र का जलता हुआ हृत्पिण्ड, हा! अब खो गया,
वह शान्ति का प्रहरी,जगाकर आज सब को सो गया;
हम जी रहे निष्प्राण-से, संसार शव-सा मूक है,
माली गया उसका, अरक्षित-सा उपेक्षित है चमन।

वह बन गया अमिताभ, अपना आज नव इतिहास है,
तन से नहीं, यश से सदा उसका यहाँ आवास है;
हर व्यष्टि का आदर्श वह प्यारा जवाहर धन्य है,
वह है अमर जब तक यहाँ बहती रहे गंगा-जमन।

महाप्रयाण : दो लघु कविताएं

—रमेश मालवीय

(१)

बड़े नाजुक समय में—
वक्त की कगार ने टूट कर
तुम्हें हमसे छीन लिया !
शान्ति के स्वर्णिम प्रयासों पर—
अनास्था का तूफान जड़ दिया !!
...और हमें उसी घड़ी लगा
कि समय फिर दे गया असमय दगा।

(२)

तुम्हारा जाना आज भी टीसता है—
मानवता की रगों को।
एक अनचीन्हा-सा दर्द
आस्था की किरणों को मिटाकर—
रिस रहा है—जन-मन से।
अब हमारे हाथ में कुछ भी नहीं है,
जो कुछ हमारी अब तक की उपलब्धियाँ थीं—
उन्हें समय ने धक्का दे,
हमें गिराकर छीन लिया है।
...और अब चारों तरफ
विपत्ति-सने काँटों के,
बेतरतीब जंगल हैं...
या फिर—
रेतीले, चिलमिलाते मरुस्थल हैं
जिन्हें हम—
भूलकर तुम्हारे जाने का ग़म
अकेले पार नहीं कर पायेंगे।
लगता है
अभी-अभी लड़खड़ा कर गिर जायेंगे :

मृत्युंजय जवाहर

—श्याम कृष्ण

युग-निर्माता ! निष्काम कर्म के मूर्त्त रूप ! !
तुम जब प्रतीक बन गए शांति के, साहस के,
जब व्यष्टि न रह कर तुम समष्टि में बदल गए,
उत्तुंग शिखर पर जब तुम चढ़े महत्ता के,
जब कीर्ति-सुरभि ने लाँघी उपवन की सीमा,
विकराल मृत्यु की आँखों में अखरा उस क्षण—
व्यक्तित्व तुम्हारा और तपोमय आत्म-तेज !
इसलिए मृत्यु ने ईर्ष्यावश
अपने भुज-बन्धन फैलाकर
अपनी सत्ता का विजय-घोष चाहा करना
अस्तित्व तुम्हारा मिटा विश्व की आँखों में
लेकिन अजेय ! वह देख तुम्हारी कीर्ति-पताका फहराती
अगणित आँखों की यमुना में,
हो गई स्वतः पानी-पानी,
काला मुंह लेकर चली गई।
रह गया विश्व में शेष तुम्हारा उज्ज्वल यश,
हे मृत्युंजय !

वह गुलाब अब फिर न खिलेगा

—शम्भूसिंह 'मनोहर'

उठ गयी एक हस्ती ही जैसे आलम से,
वीरान हुआ-सा लगता आज चमन है।
अम्बर भी देखो आज रो रहा झर-झर,
अवसाद-सिन्धु में डूबा हुआ वतन है॥

वह गुलाब जिसमें झलकी थी कुर्बानी की लाली,
वह गुलाब जिसमें आजादी की हाला मतवाली।
वह गुलाब जिससे बहार थी मेरे इस गुलशन में,
वह गुलाब जिससे महकी थी वन की डाली-डाली ।।

वह गुलाब जो शीशफूल-सा माँ के मन भाया था,
वह गुलाब जो आँधी, तूफानों में मुस्काया था।
वह गुलाब जिसमें प्राणों ने गंध, रूप, रस पाया,
वह गुलाब जो जीवन भर आँखों में लहराया था ।।

वह गुलाब अब फिर न खिलेगा, केवल गंध रहेगी,
रोज सुबह-शबनम फूलों से उसकी कथा कहेगी।
उसकी भस्मी का हर कण ही बन पराग विलसेगा,
भँवरे उसको याद करेंगे, बुलबुल आह भरेगी ।।

एक अकेला अद्भुत मानव

—सुरेशप्रसाद सिंह

लिया कृष्ण से त्याग, और ली गौतम से शुभ शान्ति।
सत्य-अहिंसा महावीर से, गाँधी से जन-क्रान्ति ।।
समदर्शन पाया अशोक से, धर्मराज से टेक।
मिली भीम से निर्भयता, कौन्तेय सरिस उद्रेक ।।
गुण-ग्राहकता ईसा से ली, मिली राम से शक्ति।
राणा से राष्ट्रीय भावना, साधु विदुर से भक्ति ।।
था गाम्भीर्य पटेल सदृश, बालक-सा था चांचल्य।
हठपन था चाणक्य सदृश, मानव-मन का दौर्बल्य !
एक अकेला अद्भुत मानव, सचमुच बड़ा कमाल !
विविध दोष-गुण-युक्त पुरुष था वीर जवाहरलाल ।।

नेहरू जी अमरत्व पा गए

—गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर'

प्रलयङ्कर ने ताण्डव-सा कर, डिम-डिम डमरू पुनः बजाई,
हहर-हहर हहराने मानव, दुःख-विषाद-वेला-सी आई।
धसकी धरा, धराधर धधके, सब संसार विक्षुब्ध हो गया,
विश्व-शान्ति का अग्रदूत-सा, हाय ! जवाहरलाल खो गया।
विश्व-मानसर का सर्वोत्तम, दुर्लभ रत्न मराल खो गया,
वर वैभव वसुधा का प्यारा, आज अनोखा लाल खो गया।
दुःख-ध्वनि आई अवनि अवनि से, जन-जन लगे पीटने छाती,
अनायास असमय आकर ही, दुःख दे गया दैव अपघाती।
समाचार सुन सिसके कितने, कितनों ने निज जीवन त्यागा,
अन्तिम दर्शन का अभिलाषी, जन-समूह दिल्ली था भागा।
गङ्गा, यमुना, सरस्वती ने, अपनी गोद जिसे दुलराया,
निज प्रवाह, अवशेष उसी का, बिलख-बिलख कर स्वयं बहाया।
भस्मि भेंट भारत भर बिलखा, कण-कण करुणा-विह्वल रोया,
महा तपस्वी, साधक नेहरू, हाय ! महानिद्रा में सोया।
कर निष्काम कर्म जीवन भर, देव-तुल्य सम्मान पा गए,
विश्व-बंद्य बापू जैसा ही, जग अमरत्व महान पा गए।
पथ प्रशस्त दे गए विश्व को, मानवता के सफल पुजारी,
दृढ़ता से उसको अपनाएँ, तब श्रद्धाजलि सफल हमारी।
'शङ्कर' शान्ति सुरक्षा साधन, श्रेयस्कारी सरसाएँगे,
'जियो और जीने दो' की, अटल नीति हम अपनाएँगे।

जवाहरलाल नेहरू से

—गोपीनाथ 'अमन'

तुम चले गये संसार हो गया सूना,
सब को दुःख है, भारत को दुःख है दूना।
तुम चले गये चहुं ओर निराशा छाई,
आशा की कोई किरण नजर नहीं आई।

तुम चले गये अब फिरते है सब भटके,
तुम चले गये बढ़ गये देश के खटके।
तुम चले गये अब आव गया भारत का,
तुम चले गये रूआव गया भारत का।
क्यों कहूं कि छाया है चहुं ओर अंधेरा,
सन्देश तुम्हारा पथ-दर्शक है मेरा।
तुम नही रहे तो है सन्देश तुम्हारा,
क्या कारण हे, क्यों भटके देश तुम्हारा।
जो अमर ज्योति गांधी से तुमने पाई,
वह दुनिया के सब देशों में फैलाई।
है विश्व-मैत्री का जो सुन्दर नारा,
तुम चले गये, हम घोपित करें दुबारा।
तुम चले गये हो हमें योजना देकर,
जिस पर भारत का सब भविष्य है निर्भर।
सब मिलकर रहें—तुम्हारा था यह कहना,
अब मिलकर प्रेमसहित है हमको रहना।
तुम गये अभी बाकी है शिष्य तुम्हारे,
हैं सबल सभी यदि रहें न न्यारे-न्यारे।
तुम नही रहे, तुम नहीं रहे तो क्या है,
भारत जननी अब भी भविष्य गर्भा है!!

स्वतंत्रता का सेनानी

—हरिकृष्ण 'प्रेमी'

एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी।
खुशी कि है आजाद देश यह, गम कि गया अपना सेनानी।

यह पन्द्रह अगस्त है, जिस दिन देश हुआ स्वाधीन हमारा।
यह पन्द्रह अगस्त है, जिस दिन पशुबल मानवता से हारा।
लाल किले पर फहराया था हमने अपना झंडा प्यारा।
भारत है आजाद गुंजाया कोटि-कोटि कंठों ने नारा।

किन्तु छिन गया है स्वतन्त्रता के रण का निर्भय सेनानी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!

वह आनंद-भवन का वासी पला पालने में वैभव के।
छोड़ सभी ऐश्वर्य, शीश पर ओढ़ लिए उसने दुःख सबके।
भोग रहा था देश कष्ट जब पराधीनता के रौरव के।
जीते जी निष्प्राण बना यह भारत था समान जब शव के।
नई जान फूँकी तब उसने, जाग पड़े तब हिन्दुस्तानी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!

सुन ललकार पूज्य बापू की हुआ जवाहर था तैयार।
सर पर कफ़न बाँध कर निकला, छोड़े सुख, वैभव, घर-द्वार।
सतत देश-सेवा करने को तन-मन-धन सब किए निसार।
पूरी आज़ादी लेने की, कहा, हृदय में लो सब धार।
बढ़ी जवाहर के पीछे तब तरुणों की टोली तूफ़ानी।
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी।

बूढ़े पिता, जननि भी बूढ़ी, जीवन-संगिनी थी बीमार।
मातृभूमि के लिए जवाहर ने था सबको दिया बिसार।
पत्नी ने भी देश-प्रेम हित अपना जीवन किया निसार।
धन्य देश के लिए मर मिटा सारा ही नेहरू-परिवार।
शतशत घाव हृदय पर झेले, उसकी छाती थी चट्टानी।
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी।

था बापू के बाद जवाहर एकमात्र सबका रखवाला।
तूफ़ानी घड़ियों में डगमग नैया को अविराम सँभाला।
नई योजनाओं से भारत नए रूप में उसने ढाला।
उसकी इच्छा थी—हर घर हो नई रोशनी का उजियाला।
रूढ़िवादिता, अनय, अशिक्षा, निर्धनता है हमें मिटानी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!

भारत का ही नहीं, विश्व-भर का प्रिय था उसको उद्धार।
पंचशील का मंत्र फूँककर चाहा था फैलाना प्यार।
किन्तु चीन ने हमला करके पंचशील पर किया प्रहार।
दुःखी जवाहर का इस कारण हृदय कर उठा हाहाकार।

पीकर रक्त लाल हो उट्ठे शिखर हिमालय के वर्फ़ानी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!

जीवन के अंतिम क्षण तक जो करता रहा देश का काम।
मूलमन्त्र जिसने सिखलाया, है करना आराम हराम ?
झंडा फहराकर जो इस दिन देता था जग को पैग़ाम।
स्वर्ग धरा पर लाकर ही अब करना है हमको विश्राम।
महामौन में मिली महत्तम वह वाणी पावन कल्याणी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!

वह तो गया किन्तु हमको है उसका सपना सत्य बनाना।
एक जान होकर है हमको प्रगति-पंथ पर पाँव बढ़ाना।
आज पसीना ही क्या, हमको खुशी-खुशी है रक्त चढ़ाना।
नहीं परस्पर के झगड़ों में हमको अपना समय गँवाना।
भारत की माटी में मिलकर बोल रहा वह जीवनदानी !
एक आँख में आज खुशी है, एक आँख में ग़म का पानी !!
खुशी कि है आजाद देश यह, ग़म कि गया अपना सेनानी।

ओ रे युग-सारथी !

—भारतभूषण अग्रवाल

ओ रे युग-सारथी !
जब तुमने मुट्ठियाँ ढीलीं तो सारी गति बन्द हुई।
अचानक सब शोर थम गया।
बिजली फेल होने पर
फैक्टरी की मशीनें हों
ऐसे हर व्यक्ति, हर यान, हर वाक्य
जहाँ था वहीं पर सहम कर जम गया !
राजधानी अब मानो एक 'स्टिल' फोटोग्राफ है—
बढ़ा हुआ हाथ और उठा पैर अभी काँपता भी नहीं है

चेतना को स्नायु बनने में अभी देर है
अभी तो रुकी हुई धड़कन यह काल की
गुंजित है पूर्व और पश्चिम से
आज दीख गया है जड़ वह
जिसकी तुलना में जीवन जीवन कहलाता है !
जड़िमा का क्षण वह बीतने के पहले बोध दे गया।
तब हाथ काँपे
पैर लड़खड़ाये
फोन की घण्टियों में छातियाँ धड़क उठीं !
अन्त में आँसू की बूंदें लायीं वह विस्मय का भाव—
अरे ! बापू के बिना भी हम सत्रह वर्ष जी गये !

अग्निचरण निर्घोष वज्र का

—रत्नशंकर प्रसाद

संसृति ने कल्याण-यज्ञ में तुम-सा अग्नि-पुरोहित पाया,
अग्निचरण निर्घोष वज्र का, और कमल-सी कोमल काया !
निज-पर के अनुक्षुद्र भेद से तुम तो दूर बहुत थे,
निज बलि दे जगमंगलकारी, तुम तो शूर बहुत थे !
आत्म-चेतना के पार्थिव प्रतिकरण रहे तुम,
ग्रहण-त्याग के परे सहज संचरण रहे तुम !
शील शांति के लिए क्रान्ति की ज्वाल जगाई,
हिंसा के आलम्भन में करवाल उठाई।
लोक-चेतना तिमिर-अगति में रहा अचेतन,
दिया यत्न कर भारत को आलोक पुरातन।
वीर युगों के बाद तुम्हारे जैसा आया,
अनल-जवाहर पराधीन भारत ने पाया।
अब न दिखेगी जनमानस की मूर्त्ति कलापिनि,
सुप्त हुई मानो वसुधा की स्फूर्ति विलापिनि।

क्रान्ति तेज का पुंज प्रभास्वर सहसा लुप्त हुआ,
राष्ट्रचेतना का प्राणिक स्पन्दन अभिसुप्त हुआ।
किन्तु आर्य तेरे शोणित का पावन ओज हमारा,
जगती का उन्नयन करेगा, युग नयनों का तारा।

युग-देवता के प्रयाण पर

—परमेश्वर 'द्विरेफ'

सूने-सूने से हम रह गये!
श्रवण कर तुम्हारे प्रयाण को,
गहरा आघात लगा प्राण को,
गुमसुम अगणित गुलाब ढह गये।
सूने-सूने से हम रह गये!

युग के ओ युग-युग के देवता!
रो रहा तुम्हारा ये 'घेवता',
'इन्दु' को न मन की कुछ कह गए!
सूने-सूने से हम रह गए!

चलते-चलते ही तुम सो रहे,
कोटि-कोटि नयन सजल हो रहे,
सपनों के रंग-महल ढह गए!
सूने-सूने से हम रह गए!

नव मानव मूल्यों के रचयिता
यश को क्या निगल सकेगी चिता?
गंगा में भस्म-फूल बह गए!
सूने-सूने से हम रह गए!

नेहरू के देहावसान से तप्त

—इन्दु जैन

आज हम रोते हैं जिसके लिए
हमेशा हमारे साथ रोया
साथ बहुत हँस नहीं पाया
क्योंकि
कारण हमारी और उसकी हँसी के सदा से अलग रहे।

वो मजदूर जिसने हमेशा हमारे दर्द का ढोया बोझ
हमने जिसे मजूरी तक दी नहीं......
किस मुँह से
किन आँखों से रोएँ उसके लिए हम ?

उसके लिए अकुलाएँ मात्र बच्चे
जिन्होंने छुआ था उसे
मुरझा जाएँ फूल
जो मुसकुराते थे उसे
और हम
अपनी अकर्मण्यता की लज्जा से तप्त
अंधेरे में मुँह छिपा लें
पत्थर पर एकान्त में सर पटक दें
हाथ मलते हुए
छाती का तूफान रोक
फट जाने दें छाती ही।
या भरोसा रखें अपने चरित्र के अंधेरे पर
और, भूल जाने की क्षमता की लठिया पकड़
कुत्तों की तरह जबान निकाल हाँप लें दो दिन
फिर सुस्थिर हो
कीचड़ में धँसते हुए
मैले से बीन-बीन चीथड़े
स्वार्थ की गुदड़ी को वृहत् से वृहत्तर करते चलें।

आह ! मेरे आहत मन,
किन्तु एक तीसरी राह भी है
जिसके मुख सात ताले जड़ रक्खे हैं……
तेरे ही बीच से गुजरती है उम्मीद की पतली पगडंडी ।

आ, जरा हिम्मत कर
याद की सुलगा मशाल
और जला डाल मकड़ी के जाले
तोड़ दे ताले
दूसरे किनारे सूरज-सी उगी यही दिव्यात्मा
मंज़िल का रक्तिम निशान है……
वही……वहीं……
तेरी मेरी इनकी विहान है ।।

एक उदास पीलापन

—बालस्वरूप 'राही'

फूल एक गुलाब का
बटन-होल में टँका-टँका मुरझा गया
एक उदास पीलापन
सदियों के आर-पार छा गया !
काली चादर ओढ़े खड़ी हैं दिशाएँ—
जैसे साँवली शिलाएँ—
और छटपटाता हुआ पवन उन पर सिर पटक रहा है !

इतना बड़ा हादसा हुआ
किसी ने कुछ नहीं कहा
सिर्फ खामोशी एक डरे हुए बच्चे की तरह
वातावरण में थरथराती रही
बेकार हो गए हैं सभी लोग

किसी के पास करने योग्य कुछ नहीं रहा !
शब्दों ने अपने अर्थ इस तरह कभी खोए न थे
क्रियाएँ सभी इससे पहले हुई न थीं इतनी व्यर्थ !
इस तरह तो कभी भरी दुपहरी में सूरज डूबा न था
इतना काला कब हुआ था आसमान
कब मई के महीने में बादल यों बरसे थे
कब लोग इस तरह घंटों······घंटों······घंटों
बरसते हुए पानी में
गरजती हुई आँधी में
खड़े रहे थे पंक्तिबद्ध
इतने अनुशासित, इतने चुप और इतने अधीर !

आखिर वह किसका चेहरा देखना चाहते थे
क्या वह चेहरा
उन्होंने इससे पहले कभी देखा न था ?
आखिर उस चेहरे को क्या हो गया था ?
वह रोशनी बरसाता हुआ
एक नेता, एक संत, एक योद्धा का चेहरा !

हजारों···लाखों · करोड़ों···आँखें रो रही हैं
आँसू पोंछने वाली हथेलियाँ खो गई हैं
गूँगी हो गई हैं सान्त्वनाएँ
स्तब्ध हैं संवेदनाएँ
आखिर किस-किस को और कैसे समझाएँ !

इससे पहले कभी
इतनी बड़ी सख्या में लोग एक साथ रोए न थे
इससे पहले किसी
देश की जनता इस तरह अनाथ नहीं हुई थी !
और मैं (जिसका दिल बहुत कमजोर है शुरू से ही)
एक पागल की तरह भाग रहा हूँ
इस भीड़ से उस भीड़ तक
इस व्यक्ति से उस व्यक्ति तक

कोई तो कुछ कहो ऐसा
जिससे मेरी भी आँख में आ जाएँ आँसू
बर्फ की तरह जमा मेरा दर्द तनिक पिघल जाए।

युग की थाती

—सन्तोष आनन्द

रात रात भर नींद नहीं आती है,
नेहरू ! तेरी याद नहीं जाती है !

यूँ तो आने का मतलब है जाना,
कब किस की साँसों का रहा ठिकाना !
लेकिन तुझको अभी और रुकना था,
सदियाँ सौंप चुका था तुझे ज़माना !

जाने कितने बिसर गए मन-मन में,
जाने कितने बिछुड़ गए जीवन में !
किन्तु कमी तेरी बेहद खलती है,
दुनिया की क्या कहूँ, सकल त्रिभुवन में !

तेरी मर्यादा युग की थाती है !
नेहरू ! तेरी याद नहीं जाती है !

तू तो चलता रहा समय के आगे,
तूने जोड़े तकदीरों के धागे !
फिर कैसे वह दुष्ट घड़ी घिर आई,
जिससे आज करोड़ों बने अभागे !

अब तो हर आँसू तेरी पाती है,
नेहरू ! तेरी याद नहीं जाती है !

जवाहर लाल के महाप्रयाण पर

—डॉ० सुधेश

अरे विधाता क्रूर ! अरे निर्मम औ' निष्ठुर काल !
यह कैसा धोखा हमसे, यह कैसी कुटिल कुचाल !
सागर-बीच देश की नौका, उठा दिया भूचाल,
कैसे तुम से हाय ! छीनते बना जवाहर लाल !

धरती का कण कण रोता है, दिशा दिशा बेहाल,
सब से प्यारा रतन गँवाकर माता अब कंगाल।
तुंग हिमालय सोच रहा कुछ आज झुका कर भाल,
लाज बचाने आयेगा अब कौन जवाहर लाल ?

चारों ओर अँधेरा फैलाता-सा अपना जाल,
लायेगा अब कौन आँधियों में दीपक को बाल !
जल थल नभ में होता हिंसा का ताण्डव विकराल,
शान्ति अहिंसा का झण्डा फिर देगा कौन उछाल !

रोओ दिल्ली, महाराष्ट्र, यू० पी०, बिहार, बंगाल,
रोओ राजस्थान, पंचनद, केरल औ' गढ़वाल,
रे कश्मीर ! आज रख दे तू अपना हृदय निकाल,
मुरझाया तेरा गुलाब, खोया मोती का लाल !

रो ले दुनिया ! तू भी अर्पित कर आँसू की माल,
मानव-मुक्ति-मन्त्रदाता वह प्रजातन्त्र की ढाल।
उसके चरण चिह्न पर चल कर अपने कदम सँभाल,
जिसको पाकर भारत माँ की गोदी हुई निहाल !

जन गण मन अधिनायक जय हे !

—कमलेश सक्सेना

लहरें कहतीं हैं चिल्लाकर—रुको, अभी मत जाओ,
धारा की तेजी में इनको यों ही नहीं बहाओ।

अभी अधूरे स्वप्न बहुत हैं, वे पूरे होने दो,
और विसर्जन से पहिले भावों को फिर रोने दो।

अभी समय है, सीख बहुत हम फूलों से पायेंगे,
इनसे पूछेंगे—कैसे दुश्मन मुँह की खायेंगे ?
अभी शेष हैं प्रश्न अधूरे, उत्तर पा लेने दो—
उमड़-घुमड़ अन्तर की पलकों के पथ तक आने दो।

नेहरू चाचा निद्रा त्यागो, अपनी वाणी खोलो,
राष्ट्र और युग के निर्माता, बोलो, कुछ तो बोलो।
अभी शेष हैं इन फूलों में जीने की अभिलाषा,
अभी बहुत है इन फूलों से धरती को मधु आशा।

अभी नहीं अवकाश इन्हें है दुनिया से जाने का,
अभी नहीं विश्वास इन्हें निर्वाण सहज पाने का।
अभी नहीं थक पाये, साहस अभी कहाँ ये हारे ?
भारत माता के दुख से कातर हैं ये बेचारे।

अब तक हिमगिरि के हिम से है इनका अपना नाता—
जन गण मन अधिनायक जय हे भारत भाग्य विधाता।

दायित्व-बोध की वेला

—देवेन्द्र दीपक

२७ मई १९६४,
तपती दोपहरी,
प्यासे, हाँफते, रुआसे होंठों का जमघट।
कहीं कुछ खो गया है—
मोतियों की माला के टूटने और
रेत में मोतियों के बिखरने का अनुभव
बुझते दीप से उठती हुई धूम-रेखा की करुणा
डूबते सूरज की अन्तिम किरण की छटपटाहट !

ऐसा अनुभव अपूर्व
देश ने इससे पूर्व
कभी अनुभव नहीं किया।
आगे ?
उत्तर में आंखों में सन्देह की रेखा
बड़े वेग से हो गई है अंकित।

एक था :
जिसने अपने कन्धों पर हमारे बोझ को लादा था
हमारी आरत को बिगाड़ा था
वही जो एक था न
वह अब नहीं रहा।
शेर की माँद पड़ी सुनसान !

दायित्व के बोध की वेला—
अपना बोझ अपने ही कन्धों पर उठाना है
बबूल नहीं, अब गुलाब ही उगाना है,
जबान नहीं, कुदाल ही चलाना है,
अँगुली नहीं, समस्याओं को अंगूठा ही दिखाना है।

राष्ट्रीय संदर्भ में
आत्मबोध के दायित्व के प्रश्न में भरी-भरी
यह दायित्व बोध की वेला।

कलियों का गीत गुलाब के नाम

—रमेश 'रंजक'

बुझे नहीं तुम अमर हो गये।
जन जन की कालिमा धो गये॥
सच कहता हूं तुम को पाकर भारत माँ हो गई निहाल !
जय जय वीर जवाहर लाल॥

मोती जी को मिले जवाहर।
सुधर गया अपना छोटा घर॥
गुल महके कलियाँ मुस्काईं।
क्योंकि तिमिर को मिले दिवाकर॥
तुमने निज सुन्दर कर्मों से ऊँचा किया देश का भाल !
जय जय वीर जवाहर लाल॥

जितना प्रिय गुलाब था तुमको।
उतने ही प्यारे तुम हमको॥
हमको ही क्या पूरे जग को।
हर शायर की कलम कलम को॥
क्योंकि हमारा दर्द तुम्हारा, तुम थे विपदाओं की ढाल !
जय जय वीर जवाहर लाल॥

ओ युग प्रहरी !

—सोनसाय चौहान

नेहरू ! ओ युग प्रहरी ! !
सत्य के सूर्य
अहिंसा के आत्मज
तुम मेरुदण्ड थे
अधुनातन राजनीति के।
बर्बरता का मुँह
नोंच लेते थे
सन्मुख होकर—
यौवन पाता था तुमसे प्राण !
ओ मानवता के शिरस्त्राण,
तुम सरगम थे—
स्वातंत्र्य-गीति के !

शान्ति-दूत है अजर अमर

—शान्ति अग्रवाल

वही पवित्र पर्व है, वही दिवस महान है,
कि जब मिला स्वदेश को स्वतंत्र संविधान है।

परन्तु क्यों धरा उदास, क्यों अघोर-सा गगन!
हृदय हरेक अनमना, विकल सजल नयन नयन।
विशाल लाल दुर्ग के प्रसिद्ध तुंग द्वार पर—
स्वदेश का परम पवित्र ध्वज उठा लहर लहर।
अपार जन-समूह ने किया नमन निशान को
कि हाथ जोड़कर सुना सप्रेम राष्ट्र-गान को।
उठी हर एक दृष्टि तो, मगर न उस उमंग से,
हुआ स्व-राष्ट्र-गीत भी, मगर न उस तरंग से।
लगी किसी को खोजती अभावग्रस्त हर नजर
पुनीत शान्ति-दूत को पुकारती डगर डगर।

कहा किसी ने—है वही दिवस, वही निशान है
किन्तु नेहरू धरा पै अब न विद्यमान है।

मगर न जवाहर रहे, अनर्थ है, असत्य है,
निगल न काल भी सका उसे कि जो अमर्त्य है।
सतत प्रवाहिनी पुनीत गंग की लहर लहर,
सुना रही संदेश शान्ति-दूत है अजर अमर।
न भूल कर कहो कभी कि शान्ति-दूत सो गया,
रहस्य यह कि वह ससीम से असीम हो गया।
कि हर प्रफुल्ल पुष्प के पराग-पुंज में बसा,
कि हर खिली गुलाब की कली के होंठ पर हँसा।
विटप, लता-वितान, खेत खेत, पात पात में,
धरा की धूल में, असीम व्योम और वात में—

रमा स्वदेश-भक्त वह सदैव सावधान है,
रही जिसे स्व-प्राण से स्वतन्त्रता प्रधान है।

किसान हो अगर कुदाल, बैल, हल सँभाल लो,
सपूत देश के उठो कि कर्म की मशाल लो।

सजग सिपाहियो रहो कि अस्त्र-शस्त्र हाथ लो,
रहे सु-लक्ष्य सामने कि आत्म-शक्ति साथ हो।
तुम्हें स्व-मान की शपथ, तुम्हें स्व-प्राण की शपथ,
कि जिन्दगी में प्यार के मधुर विहान की शपथ।
अनेक प्राण होम जो मिली तुम्हें स्वतन्त्रता,
उसे सहेज लो कि जो न फिर छले अधीनता,
कि हर सपूत देश का स्व-कर्म में लगा रहे,
हृदय स्वदेश के पुनीत प्रेम में पगा रहे।

स्वतन्त्र देश की समृद्धि का यही विधान है,
पवित्र शान्ति-दूत का यही प्रशस्ति-गान है।

एक लाल गुलाब का फूल

—तीर्थराज मिश्र

कौन कहता है कि गंगा-यमुना के संगम पर
खिला : एक लाल गुलाब का फूल
मुरझा गया ?
वह अभी भी
हमारे और आप के दिल-दिमाग को
तरोताजा किए हुए हैं।
कौन कर रहा है
उसका अभिनन्दन आँसुओं से ?
जिसने संघर्षों में भी
मुस्कराते हुए
सबको हँसने की प्रेरणा दी।
कौन बनवा रहा है उसका स्मारक
ईंटों और सीमेंटों में ?
उसकी याद बच्चों की पीढ़ियों में
सदा के लिए समा गयी है।
आओ !

हम और तुम और सारा हिन्दुस्तान
उसकी कही हुई बात दोहरायें :
'यह एक ऐसा आदमी था
जो अपने पूरे दिल से और दिमाग से
हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानियों को
प्यार करता था;
और भारत के लोगों ने भी
इस पर खुले दिल से
प्यार उँडेला था !'

एक गुलाब लो

—शंकर माहेश्वरी

गांधी का वरद हस्त मस्तक पर,
निखिल विश्व घूम रहा भाल तले,
आँखों की चमक अहा !
मानो उजले कपोत, निर्भय भरते उड़ान ।
अन्तर का ऊर्जस्वित तेज मुखर मुखड़े पर,
वक्षस्थल करुणा का अपना आसन अविचल,
वैज्ञानिक कृतियों का शुक्ल-श्याम चलगाते कृती हाथ ।
चुस्ती की आकर्षण भरी चाल,
देती युग धरती को, अगले दृढ़ चरण चिह्न ।
जिसने व्यक्तित्व रचा, रीझ गया जादू वह ।
अपनी ही रचना पर,
रचना की भावना से,
रंग भरा तुहिन भरा, श्रद्धा मधु का गुलाब ।

जय जवाहरलाल की

—डा० एल० डी० जोशी

वह मानव था, मसीहा था, देवांशी दूत था,
बच्चों का चाचा वह भारत का पूत था।
गांधी का शिष्य वह विश्व में प्रिय था,
क्रांति का पूत वह शान्ति का दूत था॥

जिया न स्वार्थ के लिये, मरा न स्वार्थ के लिये,
देश और दुनिया के कार्य में प्राण दिये।
पंचशील, सत्य और शान्ति की नीति से,
राहत दी विश्व को युद्ध की भीति से॥

'आराम हराम है' का सूत्र दे सृष्टि को,
त्याग और श्रम का सबूत दे व्यष्टि को,
धम, जाति, भेद भूल मानवता-दृष्टि को,
स्वयं सबूत बन, दिशा दी सृष्टि को॥

नेहरू-सा मान नहीं, नेहरू-सा ईमान नहीं,
नेहरू-सा दुनिया में नायक हुआ ही नहीं।
हृदय-सम्राट था वह, भाग्य-विधाता था,
भारत का नूर, शूर, वीर व सुजाता था॥

धन्य भाग्य भारत के नेहरू-सा पूत हुआ,
धन्य भाग्य शान्ति के नेहरू-सा दूत हुआ!
कोटि कोटि कंठों से वाणी वृद्ध बाल की—
गूंजे दिगंत में जय जवाहर लाल की॥

तीन मुक्तक

—अनन्त चौरसिया

दिन के सफर के हौसले सूरज की आन हैं,
रातों में हुए फैसले चंदा की शान हैं।

जिस रास्ते पे हमको चला ले के नेहरू—
वह सत्य हैं, सिद्धान्त हैं, दुनिया की जान हैं !

सूर्य संघर्ष की फसलें सदा उगाता है,
चाँद मधु-पर्क देता है, उन्हें बढ़ाता है।
किन्तु जो राह में भूले हुए भटकते हैं—
नेहरू उनको सही रास्ता बताता है !

सूर्य संघर्ष है, उत्थान है, भलाई है,
चाँद संगीत है, वरदान है, बड़ाई है।
नेहरू नाम है संघर्ष का, आजादी का—
शान्ति से प्यार है, आराम से लड़ाई है !

शांतिघाट के सान्निध्य में

—डॉ० कृष्णनन्दन 'पीयूष'

चुप ही रहो, मौन होकर निरखो समाधि का रूप,
करो प्रणाम, यहाँ सोया नेहरू, शांति का दूत।
यह पूजा की भूमि, बढ़ाओ हाथ न, टेको माथ,
यह समाधि उस जननायक की जो कर गया अनाथ ॥

जिस मिट्टी में मिला तेज, वह मिट्टी भाग्य वती है,
सचमुच धरती शांतिघाट की यह सौभाग्यवती है।
आये हो यदि युद्ध-भूमि से क्लांत, तनिक सुस्ता लो,
पथिक, मींच लो अपनी आँखें, तनिक देर तो गा लो ॥

भूमि नेहरू की है यह, मिल सकती यहाँ न धूल,
चाहो तो मिल जायेगा तुम को गुलाब का फूल।
करो न आँखें सजल, यहीं पर छिपा विश्व का धन है,
यह समाधि है विश्व-पुरुष की, यही शांति का वन है ॥

१५ अगस्त १९६४ : जो जवाहर के बिना आया

—राजकुमार सैनी

पर्व मनायें या तेरा ग़म
हुए तुम्हीं से जब वंचित हम

युग स्वतन्त्र, पर युग अनाथ है
आज जवाहर नहीं साथ है
अश्रुपात करते जड़-जंगम
हुए तुम्हीं से जब वंचित हम

आज ध्वजा जब फहरायेंगे
नयन हमारे भर आयेंगे
कौन उड़ाये श्वेत विहंगम
हुए तुम्हीं से जब वंचित हम

इस दुःख को हम सहन करें या
राष्ट्र-दिवस-सुख वहन करें या
हमें बताओ अब खुद ही तुम
हुए तुम्हीं से जब वंचित हम

श्रद्धा-दल

—भैरवलाल 'राही'

आज श्रद्धा के सुमन देवत्व तुमको
भेंट करने आ गया है यह अकिञ्चन !

साँझ को सूरज सुबह का अस्त होकर ही रहा है
किन्तु शशि को रोशनी देता रहा है
सम हितों में,
उन दरिन्दों के लिए उड़ता रहा था
शान्ति का सन्देश धरती-पर लिए, वह !

एक ही तो विचरता था युग्म-युग-मानव धरा का।
आज सूना विश्व करके चल दिया
मानवी सङ्कीर्णता व दासता की बेड़ियों को झटककर,
जिसने युगों की दासता देखी—
प्रयत्नों को लिए वह साथ
मुक्ति-अर्चना में व्यस्त श्रम-धर
उपनिवेशों का मसीहा
विश्व के वातावरण में विचरता है—मुक्त होकर।

अब उसी के मार्ग पर मानव चलेगा
कारखानों में मनुज के प्राण को अमृत पिलाने
और खेतों में हलों की कीर्ति—
रोटी के गुणों का गान होगी
श्रम-खरीदारी युगों की बंद होगी
शान्तिमय आकाश में कंकाल—
देवों-सा उठेगा !
मूल श्रम का लाभ मानव को मिलेगा ॥

नेहरू नर-लोक में क्यों रुकते !

—गोमतीप्रसाद पाण्डेय 'कुमुदेश'

(१)

जिससे निज देश की उन्नति हो,
चलते उस नीति की चाल ही थे;
अति वृद्ध थे पै रग ही रग में,
रखते युवकों-सी उछाल ही थे;
लग पायी न घात है शत्रुओं की,
इक भारतवर्ष की ढाल ही थे;
इस विश्व में वीर जवाहरलाल—
समान जवाहर लाल ही थे।

(२)

राज्य की नीतियों में जिसने
दिखलाया सदैव कमाल, नहीं रहा;
साहस शीलता, शान्ति का जो
बना था दृढ़ दुर्ग विशाल, नहीं रहा;
विश्व में देश के गौरव का
कर के अति उन्नत भाल, नहीं रहा;
रो उठी भारत माँ उसका जब
लाल जवाहर लाल नहीं रहा।

(३)

उपदेशक शान्ति अहिंसा के और
वही सब के सुखदायक थे;
करते थे दया अरियों पर भी,
वे अलौकिक नीति विधायक थे;
प्रतिमा का प्रकाश लिये हुये थे
निज शौर्य में वे सुरनायक थे;
नेहरू नर-लोक में क्यों रुकते
अब वे सुर-लोक के लायक थे।

हे अहिंसा के उपासक

—हरिवंश अनेजा

हे जवाहर! भारती माँ के सबल सच्चे सपूत!
शोकमय है आज सारा विश्व तेरे निधन पर।
छा गया पतझार सहसा वेदना-संताप का,
आह! भारत के सुविकसित लहलहाते चमन पर॥

यों हुआ आभास जैसे तरु-सुमन आह्लाद के,
शोक-मदिरा के चषक उँड़ेल कर मदमत्त हैं।

'खिल उठेंगे कुछ क्षणों में' यह लिए मन में विचार,
नींद में डूबे हुए, निश्चिन्त हैं, उन्मत्त हैं ॥

किन्तु तुझ-से प्राणपद की देह के अस्तित्व से,
ये अभी अनभिज्ञ रह कर देखते हैं एक ख़्वाब।
ज्ञात क्या इनको कि जिसकी आस पर थे जी रहे,
हो चुका वह दूर विश्वोद्यान से तुझ-सा गुलाब ॥

लग रहा है यों कि जैसे अङ्क भारत-मातृ का,
हो गया सूना, निरन्तर दर्द देने के लिए।
डगमगाती, लड़खड़ाती नाव उसकी चल रही,
दीखता माँझी न कोई आज खेने के लिए ॥

युग-प्रणेता, शान्ति-साधक, जन-हृदय के देवता,
हो विलग तुझ से सकल संसार है अवसादमय।
हे अहिंसा के उपासक! पथ-प्रदर्शक प्रेम के,
युग-युगों तक नाम तेरा हो अमर, अविकृत, अजय ॥

हिन्द के दिनेश

—गिरिजादयाल "गिरीश"

(१)

संसृति-तड़ाग में प्रफुल्लित प्रमोद-युक्त,
जन-सरसीरूह समस्त त्रस्त हो गये।
अक्रिय अलोकनीय शोक-ओक लोक-लोक,
व्योमचर प्रगति-विहीन पस्त हो गये।
प्रकृति अचेत हूक-पूरित दिशायें मूक,
चहल-पहल के महल ध्वस्त हो गये।
अन्धकार घोर अवनी पै और अम्बर पै,
हिन्द के दिनेश नेहरू, हा अस्त हो गये!

(२)

नागर सुनीति में गुणागर गँभीर धीर,
जगत उजागर स्वराज्य-चालकों में थे।
सरल स्वभाव तुंग तरल सुभव्य भाव,
प्रबल प्रभाव दृढ़ प्रणपालकों में थे।
जागरूक जीवन में नेहरू जहान बीच,
विदित विशेष दुख-द्वन्द्व-घालकों में थे।
वृद्ध वृद्धगण में युवक युवकों के मध्य,
बालक-समान सविनोद बालकों में थे।।

(३)

जन-मन-मानस के मीन-अमलीन पीन,
प्रेमलीन कर्म-मन-वाचा नेहरू जी थे।
हिन्द तरणी के सिद्ध नाविक विशेष विज्ञ,
सौम्य श्लील पंचशील-साँचा नेहरू जी थे।
दम्भहीन सज्जन समाज के हितैषी, किन्तु,
द्रोहियों के मुख पै तमाचा नेहरू जी थे।
प्यार करते ही रहे जिनको अपार, उन
प्यारे बालकों के प्रिय चाचा नेहरू जी थे।।

वह फिर फिर उगेगा

—डॉ० केशनीप्रसाद चौरसिया

मेरी तीन चार वर्ष की छोटी बच्ची : कान्ति ही नहीं
जब कभी पत्र-पत्रिकाओं में तुम्हें देखती है—
तालियाँ बजाती हुई बच्चों की टोली बेतहाशा कुलक उठती है
'चाचा नेहरू, चाचा नेहरू !'
ओ इतिहासजयी ! चिर तारुण्य के प्रतीक !
नवीन भारत के निर्माता !

कितने गहरे, कितने गहरे जन-मानस में तुम पेवस्त हो गये हो
उमड़ती-उफनाती भीड़ के मरकज !
तुम कितने थे सबके निकट
वस [illegible] दिल से यही निकलती थी गूँज :
अरे हमने उसे देखा, हमने उसे देखा……
सच, किसे ? अपने प्यारे जवाहर को रे—
"जिसने अपने समूचे दिल और दिमाग से हिन्दुस्तान
को और हिन्दुस्तान के लोगों को प्यार किया और
बदले में उन लोगों ने खुले दिल से अपना सारा-सारा
प्यार बखुशी उस पर उँडेल दिया।"
ओ भारत के कोटि-कोटि नौनिहालों के "चाचा" (?)
ना, पितामह, पर कब तुम्हें बरदाश्त था कि
बच्चे तुम्हें बूढ़ा कहें :
साक्षी है समय का वह अनाहत चक्र
स्वातंत्र्योत्तर : ढलती आयु की खिली सत्तावन वर्चस्वित पाटल—
पंखुड़ियों पर श्रम के ओस-बिन्दु चमकाये हैं :
सोलह-सत्रह घण्टे काम कर हर रोज अनवरत, अनथक
समयाभाव से किताबें तकिये के नीचे पड़ी-पड़ी तुम्हें
यानी "चाणक्य" को कोसती रही हैं
फुसलाते रहे हो उन्हें हवाई जहाज की तेज रफ़्तार में
झटकों के बीच "मेरी कहानी" के कथाकार, चित्रकार,
कवि-हृदय !
ओ परिपूर्णता के पुजारी ! कभी कभी खीझ उठते थे
तुम बेवजह
आपे से बाहर हो जाते थे
इसीलिए न कि तुम्हारे चारों ओर की अधूरी बेतरतीब
बिखरी चीजें—
और अधूरे भदेस चेहरे तुम्हारी बौखलाहट को बढ़ाते रहे हैं
बौनों के बीच महाकाय !
विवशतापूर्वक तुम अनुभव करते रहे हो कि सब
कुछ मुझे ही करना है !
"दूर बहुत दूर—जाना है सोने से पहले"

"एकला" चलना है : निपट एकाकी
दूसरों पर निर्भर रहने के मानी हैं : निराशाओं को न्योतना !

\+ + +

चुप रहो जी, कैसे तुमने हिम्मत की यह कहने की कि
"पंडितजी नहीं रहे"
अरे अभी चन्द रोज पहले ही तो उन्होंने हँसते हुए कहा था :
'इत्ती जल्दी नहीं जाने का भाई !'
तुम गये या नियति का निष्ठुर व्यंग्य तुम्हें छीन कर ले गया
हमसे, हम सब से—अब हमारे पास बचा ही क्या है
"हमारे जीवन से प्रकाश चला गया और चारों ओर
अंधकार छाया है"
एक सन्नाटा, चुप्पी, आँसुओं के न चुकने वाले लखलहाँ क़तरे
एक वैक्यूम, कहाँ जायें, क्या करें ?
कहाँ गया वह जो बापू के बाद बापू की वाणी बोलता था
पूर्व का अतीत, पश्चिम का सम्बुद्ध ज्योतिस्फीत
गांधी का राजनीतिक मणिदीप, रवीन्द्र का संगीत
न तो कमबख्त आकाश रोया और न धरती धंसी
सब जैसे के तैसे रहे : सुस्थिर, स्थितप्रज्ञ
क्यों रोयें ? वह कहीं गया नहीं रे
कश्मीर से केरल तक, अटक से कटक तक
दूर दूर तक खेतों में, माटी की सोंधी महक में जज्ब हो गया है
वह फिर फिर उगेगा : मरण के महाज्वार को मथता
कोटि-कोटि लहराते अँखुवों में, भास्कर की रश्मियों में
दौड़ेगा मलय की शिराओं में, गरजेगा नीर भरे मेघों में
जन-जन के तन-मन को माँजेगा, ज्योति के स्फुलिंग सुलगायेगा
बूँद-बूँद में समुद्र बनकर लहरायेगा
वह कहीं गया नहीं रे, भला वह हमें छोड़कर जायेगा कहाँ ?
हमने ही उसे जो "इत्ता प्रेम और इत्ती मुहब्बत दी है"
शताब्दियों तक प्रतीक्षा करने की कोई जरूरत नहीं।
....

गुलाब से प्रश्न उर्फ़ जवाहर की याद

—डॉ० वचनदेव कुमार

ओ रे गुलाब !
इतने बेआब हो आज क्यों ?
जिसकी प्रतिभा की एक किरण ले विकसे तुम
जिसकी निष्ठा की नन्हीं फुहार से लहरे तुम
वह जवाँ हर घड़ी जवाहर है कहाँ ?

ओ रे गुलाब !
तुम्हारी लाली है ग़ायब आज क्यों ?
जिसके हृदय में फूटा हो अहरह मानव-प्रेम का उत्स
जिसकी नस-नस में छाया हो दुर्लभ देशानुराग
लाख-लाख लालों को बेपनाह कर
लालों में बेमिसाल वह लाल है कहाँ ?

ओ रे गुलाब !
तुम्हारी खुशबू रुखसत हुई है आज क्यों ?
जिसकी हर साँस में निविष्ट हो लोकोत्तरता की सुगंध
जिसकी हर आस में मुद्रित हो उदारता का अनुबंध
हर बेआबरू पर बरसाने वाला नेह का मेह
वह नायाब नरसिंह नेहरू है कहाँ ?

मेरे प्रश्नों के बाड़े लगे हैं तुम्हारे चारों ओर
उत्तर नही दिया तुमने
तो भावी पीढ़ियाँ—संततियाँ
तुम्हें भी कभी जिन्दा नहीं छोड़ेंगी।

सूरज लो डूब ही गया

—माहेश्वर तिवारी 'शलभ'

सामने पहाड़ों की शृंखला,
सूरज लो डूब ही गया !

सुबह जिन गुलाबों में की ताजी गंध
तोड़ गयी है आकर शाम ।
हम अंधी गलियों में भटक रहे,
ले लेकर सूरज का नाम ।

गोधूली ने आकर खोली
गहरे अंधियारे की अर्गला ।
सूरज लो डूब ही गया ।।

धरती ने माँगी रथ की अन्तिम धूल,
खोल कर हवाओं के हाथ ।
नदियों ने माँग लिये कलश भरे फूल,
पर्वत ने टेक दिये माथ ।

मुट्ठी भर सूर्य का प्रकाश ले
दिखता नक्षत्रों का सिलसिला ।
सूरज लो डूब ही गया ।।

तेरा अमर गुलाब

—केदारनाथ 'कोमल'

तेरी मुसकान—
बन गई है
जिन्दगी की शान ।
तेरी निगाहें—
खोल दी हैं जिन्होंने
धरती के कोने में
चाँद-सूरज-सी राहें !
तेरे हाथ—
आसमान को चूमने लगा
मानव का माथ !
तेरा अमर गुलाब—

बन गया है
इनसानियत की
श्राबोताब !

नेहरू : एक व्यक्तित्व

—गोपालकृष्ण उपाध्याय

नेहरू बालक :

अधरों पर मुस्कान
चौकड़ियाँ भरता
काजू उछालता
नौनिहालों संग दौड़ता !

नेहरू किशोर :

अध्ययन में रत
पुस्तकों के पीछे
एक महा मनीषी
समय के आगे !

नेहरू युवक :

खून में जोश
बापू के वरद
जेलों के क्षण
पुस्तकों का वरण !

नेहरू प्रौढ़ :

जनता के नायक
एक कुशल शिल्पी
राष्ट्र को तराशते
जन गण जय गाते !

नेहरू वृद्ध :

मानवता का पथ
पथ के दावेदार
अकेला भारत नहीं
विश्व थाम चलते !

नेहरू आत्मा :

एक गुलाब फूल
एक अमरता संदेश
शांति के वन में
एक चिर शांति !

अन्तिम यात्रा

—श्रीराम वर्मा

(१)

क्या पता था
फूल
बिजली का
खिलेगा एक दिन
बादलों में
फिर वहीं खो जायगा

इन्द्रधनुओं ने रचा था
आ स मा न
मान ही मिट जायगा
क्या पता था
आस आँसू में
बदलकर ही रहेगी
एक दिन

माँ की ढूँढती आँखें ज्यों
'विनत फूलों भरी अंजुली'
झर रहे हैं लाल-लाल गुलाब
पंखुड़ी पर पंखुड़ी

हृदय तक जो फूल
पहुंचे ही नहीं
अधर बनकर चूमते हैं
राख

हवा में
ज्यों
हाय
उड़ते डकोटे से
झर रही है राख
गंगा नदी
फिर बहा ले जायगी
अन्तिम सदी

ओ अजेय, समय-सिद्ध साधक ओ !

—डॉ० स्वर्णकिरण

कैसे मिट पाए व्यक्तित्व की विनेयता ?
चट्टानी दृढ़ता से
जोड़ा जो पूर्व की धारा को पश्चिम की धारा से,
समय-सिद्ध साधक ओ !
अचरज है,
कैसे तुम बन गये 'श्रद्धालु नास्तिकता' की प्रतिमा ?
जंग लगी संस्कृति की सुई साफ हुई
जीवन का नया अध्याय खुला;
नया मंत्र गूँजा जो 'आराम हराम' का

नया मूल्य औ' नयी प्रतिष्ठा पा,
श्रम मुस्कुराया
औ' कच्ची जिजीविषा पंख फड़फड़ा उठी;
पाटल के सौरभ में माती सिसृक्षाएँ दौड़ीं जो,
नये स्वर सुन-सुन कर
मानवता हो गई निहाल,
अवरोधित दिग्कंठ सब मुखर हुए,
चिंता की झुरियाँ प्रकटित ललाट पर
संकेतित करती जो
बोधों के सामने मुश्किल कुछ भी नहीं;
छोटों से बड़ों में भर गया साहस
औ' खिच गयी आशा की एक अमिट रेखा भी,
दृष्टि की फुहारों से सिचा हुआ रास्ता,
कितना विस्तीर्ण औ' कितना आकर्षक है
सामाजिक मगल के नये स्वप्न द्रष्टा, औ' पंचशील के अदम्य विश्वासी,
अभी भी लगता ज्यों
गध-भरित कमलों के पटल खुले, धुले-धुले,
युग पुरुष,
ओ अजेय, समय-सिद्ध साधक ओ !

अभाव

—मणि मधुकर

यात्री यहाँ कोई नहीं है
सब अपने-अपने घरों में
भीगे, भारी कम्बल ओढ़कर सो रहे है
भीतर सपनाते हैं
बाहर कॅपकॅपाते हैं

अंधेरे
किसी धन की टोह में
चोरों की तरह
गलियों में छुपे-छुपे चल रहे हैं
दो अन्धे बैल
ढूँढ़ रहे हैं
मकानों के दरवाजे
एक बूढ़ी खाँसी
बार-बार
वातावरण की परतें उघाड़ देती है !

कहीं, किसी का स्कूली बच्चा
नींद में
कभी व्याकरण घोटता है
कभी पहाड़े बोलता है
अँगीठियाँ ठंडी पड़ी हैं।

तवे के दोनों ओर
कालिख ही नजर आती है !
शान्ति-वन में
तपस्या-लीन हैं मनु
उन्हें जगाये कौन ?
इड़ा चुप है
श्रद्धा किंकर्त्तव्यविमूढ़ !

रंगमंच पर
अब कोई दृश्य नहीं है
सिर्फ पर्दे हैं—रंग-बिरंगे पर्दे
जिनमें हवा सलवटें डालती है
नेपथ्य में तीव्र कोलाहल की पीड़ा है
'ग्रीन-रूम'
मुखौटों की सजावट से चकित है
—दृष्टियाँ विभोर हैं।

रोशनियों की जिल्द में बँधी हुई किताब,
छत-मुंडेरों पर श्वेत कबूतरों की पाँत,
टहनी पर मुखरता हुआ गुलाब,
समय के पुल पर चढते हुए सूरज के कदम
और हर चौराहे उफनते हुए किरनों के जुलूस
—कहाँ गए ?

पता नहीं
यह किस लोक की रात है
और यहाँ सुबह कब होती है ?

महानिर्वाण पर

—नवल

कहीं कुछ नही हुआ
सिर्फ हवा काँपी : थरथरा कर रुक गयी ।
कबूतर नही उड़े
गुलाब नहीं रोए
दूर दूर तारों के जाल पर बुझी नहीं बत्तियाँ
धरती नही फटी, वज्र नहो टूटा
पर यह क्या हुआ जो तमाम हलचल को डस गया सन्नाटा !
एक क्षण !
सिर्फ एक क्षण के बाद
वही शोक सभाएँ, श्रद्धाजलियाँ, भाषण,पत्रों के विशेषांक
स्मारक की योजनाए !
वही क्रम
जो तूने वर्षों तक देखा, महसूस किया
(पर सहा नही)
ओ रचयिता ! आज तू स्वयं किसी रचना का पात्र है
इतिहासज्ञ ! आज तू स्वय बन गया इतिहास है !

कहीं कुछ नहीं हुआ सिर्फ म्यूज़ियम में बढ़ गया है एक और चित्र
समय आया और दे गया है कुछ फूल
जिनकी सुगन्ध हम तक नहीं पहुँचती
कुछ कांटे—संवेदनहीन पत्थरों पर जिनका कुछ असर नहीं !
सचमुच कुछ नहीं हुआ
सिर्फ जग गया है सोया हुआ कोई दिन
अँधेरा निगलने को नन्हीं एक सीप-किरन
कुछ छप्पर, कुछ घर
जहाँ कोई श्रद्धा स्वप्न नये बुनेगी
चित्र कई गढ़ेगी
संकल्पों के सूरज को कई बार जन्मेगी !

हे युद्ध-रहित संसार मूर्त्त

—ब्रजनाथ गर्ग

हे ! दर्शनातीत, दर्शन-दर्शन
इतिहास-लोक के मूर्त्तिमान अभिनव मानव।
हे दधिचि के अस्थिजाल
तुमसे परास्त था युग-दानव।

तुममें रक्षित था युग का यश, अपयश, वैभव
हे त्याग मूर्त्ति ! हे नीलकंठ !

हे ! स्वप्न लोक,
स्वर-लोक बनो
सबकी स्वासों के स्वांस बनो
तुम भेद-दृष्टि का करो अन्त,
सबकी दृष्टि में सृष्टि रचो।

तुम दृष्टि, दृष्टि में दृष्टि बने
तुम प्राण प्राण में सृष्टि बने

तुम देश काल की सीमाओं को लांघ, अमर स्मृति बने।
तुम हो अजेय, तुम हो अगेय,
जग-मुक्ति-प्राप्त
हे शान्तिदूत,
हे युद्ध-रहित संसार मूर्त्त
तुमको प्रणाम।

मत भूलना कहीं भारत

—नीरव

स्वर्ग के स्वर्ग धराधाम के प्यारे भारत,
आज ठहरे हुए असहाय समय को मत देख।
एक युग-संधि के संसार में कुसमय आये,
डूबती आँख के उद्दाम प्रलय को मत देख!

जन्म से मृत्यु और मृत्यु से जीवन निकला,
इसलिये मृत्यु की अविराम प्रगति साधन है।
तू अमर! मुक्ति मधुर एक विश्व जीवन के,
नव्य-निर्माण को लख, भग्न हृदय को मत देख!

आज अनमोल लाल खो गया जवाहर-सा,
तो कभी बुद्ध युधिष्ठिर कभी ईसा लेनिन।
विश्वहित, हेतुरहित रात-दिन करने वाले,
गांधी-से दिये इस भूमि ने कितने गिन-गिन।
तू इसी मृत्यु-जित आदर्श पर रहने वाले,
कर्म के पार्थ! कर्म-पंथ के भय को मत देख!

विश्व का मंच, किया चाव से अभिनय जिसने,
देवता एक यहाँ आदमी बन कर आया।
बाल या वृद्ध युवक ग्राम-ग्राम घर-घर में,
प्रेम की शक्ति परख, काल अनय को मत देख।

एक कृति थी अनूप एक नव्य संस्कृति की,
वह, कि पाकर जिसे शत काम हुआ स्वर्ग धनी ।
आज प्रभविष्णु धराजिष्णु वह नेहरू न रहे,
किस चरण पर हुई निरुपाय हाय ! यह अवनी ।
इस तिमिर जाल में उस तेज का रवि-रथ लेकर,
और बढ़, हानि के व्यापार अजय को मत देख !

कल्प के कल्प तुझे गर्व से निहारेंगे,
क्योंकि पदचाप से आलोक वह रहा होगा ।
जो पथिक छोड़ गया इन नवीन राहों में,
वह कहीं दूर से हर श्वास कह रहा होगा—
प्राण के प्राण रे ! मत भूलना कहीं भारत,
मैं तुझे देख रहा, तू किसी क्षय को मत देख !

घिर घिर आई याद

—उद्भ्रान्त—

घिर-घिर आई याद तुम्हारी इन नयनों में,
याद तुम्हारी इन नयनों में घिर-घिर आई !

आज तुम्हारे बिना सभी हो विकल रहे हैं,
रह-रह कर तुमसे मिलने को मचल रहे हैं ।
बार-बार वह छवि नयनों में झूम रही है,
नगरों में, ग्रामों में, घर-घर घूम रही है ॥

कभी-कभी सब सूना-सूना-सा लगता है,
दुःख तुम्हारा दूना-दूना-सा लगता है ।
असमय ही तुम चले गये हो इस दुनियाँ से,
जब कि तुम्हारी स्वर्गिक छवि के हम थे प्यासे ।

एक हँसी पर कितने न्यौछावर होते थे,
किंचित् चिंता होती, कितने नर रोते थे ।

मुखमण्डल तो तेजोद्दीप्त रहा करता था,
तम में भी वह रवि-सम तेज दहा करता था।

क्या फिर ऐसा मानव जग में हो पायेगा ?
क्या यह अमिट कलंक कभी जग धो पायेगा ?
क्या फिर नेहरू की वाणी जग में गूँजेगी ?
क्या कोकिल मधुबन में आकर फिर कूजेगी ?

आज तुम्हारी याद हृदय को मथ देती है,
अन्तर में जा, ढुलका आँसू-कण देती है।
फिर-फिर आई आज तुम्हारे कार्यों की सुधि,
आज तुम्हारे कार्यों की सुधि फिर-फिर आई !

घिर-घिर आई याद तुम्हारी इन नयनों में,
याद तुम्हारी इन नयनों में घिर-घिर आई !!

अभी मुझे आराम कहाँ है

—प्रसाद 'निष्काम'

पीत, श्वेत, ये हरे रंग हैं, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् जैसे।
इन रंगों में खिला, देख लो सुमन शांति-तट पर है कैसे !
कहा कृष्ण ने देखो भारत, मैं भारत का वीर जवाहर !
विश्व-युद्ध की ज्वालाओं में, मैं हूं स्वर्णिम-प्रात दिवाकर !!
जाग रही है अरुणोदय-सी, मेरी सर्वोदय अभिलाषा।
समाधिस्थ हूँ, शांति-घाट पर, जीवित मेरी शांति-पिपासा ॥
हृदय-वाद मेरा व्यापक है, स्वर्ग-सृजन मेरी प्रवृत्ति है।
अथक किये हैं कर्म धरा पर मोक्ष नहीं मेरी निवृत्ति है ॥
मैंने तो सब कुछ कर डाला, तुम निमित्त केवल बन जाओ।
शांति-सुखों के साक्षी होकर, जीवन में ही मुक्त कहाओ ॥
मुझ पर फूल चढ़ाने वालो, शांति-सुखों के ओ रखवालो !
काल कुचाल न चलने पाये, मानवत्व को अमर बना लो ॥

यदि विप्लव हो कहीं विश्व में, तुम मेरी समाधि पर आना।
जगत पिता बापू सोये हैं, उनसे पहले मुझे जगाना॥
देखूँगा मैं जाग-जाग कर, दानवत्व का नाम कहाँ है।
शिला-लेख यह खुदवाना तुम, 'अभी मुझे आराम कहाँ है।'

परिवर्तन

—वीरेन्द्र 'दीपक'

समय के बगीचे में खिला हुआ एक लाल गुलाब
जो माली का ही नहीं
चमन का भी प्यारा था
(चमन : जिसमें काँटे भी शामिल हैं)
आज मुरझाकर गिर पड़ा है,
पंखुड़ियों का रंग उड़ गया है
(बिल्कुल विधवा की माँग की तरह)
फूल के अवशेष मिट्टी से मिलकर एक हो गये हैं
(जैसे आत्मा परमात्मा से मिलती है),
लेकिन फिर भी कुछ शेष रहा है·········
अखंडित विश्वास
और यादों के गुलमोहर······
परन्तु सब कुछ ऐसा लग रहा है—
जैसे बसन्त के बिना पलाश।
हवाएँ फिर भी गुजरेंगी
(इस बगीचे से भी)
एक आवाज उठेगी सम्बोधन के लिये :
ओ काँटों के हमराज······
ओ बीसवीं सदी के एक मात्र लाल गुलाब ···
तुम कहाँ हो ?
नीरव वातावरण, खाली-खाली-सा भरा मन
उदास घेरों के केन्द्र पर कुछ परेशानियाँ

आकाश के केन्वास पर वियोग के केक्ट्स
एक मौन उत्तर देंगे,
(जिन्हें सिर्फ धड़कनें कहती है
और सिर्फ धड़कनें ही सुनती है)
और हवाएँ आगे बढ़ जाएँगी।
नई पीढ़ी की अमराई में
एक नवागत बौर कोयल से पूछेगा
हवा उदास क्यूँ है ?
कोयल कहेगी : इतिहास के पृष्ठ पर किसी ने
एक लाल गुलाब लिख दिया है !
और चमन से किसी ने एक लाल गुलाब मिटा दिया है !!

बार-बार जननायक पावें

—व्रजगोपाल दास अग्रवाल

शान्तिदूत हे वीर जवाहर! लाल अनोखे भारत माँ के।
स्वतंत्रता के सेनानी तुम, 'चाचा' प्रिय नन्हे-मुन्नों के।।

स्वर्ग बनाना जगती को यदि, मानव की रखनी मानवता;
पंचशील ही एक राह है—समझाते थे इसकी गुरुता।

पंचशील का वह आराधक, आज विश्व से दूर हो गया।
मानवता का वह शुभचिन्तक, हाय, उसे कमजोर कर गया।।

दो दिन पहले ही केनेडी-हत्याकाण्ड सुना था सबने।
विश्व रो पड़ा हाय-हाय कर, छाती पीटी थी दुनियाँ ने।।

जीवन की यह क्षणभंगुरता देखी थी सबने उस क्षण में।
महाकाल का पौरुष लेकिन देखा अब दिल्ली-अंचल में।।

लड़ता रहा जीवन भर गौर-कृष्ण का भेद मिटाता।
और दूसरा घूमा अविरल बुद्धदेव-सा शान्ति मचाता।।

आज विश्व सूना है खोकर केनेडी औ' पंडित जी को।
मानवता को इनका आश्रय चला गया अब सदा-सदा को॥

नाथ, शक्ति हमको दो ऐसी, सहन करें यह क्षति दृढ़ता से।
बार-बार जन-नायक पावें, केनेडी पंडित जी जैसे॥

हे तपःपूत

—गिरिराजशरण अग्रवाल

हे राष्ट्र।गुरु
थी मधुरिम मुस्कान भव्य ऐसी
जैसे विहँस रहा हो सरसिज सर में—
देता हो रसदान।

हे तपःपूत !
भारत माँ के सच्चे सपूत
तुम शान्त क्रान्ति के उन्नायक
भारतीय संस्कृति के अग्रदूत।
फैला जाये क्षण भर में
मानवता की बयार
तुम वह मारुत।

तुम भोले थे, पर शंकर थे
अन्यायों के नाश हेतु
विप्लवकारी प्रलयंकर थे
जो धरती के दुःख हरने को
सुख की नौका को तरने को
प्राणों की परवाह न कर
जीवन की भी चाह न कर
थे कालकूट विष पीने को तैयार सदा।
अमृत की धारा लहराये इस धरती पर

अरमान लिए अपने मन में
अवतरण समय पर गंगा के
कन्धों पर सहने भार सदा
थे तत्पर औ' तैयार सदा।
वीणावादिनी के वरद पुत्र !
हे जनता के रक्षक महान्
तव अदम्य उत्साह
फूँकता था जन-जन में नये प्राण !

हर युग में पैदा होता है नेहरू-सा इन्सान यहाँ

—रमेश गुप्ता 'चातक'

[मंच पर शोक-ग्रस्त भारती साक्षात् करुणा की मूर्ति-सी दिखाई देती है। पास ही दो बालक खड़े हैं : 'स्वतंत्रता दिवस' और 'बाल दिवस'! स्वतत्रता दिवस के हाथों में तिरंगा लहरा रहा है और ऐसा प्रतीत होता है मानो कुछ कह रहा हो—]

तिरंगा— माता हो तुम दुःखी, मगर यह प्रश्न जरूरी है मेरा,
दिनकर असमय अस्त हुआ, क्यों रिक्त हुआ आँचल तेरा ?
लालकिले की दीवारों पर कौन मुझे लहरायेगा ?
कौन सलामी देगा मुझको, कौन मुझे दुलरायेगा ?
आजादी के हवन-कुण्ड में जीवन की समिधाएँ दीं।
बदले में केवल हमने जगती भर की विपदाएँ दीं !
भरी जवानी दान में ले ली, और बुढ़ापा व्यर्थ में !
न्यायोचित है कर्म हमारा, तुम्ही कहो किस अर्थ में ?

भारती— ठीक बात है ध्वज तेरी, लेकिन तू मत घबराना !
कोई भी तुझको लहराये, मुक्त पवन में लहराना !

बाल-दिवस—'माता! मेरा क्या महत्व है?' बाल दिवस जब बोल उठा,
नभ की आँखें भीग उठी, धरती का हृदय डोल उठा !

बच्चे मुझसे पूछ रहे हैं, नेहरू चाचा किधर गये !
हर गुलाब की पाँखुरियों पर उनके आँसू बिखर गये !
केवल चाचा की याद, यहाँ पर तस्वीरों में जिन्दा है !
ऊपर उठे हुए हाथों में, श्वेत-शांति-परिन्दा है !
क्यों तेरी जीवन-थाती को काल-लुटेरा लूट गया ?
बच्चों से प्यारे चाचा का सचमुच नाता टूट गया !
तुतली-तुतली वाणी में वे पूछ रहे मुझसे माता !
क्या जवाब दूँ उनको बोलो, कहाँ गये उनके चाचा ?

भारती— मेरे बच्चे अधिक न रोना, एक दिन ऐसा आयेगा !
हर बच्चे की मूरत में, नेहरू ही सूरत पायेगा !
हर बालक की साँसों में, नेहरू की साँस समायेगी !
सिद्धान्तों की प्रतिध्वनियाँ, भारत को स्वर्ग बनायेंगी !

तिरंगा— स्वर्ग बने भारत यह अपना, देश सदा खुशहाल रहे !

बाल-दिवस--माता तेरी गोदी का हर लाल जवाहरलाल रहे !

भारती— हिचकी लेकर बोल उठी, कुछ तो धीरज रखो मन में !
नेहरू-सा फूल खिलेगा निश्चय, जग के पावन मधुवन में !
धर्म यहाँ का ईश्वर है, पूजा जाता ईमान यहाँ !
हर युग में पैदा होता है, नेहरू-सा इन्सान यहाँ !!

वह गुलाब !

—सी. आर. बिरथरे 'सिद्ध'

भारत के पावन निकुंज में,
वेदना के चरमोत्कर्ष से,
साधना के ज्योति-कण ले,
विथकी विसूरती मानवता को त्राण देने
अमरता की अम्लान ज्योति भर,
धरा पर अवतीर्ण हुआ वह,
विकसित गुलाब-सा !

जीवन के सौरभ से विश्व को अभिसिंचित करता
मनहरता-सुषमा से,
सुन्दर अतिसुन्दर आकर्षक गुलाब वह !
किन्तु विषम विकराल काल की आँधी ने
दिया झकझोर उसे,
म्लान वह पड़ने लगा—
भयंकर ऊष्मा से, लू की चपटों से ।
वैसे तो टूट चुका था वह जीवन की झंझा से
उत्तरी पवन से;
किन्तु उसमें जीवनी शक्ति थी
अटूट आत्मबल था, संयम था—
जो डिग न सका अनेकों भूचालों से ।

अनेकों सुमनों का प्यार पिये,
कलियों की मीठी मनुहार लिये,
जीता रहा धरा के लिये,
सुरभि भरता रहा जीवन के अन्तिम क्षणों तक ।
किन्तु हा ! दुर्भाग्य की काली छाया ने
क्रूर काल की बलवती माया ने
छीन लिया उसे हमसे,
बिखर गया पंखुरियों में टूटकर टहनी से—
कण-कण में समा गया,
रो पड़ी वसुन्धरा,
आँसुओं का उमड़ता सागर रह रह कर पूछता—
हा ! भारत-भू के सुरभित गुलाब
अब तू कहाँ ?

ऐ लाल गुलावी मन फूलो

—अन्जान 'परदेशी'

नेहरू का युग नेहरू-वाणी, अब कहीं नहीं सुन पड़ती है।
ऐ लाल गुलावी मन फूलो, नेहरू की याद सिसकती है ।।

(१)

नेहरू चाचा की याद जखम बन, पीर घनेरी दे जाती।
आँखों में आँसू की लड़ियाँ, सावन बदली शरमा जाती ।।
ऐ मौत अगर तू मर जाये, हर चीज़ नई हो जायेगी।
विश्वास बढ़ेगा धरती का हर उमर हरी हो जायेगी ।।
उस वीर जवाहर की वाणी, शायद फिर से सुन लेंगे हम।
जन मन के भाग्य विधाता को, शायद फिर से पा लेंगे हम ।।
इन लाल गुलावी कलियों का, रीता सूनापन खोयेगा।
नेहरू का हँसता चेहरा जब, दिनमान नये दिन बोयेगा ।।
हर उम्र चमन की नेहरू से विश्वास माँगने चलती है।
ऐ लाल गुलावी मन फूलो, नेहरू की याद सिसकती है ।।

(२)

शान्तिघाट पर शान्तिदूत को, श्रद्धा सुमन चढ़ा जीते हैं।
मरना भी आसान नही है, इसीलिये जल-जल जीते हैं ।।
कौन जानता था यह चाचा असमय ही हमसे रूठेंगे।
कौन जानता था इन नन्हीं कलियों के दिल यों टूटेंगे ।।
वज्राघात हुआ छाती पर, दिल भीतर से भरा हुआ है।
त्रसित दुःखी भारत का जन-मन, खुद अपने से डरा हुआ है ।।
आ जाओ ओ शान्ति-प्रणेता, तुम्हें विश्व फिर बुला रहा है।
नई रोशनी के गुलदस्ते बनकर प्यार पुकार रहा है ।।
जीवन की ज्योति में आओ, साँस बिलखती गा उठती है।
ऐ लाल गुलाबी मन फूलो, नेहरू की याद सिसकती है ।।

प्रतीति

—कुँवर अजय सिंह

अँधेरी खाइयों में
फिसलती काइयों के बीच
एक नन्हीं-सी किरण सुगबुगाती है
जीवन भर फुदक-फुदक कर
वह अब थक गयी है
विश्रान्ति की एक गहरी साँस में मुझे
गुलाव की भीनी-भीनी गंध का आभास होता है
स्वच्छ-निथरे सरोवर में
चमकती मछलियों-सी गंध
आह !
काँटों के वीच सहसा उभरते गुलाव का पौरुष
थक गया है, यौवन भी मुरझ चुका है
पर इस 'प्रियतर घनेरे जंगल' में वनपांखियों-सी
उड़ती-फिरती सुरभि शेष है
वह सोयी नहीं है—न सोयेगी

भस्म हो गई कंचन काया

—भगवत विश्वास

अन्तस् में नैराश्य मचलता, आशाओं का जाल नहीं है।
भावों का आलोक लुट गया, मधुर कल्पना-काल नहीं है ॥
विवश लेखनी शून्य पत्र पर लिख जाती है बार वार यह—
गीतों का उन्नायक अपना आज जवाहर लाल नहीं है !

शोकमग्न सन्तप्त विनत है, ध्वज का उन्नत भाल नहीं है।
लालक़िले में आजादी का कर्मकार वैताल नहीं है ॥
सिसक रही कालिन्दी वेवस, कूल मौन, मँझधार अबोली।
कालीदह का नर्तक अपना आज जवाहर लाल नहीं है !

समझें शत्रु-देश मत लेकिन अब जो का जंजाल नहीं है।
भारत की सीमा पर बाधक अब उनका दुष्काल नहीं है।।
जन जन का मन आलोकित है जब उसके आलोक पुंज से---
ग़लत कह रहा जो कहता है आज जवाहर लाल नहीं है!

सत्य शांति का नेह सँजोये बुझती कभी मशाल नहीं है।
जिसे दिखाई पड़े बुझी वह जन है क्षुद्र, विशाल नहीं है।।
भारत के मन्दिर में अब भी हैं पैंतालिस कोटि मशालें।
कोई भी मत कहे कि जग में आज जवाहर लाल नहीं है!

भस्म हो गई कंचन काया पर माया का जाल नहीं है।
मुक्तिदूत को बांध सके जो ऐसा कोई काल नहीं है।।
देश-काल से परे हमारा धर्म सदा ही रहा अलौकिक।
मिथ्या है 'विश्वास' कथन यह आज जवाहर लाल नहीं है!

एक युग बीत गया

—मदन मोहन "उपेन्द्र"

आँसू भी सूख गये, अन्तर की दाह शेष।
अस्त हुई ज्योति, सिर्फ यादों का युग अशेष।।
डूब गया प्राण प्राण, गरिमामय भावमान।
भारत का युग गौरव, अनजाने रीत गया।।
नेहरू के साथ साथ एक युग बीत गया!

वन्दन के वन्दन वर, मिश्री-से मीठे स्वर।
नायक का बोल अमर, जाने क्यों रूठ गया?
एक युग बीत गया!

मिटी नहीं अभी अशान्ति, शेष है सुधार क्रान्ति।
आस्था अनास्था की, शेष है अभी भी भ्रान्ति।।
ऐसे दुर्बल युग में, पथ-दर्शक चला गया।
देश बहुत छला गया, एक युग बीत गया।।

गुलाब : एक संसदीय प्रतीक

—मोहन गुप्त

किसको मिला है, इतना विश्वास
इतना प्यार
कि सम्मान उसके मुकाबले ओछा पड़ जाये
और
तुम्हारी एक आवाज पर
जन-गण मन खिंचा चला आये।
गुलाब की गंध
इसीलिए
तुमने राजसिंहासन स्वीकार नहीं किया
मुस्कराते फूलों के
सिर्फ चाचा बने रहे।

हम सब
हमारा यह जागरूक, निर्भय स्वर
तुम्हारी उपलब्धि है
अब हम कभी शासित नहीं होंगे......
अपने ही किसी एकाधिकारी के।
तुमने
हम सबमें बहुत बहुत गहरे
प्रभुसत्ता बोई थी।

यह है तुम्हारी आकांक्षा का मूर्त वृक्ष
इसमें कौन-सा फल नहीं उगता
इससे कौन सी सुरक्षा हमें नहीं प्राप्त
मुस्कराते हुए गुलाब
अब सिर्फ हर एक चेहरे को तुम्हारी
मुस्कान मिलना भर शेष है।

ओ नायक तुम गए कहाँ ?

—डॉ० मुरारिलाल शर्मा 'सुरस'

अमर लोक का वासी दैवत् मनुज रूप धर आया रे।
जन-जीवन के दुःख की रेखा पढ़ कर के मुसकाया रे॥
वह अम्लान कुसुम-सा कोमल, गौरव गुरु की गरिमा ले,
संघर्षों के विकट व्यूह में अविचल बढ़ कर धाया रे।
ईर्ष्या, द्वेष, वैर की सरिता फौलादी बन आई थी,
हाहाकार गूँजता नभ में, जीवन घन बन आया रे।
भारत का वह ताज मुकुट-सा या कि रत्न वह कोहेनूर,
किसलय से ले स्वप्न, साथ में छंद गुलाबी लाया रे।
विश्वप्रेममय पंचशील की गंगा की चल धारा ले,
द्वापर के शिल्पी-सा नेहरू कलियुग में उठ धाया रे।
तभी भरत की भूमि व्यथित थी, कम्पित था जन-जन जीवन,
सौरभ के कुछ सुमन सजाए हिमगिरि-सा बन आया रे।
संकट के अंधियारे बादल विश्व व्योम में छाये थे,
चिर अवरुद्ध कण्ठ के स्वर को मुखरित करके गाया रे।
फँसे अभावों के दलदल में सिकता में पग धसक रहे,
अभी हमारे अंतस् में तो ज्वालामुखी समाया रे।
मानव के ओ मुक्ति प्रदाता, त्याग तपस्या भाव लिए,
गौतम, गांधी औ' ईसा की मधुमय वाणी लाया रे।
नश्वर काया गई जगत् से किन्तु अमर तुम मृत्युंजय,
मोह-पाश के बंधन तोड़े, तू मानव मुसकाया रे।
आज खेत-खलिहानों में तुम उर्वर बन कर बिखर गए,
स्वर्गिक सुख से अधिक तुम्हें यह भारतवर्ष सुहाया रे।
अक्षय शक्ति बटोरे कर में, ओ नायक ! तुम गए कहाँ ?
क्षुधा-पिपासा-आकुल जन को जो जीवन-स्वर लाया रे॥
अमर लोक का वासी दैवत् मनुज रूप धर आया रे।
जन-जीवन के दुःख की रेखा पढ़ करके मुसकाया रे।

२७ मई : एक ताज

—राजेन्द्र तिवारी

जब आज,
अचानक गिरी गाज
झोंपड़ी महल मन्दिर मस्जिद सब बने रहे
सबसे प्यारा ढह गया ताज !

वह ताज कि जिसने जीवन भर
झेला आँधी-तूफानों को
स्फूर्ति मिला करती थी जिसको देख देख
आजादी के दीवानों को
वह सभ्यता संस्कृति का प्रतीक
बलिदानों की गौरव-गाथा
जिसके चरणों में श्रद्धा से दुनिया का झुका रहा माथा
जिस पर था सबको बहुत नाज़
सबसे प्यारा ढह गया ताज !

सुनकर के बिलख उठा बचपन
सारी तरुणाई तड़प उठी
हो गया और ज्यादा बूढ़ा जर्जर वृद्धापन का मन
कुछ क्षण को रुकी दिली धड़कन
हो गये बन्द सब काम-काज
सबसे प्यारा ढह गया ताज !

कुछ काम न आया बल-पौरुष
नाकाम हुआ पूजन-अर्चन
यह वज्रपात न भला लगा जिसने तोड़े दिल के दरपन
हम आज सभी कुछ हार गये
औ' धूल-धूसरित हुई जीत
सब अर्थहीन हो गये गीत
झंकारहीन हो गये साज
सबसे प्यारा ढह गया ताज !

पर ऐसा सबका कहना है
जो बना उसे तो ढहना है
हम मांग रहे यह बार बार
ओ मेरे युग के कलाकार
तेरा जीवित है कला-शिल्प
अनगढ़ पाषाणों को गढ़कर
अनगिनत बना दे नये ताज
आ जाये फिर अपना अतीत
फिर वही जीत, फिर वही गीत
फिर वही साज।

शह और मात

—ललितकुमार श्रीवास्तव

मेरी बैठक में
तुम्हारा एक चित्र टंगा है;
आज अचानक जब हमारी आँखें
तुम्हारी आँखों से मिलीं—
तो बरबस मेरी पलकें झुक गईं
और तुम्हारी भरपूर आँखों से
आँख नहीं मिला पाया;
तुम्हारी वे आंखे जिनकी पुतलियों में
देश की समृद्धि का साकार सपना सजा था
आज कुछ भीगीं नजर आई·········
और मैं मारे शर्म के गड़ गया।
लो आँखों के साथ तुम्हारे ओंठ भी
बुदबुदा रहे हैं,
मुझे बिलकुल स्पष्ट सुन पड़ रहा है···
वही जो तुम हमेशा से बोलते आये हो···
··················अपने मुल्क के लिये
अपने मुल्क के लिये···;

पर हमारी कमजोरियाँ तो हमारे माथे पर
चढ़कर बोल रही हैं !
हमें देश भी छोटा दिखने लगता है।
और अब तुम्हारी जाकिट में लगा वह फूल
बस ! बस !! बस !!!
आगे मत बोलो,
मुझे सब कबूल।
मेरे कमरे के चारों ओर मेरे ही चेहरे से
आवाज-कशी आने लगी है;
आज तो मेरा मैं मुझे शह दे रहा है;
और मुझे लगा कि मैं पहिली बार
अपने से मात खा रहा हूं………।

काली चिड़िया

—कुन्तलकुमार जैन

मौत की उस काली चिड़िया ने
जो, छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं को, चुगलिया जाने के क्रम में
जीती है,
लगता है आज उसने,
अधिक जल्दी में
विश्व के एक अस्तित्व को चुग लिया है !
जो सामूहिक मृत्यु की अशुभता में,
और पीड़ा के घनीभूत अंधेरों में
हर मुड़ाव पर
युग को
प्रकाश-स्तम्भ की तरह आकर मिलता था
और मरे हुए क्षण को
जो चितकर,
एक तनाव को,

गुदगुदाकर हंसा हंसा देता था।
मैं,
उस मौत की काली चिड़िया से,
क्याकहूं?

ओ मेरी शेरवानी के लाल गुलाब

—राबिन शॉ पुष्प

ओ मेरी शेरवानी के लाल गुलाब!
आज मैं तुम्हें—
नई पीढ़ी के हाथ में सौंप कर
अकेला ही जा रहा हूं···
जिसकी हथेली पर—
श्वेत कबूतर है,
जिसके पास समृद्ध साहित्य है,
विस्तृत ज्ञान है,
विकसित विज्ञान है,
और वह सब कुछ है—
जो उस वक्त
मेरी पीढ़ी के पास नहीं था।
और यदि कोई अब भी—
इस कबूतर को
तलवार से बदलना चाहे
तो तुम कह देना
कि तुम कभी श्वेत थे
कपोत के उजले—धुले पंख-से···
कि एक दिन एक बहन ने—
राखी की थाली सजाई,
मगर डोर बीच में ही टूट कर

सुर्ख धार बन गई !
एक माँ ने—
अपने बेटे के लिए रोटी सेंकी,
उस पर ममता का घी मला,
परन्तु वह खाने नहीं आया
और रोटी पर लाल कतरे जम गए !

एक सुहागिन ने—
अपनी हथेली पर
प्रीति की मेंहदी रचाई
और उसका पति युद्ध में मारा गया,
लोगों ने मिल कर मेंहदी छुड़ा दी
उसकी हथेली से लहू टपकने लगा…
और तुम—
कुर्बानी के लाल फूल बन गए,
जिसे मैंने हमेशा हृदय के करीब रखा,
मगर अब और खून…
और खून…जम कर तुम्हें
लाल से स्याह कर देंगे,
एक काला गुलाब !
कि अब देश में—
और खून नहीं चाहिए,
(नेहरू भी यही चाहते थे)
बस,
अगर चाहिए तो शान्ति
केवल शान्ति…

ओ मेरी शेरवानी के लाल गुलाब !
तुम्हारी पंखुरियाँ हिलने लगी,
और मुझे लगा—
कि असंख्य हाथों में छोटे-छोटे लाल रूमाल
हिल कर मुझे विदाई दे रहे हैं…
तो लो.

आज मैं तुम्हें—
नई पीढ़ी के हाथ में सौंप कर
अकेला ही जा रहा हूं……
जा रहा हूं।

अगली सुबह प्रतीकों की

—भूपेन्द्र कुमार स्नेही

मटमैले रंग क्षितिज पर बिखर गए,
आँखों में काले धब्बे ठहर गए!

युग की जड़ता उसका अन्धापन है,
वैसे जीवन और समय की दूरी—
ढाके की मलमल का पतलापन है!

लगता है किरनों के शयन-कक्ष में,
अब तम के प्रेतों के स्वर उभर गए!

पाने के आशय में खो देते हैं,
लंगड़ाते सपनों का क्या है, वे तो—
हर स्थिति से समझौता कर लेते हैं!

मन की परतें खोलें तो लगता है,
जैसे प्याजों के छिलके उतर गए!

हर इच्छा अपराधिन-सी गुमसुम है,
कुछ आशकाएं, कुछ असफलताएं—
पास बची जीवन के यही रकम है!

अगली सुबह प्रतीकों की क्योंकर हो,
जब संकेतों के हामी मुकर गए!

जब था मां के दृग में पानी पाँवों में जंजीरें,
लूट रहा था रिपु-दल आंचल अस्मत मोती हीरे।
क्रन्दन से कँप कँप जाता था नील निलय का वासी,
तब समराङ्गण में आया ले सत्याग्रह-करवाल ।।
हाथ मां की पूजा का थाल !

घर घर जागृति-गीत सुनाता, मोह सुखों का त्यागे,
काँटों के पथ बढ़ता जाता आगे सब से आगे।
जागा सारा देश जगाई आज़ादी की राहें,
एक दिवस सन् सैंतालिस में आनन दिया उजाल ।।
कण्ठ हर कण्ठ विजय की माल !

दुहराया वह मन्त्र राम ने जिसको ध्येय बनाया,
योग योग के लिये नहीं खुद ऐसा कर दिखलाया।
किया प्यार उस बन्दीगृह को जहाँ कृष्ण जन्मे थे,
भारतीय दर्शन गत युग का कितना बड़ा कमाल ।।
कि उन्नत किया देश का भाल !

सह न सका वह अपने घर पर और चलाये शासन,
पर के इङ्गित पर नाचे अपनी संस्कृति अपना मन।
रहें कि हम मुहताज, हमारे वैभव पर जग झूमे,
सिंह सींकचों में, बर्ताव बरतें यथा शृगाल ।।
दहाड़े रिपु की लख यह चाल !

सन् सोलह यौवन का अधिपति कमलापति बन आये,
सत्रह, प्रियदर्शिनी सलौनी छवि पर बलि बलि जाये।
गांधी का आदर्श मिला, विश्वासों में बल आया,
इङ्गित को उसके, अन्तर से कौन सका जो टाल ।।
दिलों का सब के मृदुल मराल !

ऐसे तपे न बोल किसी के, ऐसा मिला न मानी,
काँटों ने की राह प्रखर तो कलियों ने अगवानी !
अनुगामी थे सभी कि जिनका था वह राजदुलारा,
एक सितारा ज्यों ध्रुवतारा, मिलती नहीं मिसाल ।।
ऋणी अग-जग धरती पाताल !

किसे पता था चलते चलते ऐसे रुक जायेगा,
जलता जलता दीप, स्नेह-पथ आधे चुक जायेगा।
गाते गाते मौन हुआ वह आशाओं से पहले,
जाने किस झंझा ने नोची अरमानों की डाल ॥
पिकी बिन सूना हृदय-रसाल !

ओ नटखट नटराज ! बुलाता है आनन्द-भवन,
उन्मन आज गुलाब पुकारे तुझको चमन चमन।
ये बूढ़े बूढ़े से तरुवर लतिका हरी भरी,
इनका ध्यान, उड़ाता आता होगा अभी गुलाल ॥
झूमता जैसे गगन विशाल !

एक कविता-धारा : तुम्हारा जीवन

—देवव्रत देव

कवि सुमन की डायरी में अंकित
तुम्हारा यह लघु वाक्य
कविता का ध्रुव-तारा बन गया है—
"अपने जीवन को कविता बनाओ।"

ओ महागायक मानवता के
तुम्हारा हर साधनामय क्षण
कर्ममय जीवन की हर धड़कन

तुम्हारी आस्था की ऊष्मा, और अदम्य जिजीविषा
एक अमृत कविता-धारा बन गई थी।......

आखरी वसीयत का हर वाक्य-शब्द-अक्षर—
किसी भी श्रेष्ठ महाकाव्य की समकक्षता का अधिकारी है !
हम टूटे, थके, हारे, आत्म-विस्मृत पीढ़ी के लोगों को
आशीष दो, ओ पिता ! कि हम तुम्हारी तरह जल सकें,

चल सकें काँटों भरा पथ
तुम्हारी परम्परा की मशाल
अगली पीढ़ी को दे सकें।......

श्रद्धांजलि

—डॉ० भोलानाथ 'अमर'

जब गुलाम आजाद हो गया, जाग उठा जब सोया जन-जन।
जब भूली बातों की यादें, पुलकित करने लगीं सजग मन॥

जब जड़ता चेतना बन गई, जड़ संतोष बना आकुलता।
कर्मठता में बदल गई जब, तन-मन-जीवन की निष्क्रियता॥

मनोवांछित राह मिल गई, ज्योतित जीवन-चाह मिल गई।
ज्वलित दीप्त सूरज बनने की, चिर अदम्य शुचि आह मिल गई॥

जाने में कुछ हानि न देखी, खलने लगा देह का बन्धन।
सतत तरुण को खला बुढ़ापा, विकल सच्चिदानंद आत्मन्॥

पूर्ण पुरुष मिल गया पूर्ण में, सीमित अब हो गया असीमित॥
उसके प्रिय भारत की उसके प्रति अनन्त श्रद्धांजलि अर्पित॥

ज्वाला-पथी जागो

—कृष्णजीवन भट्ट

समय का रथ बढ़ा आगे, विजय के सारथी जागो!
तमिस्रा का निविड़ गह्वर मिटा, ज्वाला-पथी जागो!!
त्वरित अवतार लेकर नेहरू, तुम नेह बिखरा दो;
समर की भावना को एकता का राग सिखला दो।
तुम्हारे पाटली पुरुषार्थ का संकेत पाने को;
तुम्हारे परिमली व्यक्तित्व का श्रम-गान पाने को।

तिरंगा फहरता जाता, कि सागर शोक में डूबा;
दिशाएँ पड़ गईं नीली, उदासी में गड़ी ऊषा।
अखिल संसार को तुमने दिया संदेश मैत्री का;
सभी माना किये आदेश निर्मल नीति-तन्त्री का।
अभी तक राष्ट्र-कुल भी चल रहा आदर्श को लेकर;
समस्याएँ जटिल संकुल सुलझतीं शील को छूकर।
जले हैं शून्य में नक्षत्र टिमटिम कर रहे जितने,
तुम्हारी भूमि में हैं शरण पाते धर्म हैं उतने।
युगान्तर क्रान्तदर्शी चेतना के तुम पुरोधा थे;
मनुज के श्रेय की सम्वर्द्धना के एक होता थे।
जिन्होंने ज्ञान पाया है यहाँ के पेड़-पौधों से,
हमें वे शेर नकली हैं डराते युद्ध-बोधों से!
मगर हम साधना को ही सदा बल मानते आये;
निखिल भू-व्यास को तव 'शील' से ही बाँधते आये।
अजन्मे काल की विकरालता जिह्वा डुलाती है;
जगत्-संजीवनी में स्वार्थ-हिंसा-विष मिलाती है।
कहीं संसार विप्लव-क्रोड़ में पड़ पिस नहीं जाये;
कहीं आकाश अणु-संघर्षणों में छिप नहीं जाये।
जवाहर लाल, कितने लाल हैं पैदा हुए तुमसे,
बढ़ेगा गर्व-गौरव देश के दिनमान का उनसे।।
प्रलय की कालिमा की सुगबुगाहट मेट लेने को,
हिमालय-सा मुकुट के लाल, भारत के यती जागो!!

एक असमाप्त जीवन

—श्यामनारायण बैजल

मैं जितनी दूर आगे बढ़ आता हूं
पगडंडियों के साथ,
एक कभी न खत्म होने वाली आकृति दीखती है
युग के छोर।

मेरे मीत,
हजार कोशिशों के बाद
मैं जब उसके नज़दीक पहुंचता हूं,
धधकती लपटों में भी
वह असमाप्त ही दीखती है।
लगता है—
आज मैं एक महान् सन्दर्भ में
कुछ और महान् हो गया हूं—
क्योंकि उस महान् ने
कभी असहान् होना नहीं सीखा था !

गुलाब के फूल की कहानी

—भगीरथ बड़ोले 'निर्मल'

सुनी एक दिन खबर कि गमला वह गुलाब का टूट गया है,
वह गुलाब का गमला क्या, पर भाग्य सभी से रूठ गया है,
चारों ओर घुटन का वातावरण समाया था उस दिन ही,
क्योंकि चेहरा हँसता खिलता, सत्य, गँवाया था उस दिन ही;
कोई सो न सका उस दिन, आँखें न लगीं रोती रातों में,
पर कुछ क्षण ही पलक लग गयी मेरी बातों ही बातों में !
देखा मैंने स्वप्नलोक में, जिसको सबने ही खोया था,
छिपा हुआ वह वसुन्धरा का हीरा तब समीप आया था !
कहा: "न मेरे मृत्यु-दिवस पर रुदन करो तुम यों गुमसुम हो,
बंधन सबके काट सको वह मेरे भारत के गण तुम हो;
माना मुझमें शक्ति नहीं है, 'और सदा-सा हरा नहीं हूं,
आज परीक्षा लेने सबकी छिपा हुआ हूं, मरा नहीं हूं !
अगर न जाता मैं तो भारत में फिर कौन परीक्षा देता,
सब मुझ पर अवलंबित रहते, कौन सत्य पर विजयी होता ?
इसीलिये मैं दूर आज हो सब कुछ देख रहा धरती पर,
कौन लुटायेगा कितना श्रम इस वसुन्धरा मदमाती पर;

किसके जी में दया, क्षमा औ' सत्य-अहिंसा भरी हुई है,
किसके जी में विश्व-प्रेम की बात जन्म से जड़ी हुई है;
अभिमानी सम मुझमें गुण बतलाने की आदत न रही है,
एक आस है, देखूँगा मैं कौन गलत औ' कौन सही है ॥
देखूँ किसका चित्त कर्म में, कौन फक्त भाषण देता है !
कौन पसीने पर अपने ही तन का खूँ अर्पण करता है ?
मेरी शक्ति समर्पित सबको, मेरा तेज समर्पित सबको,
दृढ़ विश्वास समर्पित सबको, सद्मस्तिष्क समर्पित सबको,
हृदय तुम्हारा है तुम ले लो, सदन तुम्हारा है तुम ले लो,
पंचतत्व के मधुर मिलन का वदन तुम्हारा है तुम ले लो।
पर मुझको विश्वास दिला दो युग की नाड़ी पकड़ सकोगे,
क्या तुम सब विपरीत शक्तियाँ अपने हाथों जकड़ सकोगे ?"

वह कहता था, मैं सुनता था, तभी अचानक नींद खुल गयी,
और अचानक दूर गगन में मूर्त्त सत्य की साँझ ढ़ल गयी !

जवाहर-पुष्प

—श्याममोहन दुबे

(१)

सुना तुमने !
अब गुलाब को
गुलाब नहीं,
जवाहर-पुष्प कहा जाने लगा है।
सचमुच सदियों बाद—
एक सुमन को
इतना सम्मान मिला है;
शायद कभी,
गुलाब की जाति ने
कोई महत् पुण्य किया था।

(२)

तुम्हारे निधन के पश्चात्—
मुझे गुलाब के फूलों से
प्यार हो गया है !
बाग में खिले खिले—
प्यारे प्यारे वे फूल
मुझे बहुत भाने लगे हैं;
लगता है—
इन्हीं फूलों में
तुम्हारी आत्मा समा गई है।
अब ये केवल
गुलाब के फूल न कहे जायेंगे
इन फूलों में तुम्हारी आत्मा है
गुलाब के फूल नेहरू हैं !

तू उपमेय स्वयं अपना था

—शैलकुमारी चतुर्वेदी

आज प्रकृति वीणा के तार—
बिखराते अवनी अम्बर में अति कातर झंकार !
खोया अनुपम रत्न धूल में,
व्यथा सिसकती फूल फूल में।
हो साकार विपद स्वयं ही करता हाहाकार !!

ओ भारत के भाग्य सितारे,
पथ निर्देशक जन-मन प्यारे।
तेरे बिन सूना यह सारा भारत माँ का द्वार !!

उमड़ा पड़ता जग का अन्तर,
अहह !! व्यथा है अति दारुणतर।
कैसे भूल सकेंगे बालक तेरा अनुपम प्यार ?

कैसा कौन लोक था सुन्दर,
लुभा लिया जिसने तव अंतर?
भूल गया जिसके आगे तू निज जीवन का सार !!

शान्ति-पथ का अग्रिम राही,
अद्भुत वीर परम उत्साही।
तू उपमेय स्वयं अपना था, साहस का अवतार !!

यद्यपि आज नहीं तू जग में,
पर तेरी वाणी हर रग में,
नूतन बल उत्साह भरेगी, जब तक है संसार !!

क्या कहकर मैं श्रद्धांजलि दूँ,
किन शब्दों की पुष्पांजलि दूँ?
जिससे जगती पुनः पा सके तव दर्शन इक बार !!

सोचा करती निशदिन मन में,
योगी तो खो गया विजन में,
कौन रचेगा नवयुग के नाटक का उपसंहार !!

किरण तथा कबूतर !

—सारस्वत क्लान्त

नीचे पगडंडी चोड़ी-सी
जो आगे-पीछे मुड़कर कोण बनाती चौतरफे
अपनी छाती पर लिये चिह्न चरणों का !
ऊपर स्वच्छ गगन में
चमक रहा एक तारा
जिसका प्रकाश
झुक झुक कर गिरता नीचे किरणों को फैलाकर
उसी किरण में
एक कबूतर लिये चोंच में टहनी किसी फूल की
लोट लोट कर खोज रहा था कुछ

श्रम के बिन्दु चू-चू पड़ते अविरल
और किरण के संगम से इन्द्रधनुष बन उठता
चित्र उभरते सतरंगे
जैसे कोई शंख फूँकता बढ़ता
उसके तन में कहीं आग की लपटें
कहीं सरोवर सुन्दर, कहीं यन्त्र की ध्वनियाँ
औ' चट्टानों को चीर फूटते झरने
कहीं धान के पौधे
जिनसे झरते लाल जवाहर अनुपम !
धीरे-धीरे चित्र सिमटते जाते
जैसे पर्दे पर तस्वीरें
किन्तु गूँजती रह-रह शंखध्वनि तो अब भी
इस समग्र भूतल पर नव संदेश सुनाती।

जवाहर कहाँ गये

—शिवपूजनलाल 'विद्यार्थी'

शोक-मग्न संसार, जवाहर कहाँ गये !
कोटि-कोटि प्राणों की किस्मत फूट गई,
हाय ! गोद भारत माता की लूट गई,
क्रुद्ध धार, पतवार हाथ से छूट गई,
नाव पड़ी मँझधार, जवाहर कहाँ गये !
बूढ़ा भारत चले किस लकुटि के बल पर ?
कौन बने जन-जन-मन का विश्वास-धरोहर ?
कौन सँभाले बोझ कोटि प्रश्नों का गुरुतर ?
समय रहा ललकार, जवाहर कहाँ गये !
कौन बने अभिमान देश का, कौन बने अब ढाल ?
कहाँ मिले वह घनी छाँह वाला वट वृक्ष विशाल ?
कौन दिखाये राह हमें अब बनकर दिव्य मशाल ?
फैला तिमिर अपार, जवाहर कहाँ गये !

उत्तर-पूरब से दुश्मन ललकार रहा है,
दीन हिमालय बेकस तुझे पुकार रहा है,
घर-घर में दुर्भिक्ष-नाग फूत्कार रहा है,
कौन करे उपचार, जवाहर कहाँ गये !

कब तक जुल्मों की रोटी पर हम जीयेंगे ?
सहमे अधरों से शोषण का विष पीयेंगे ?
लुटे-घुटे अरमानों की बखिया सीयेंगे ?
बंद न्याय का द्वार, जवाहर कहाँ गये !

भारत और जवाहर

—नवीन मेहता

वर्षों तक अकेली सीप
सागर तले सोती रही
और अपने आपको
स्वप्न-सृष्टि में स्वयं खोती रही······
······खोती रही—
(बीज आँसू के स्वयं बोती रही···?)
"एक दिन तो
आएगा कि
सूर्य भी मुझको कभी तो
देख पाएगा !
······और मेरे मोल क्या होंगे ?
······मेरे रूप पर तो
सितारे तक बने पागल फिरेंगे······!"
एक दिन जगकर जहाँ देखा उसी ने
सुनसान चारों ओर
छाया पुलिन पारावार,
उन्नत था गगन-मीनार
जिस पर

गर्व से आरूढ़ होकर सूर्य भी कुछ हँस रहा था;
सीप ने देखा कि अपनी
कोख का मोती कहीं गायब हुआ था !
अकेली सीप……

मेरी उमर तुम्हें लग जाती

—तपेश चतुर्वेदी

भारत माँ के लाल जवाहर, जग-जीवन के प्राण जवाहर,
कितना अच्छा होता यदि सब मेरी उमर तुम्हें लग जाती !

विश्व शान्ति का अमर पुजारी, पंचशील का पाठ पढ़ाया ।
तूने अपना जीवन देकर, दुनिया को जीना सिखलाया ।।
अणुबम जब तय्यार खड़ा है एक साँस में सृष्टि निगलने,
सही मार्ग दिखलायेगी इस अन्धकार में तेरी बाती !

चाहे जितना दर्द दबा लूँ, अधरों पर मुसकान न होगी ।
लाखों फूल खिला लूँ लेकिन, उस गुलाब की शान न होगी ।।
भारत की बगिया के माली, सूख गयी है डाली-डाली,
रोती है कलियाँ जो पहले हाथों में तेरे मुसकाती !

चन्दन की सुरभित शय्या पर, मैंने तुमको सोते देखा ।
कुन्दन-सी काया को मैंने, पंचभूत फिर होते देखा ।।
जन-गण के सच्चे हितकारी, बुद्ध और ईसा-अवतारी,
भस्मी खाद बनी अमृत-सी, परती धरती स्वर्ण उगाती !

चला गया युग का निर्माता, बिलख रही मानवता सारी ।
इतने आँसू बहे नयन से, धरती बनी समुन्दर खारी ।।
गंगाजल-सा पावन नेहरू, बच्चों का मन-भावन नेहरू,
आज कहाँ खोजेंगे बच्चे, अपना प्यारा चाचा-साथी !

स्मृतिशेष जवाहर

—डॉ० रामकुमार सिंह 'कुमार'

तुमको भारत-रत्न कहूँ या जग की ज्योति जवाहर ?
बापू की शुचि शांति वेणु या शांति-वीर नर-नाहर ?

प्रेम मंत्र तुम मनमोहन के त्याग राम के त्यागी ?
गौतम की करुणाधारा या प्रियदर्शी वैरागी ?

तुम्हीं वेणु-स्वर बन बरसे थे मधुमय वृन्दावन में।
आज शांति जलधर-से फिरते-हो तुम विश्व-गगन में।

आये थे गांधी भूतल में लेकर दिव्य उजाला।
जन्मे थे पटेल लेकर अत्याचारी-हित भाला।

युवक रक्त की लहर उठी, तुम बने गरम दल नेता।
आज समुज्ज्वल आत्म रूप में तुम हो शांति प्रणेता।

शांति-योग-रत, 'शांति-शांति' की जग में अलख जगाते।
समर-वह्नि की ज्वलित शिखा में शांति-नीर ढुलकाते।

महा-काल-अंतर की प्रतिपल धड़कन सुनने वाले।
अणु-उद्जन के काल-नाग से जन-हित भिड़ने वाले।

नागासाकी, हिरोशिमा के उन शिशुओं का क्रंदन।
चीख रहा अनुक्षण अतर में, ओ ! करुणा के नंदन।

आज मुखर जन-जग की वाणी तेरे शांति-स्वरों में।
माँग रहा जग न्याय प्रेम को युग के अधःपतन में।

ओ युग-कर्णधार ! मानव के विश्व-आत्म अधिकारी।
तेरे पद-चिह्नों का अनुगत शांति मनुज की प्यारी।

थमने लगा अनागत युद्धों का उद्धत कोलाहल।
शांति-पियूष बरसने आया, मृत-सा हुआ हलाहल।

युग की वह संघर्ष भैरवी श्रांत हुई-सी जाती।
जग जन-मन में शांति सुधामय शांति-सुमन विकसाती।

'गौतम का संदेश सुनाता आता वह दुःख-हारी।'
स्वागत भरे नयन से भूतल निरख रहा छवि प्यारी।

पंचशील का शील बरसता अवनी के अंचल में।
द्रोह-अग्नि बुझ रही स्वयं ही तरल अहिंसा-जल में।
मानवता के अमर पुजारी! तेरी जय हो, जय हो।
तेरी स्मृति से इस भूतल का अंधकार यह क्षय हो।

हर लाल जवाहरलाल बने।

—शिवमोहन भटनागर

हो गया चतुर्दिक अंधकार, सहसा दिन में रवि हुआ अस्त।
आदर्शों की संचित निधि पर पड़ गया काल का क्रूर हस्त॥
साहस के सबल पक्ष पर हा, यह कैसा पक्षाघात हुआ।
जैसे वन में सोए विहगों के दल पर वज्राघात हुआ॥
जब महाप्रलय का ज्वार ले रहा है सागर में अँगड़ाई।
तब जागरूक चेतना अरे, तुझको कैसी निद्रा आई!!

विस्मय है जग को जगा स्वयं गहरी निद्रा में लीन हुआ।
खो गया जवाहर नर-नाहर, गौरव का वैभव क्षीण हुआ॥
अपनी ही धड़कन में भी क्या प्राणों का बल खो सकता है?
क्या अमृत बिखराने वाला भी काल-कवल हो सकता है?

ओ शान्ति अहिंसा के पोषक, ओ मानवता के स्वाभिमान।
प्रतिभा में प्राची का सुहाग, था तू जग में मानव महान्॥
वह है महान् जिसके जाने से आयु स्नेह की बढ़ती है।
निष्ठुरता जिसके जाने पर संदेश शोक का पढ़ती है॥
है वह महान् जिसके वियोग में मानवता कर उठे रुदन।
है वह महान् जिसके व्यवहारों पर फूले समता का मन॥

यद्यपि रो देती है तृष्णा, मरु की माया के छलने से।
पर हम पहिचान न भूलेंगे, तेरे इस वस्त्र बदलने से॥
तेरा स्वरूप छिप गया कहीं युग के विकसित मधुमासों में।
पर सुरभि सुमन तेरे यश की, बस गई समय की साँसों में!!

आँसू पोंछो, अब ज्योति भरो तुम अपने नयनों में हँस-हँस ।
अपने अभाव पर रोने से, बढ़ता है दुश्मन का साहस ।।
ओ भारत की खंडिता शक्ति, संकट आया, बन जा अखंड ।
लेकर अपने कर में कपाल, उठ जाग अरी चंडी प्रचंड ।।
बहनो अब थाल सजाओ तो, आभा का गौरव भाल बने ।
माताओ ऐसी शिक्षा दो, हर लाल जवाहरलाल बने ।।

युग-प्रवर्त्तक सो गया है

—अवधेश नारायण मिश्र 'दीपक'

दिव्यता से युक्त सुन्दर ज्ञान-गुण की मूर्ति था जो,
धीर-वीर-प्रशांत-निर्भय शक्ति-सुगठित स्फूर्ति था जो;
वह अतुल व्यक्तित्व जन-गण-चित्त-कर्षक खो गया है ।।

प्रेरणा पाकर कि जिससे सुप्त भारत देश जागा,
हो उठा संदीप्त जन-जीवन, मलिन परिवेश भागा;
राष्ट्र-रवि-मण्डल विमल वह ज्योति-वर्षक खो गया है ।।

पा कुशल नेतृत्व जिसका देश ने सम्मान पाया,
राष्ट्र-कुल के मध्य गौरव-पूर्ण शीर्षस्थान पाया;
राष्ट्र-नायक, राष्ट्र का सम्मान-बर्द्धक खो गया है ।।

राष्ट्र के निर्माण के नव स्वप्न रचता था सदा जो,
चतुर्मुख उत्थान-हेतु प्रयत्न करता था सदा जो;
राष्ट्र-पुनरुत्थान का वह स्वप्न-सर्जक खो गया है ।।

आक्रमण-संघर्ष का खण्डन सदा करता रहा जो,
शान्ति-सहअस्तित्व का मण्डन सदा करता रहा जो;
वह अहिंसा-शान्ति-मैत्री का समर्थक खो गया है ।।

ध्वंस और विनाश से जो विश्व को रक्षित किये था,
चिर अमर जीवन-प्रभा से विश्व को रंजित किये था;
वह अमृत जीवन-विधाता विश्व-रक्षक खो गया है ।।

था लगा मनुजत्व-रक्षण में सकल व्यक्तित्व जिसका,
था हुआ मनुजत्व-पोषण में समर्पित स्वत्व जिसका;
वह मनुजता का पुजारी, मनुज-अर्चक खो गया है ।।

जीर्ण-जर्जर नीतियों को, रीतियों को तोड़ जिसने,
विश्व-संस्कृति को दिया है एक नूतन मोड़ जिसने;
वह जवाहर युग-पुरुष, नवयुग-प्रवर्त्तक सो गया है ।।

अंतिम विदा के स्वर

—सन्तकुमार टण्डन 'रसिक'

हो गई है ज्योति में यह आज ज्योति विलीन !
जानता था कौन लेगा काल निर्दय छीन ??
विश्व का आनन-हृदय अति म्लान, दुःखित, मलीन ।
हो गए हा ! दीन से भी आज हम अति दीन ।।

शांति के तुम दृढ़ प्रणेता, देश की थे ढाल ।
पगों पर नत-शिर तुम्हारे था पड़ा यह काल ।।
शून्य निर्जन हो गया जैसे जगत का भाल ।
चल दिए हमको अचानक तज जवाहर लाल ।।

कर्म-योगी कृष्ण थे या बुद्ध के अवतार ।
हे ! उदधि-से गहन, हे ! आकाश के विस्तार ।।
तुम हिमालय-से समुन्नत, नम्रता के द्वार ।
मातृ-भू में मिल गए हा ! रो रहा संसार ।।

रत्न देखो लुट गया है देश का अनमोल ।
मृत्यु के क्षण कौन देगा हमें अमृत घोल ??
वह उऋण तो हो गया दे मृत्तिका के मोल ।
सुन सकेंगे अब नहीं हम युग-पुरुष के बोल ।।

बालकों-से सरल, तुममें युवक का उत्साह ।
बात कहने में खरी तुमने न की परवाह ।।

स्वप्न में भी देश के उत्थान की थी चाह।
शांति, सहअस्तित्व की तुमने दिखाई राह॥

ले सके मरते समय तक तुम नहीं विश्राम।
श्रम अथक करते रहे बस काम से ही काम॥
चरण चिह्नों पर चलें हम सार्थक तव नाम।
व्यर्थ होगा यदि लिखा केवल वहाँ 'श्रीराम'॥

दे रहे अंतिम विदा भारत-हृदय-सम्राट।
रूप कैसे भूल पाएँगे विशाल-विराट॥
पूर्व हो उज्ज्वल तुम्हारा ज्योति पुंज ललाट।
अवतरित होना यहीं पर पुनः, मुक्त कपाट॥

८ बिना दाग के सुहाग

—दामोदर स्वरूप 'विद्रोही'

(१)

कुटिल कुचालियों के भीषण कुचक्र बीच,
देश-प्राण के महान् एक रखवारे थे।
शानी औ' गुमानी अभिमानियों का मार मद,
भारत के उज्ज्वल पवित्र उजियारे थे।
भाई विश्व भर के कहाये निज जीवन में,
एकमात्र भारत जननि के सहारे थे।
लाल मोतीलाल के जवाहर कहाये तुम,
जगती में ज्योतिर्मय जीवित सितारे थे॥

(२)

वृद्ध आयु में परन्तु कर्म में जवान तुम,
प्रेम-पाश की कड़ी सनेह-शृंखला के थे।
भारत का स्वर्ग काश्मीर जो निहार रहा,
आदिम निवासी उसी शस्य श्यामला के थे।

पंचशील हामो अनुगामी गतिशीलता के,
चिन्तक मनीषी निज शक्ति प्रबला के थे।
रूप रस गन्ध युक्त भारत के प्राण तुम,
बिना दाग के सुहाग भाग कमला के थे॥

तुम बहुत याद आते हो

—शेष आनन्द 'मधुकर'

जब कभी
ताजे गुलाबों के शबनमी कपोल
मेरी दृष्टि की सीमा में आते हैं,
पंडित नेहरू !
न जाने क्यों ?
ऐसे में तुम बहुत याद आते हो !

तुम स्वयं प्रकाशपुंज थे,
तुम न रहे तो,
क्या दिन, क्या रात,
'जवाहर ज्योति' प्रकाश फेंकती रहो,
'लाइट हाउस' की तरह,
इसलिए कि मानवता की नैया
कहीं राजनीति की चट्टान से
टकरा कर डूब न जाय।

तुम्हारी राख
बजर, उवर, नदी, पर्वत,
सबको समान रूप से बाँटी गई थी.
किन्तु आश्चर्य,
बजर, बंजर ही रहा,
उर्वरा अपनी ही फसल खुद चुराती रही।
पर्वत का सिर फिर नहीं उठा,

नदियों का स्रोत जैसे सूख गया
बड़े बड़े मगरमच्छ अब खुले ग्राम
अपनी पूँछ फटकारते है।
और मैं,
अब तक आँख मल रहा हूँ,
पर पुतलियाँ तुम्हारी राख नहीं छोड़तीं।

तुम असीमित रे!

—श्याम बहादुर वर्मा

शब्द सीमित,
छन्द सीमित,
राग सीमित-से,
तुम असीमित रे!
त्याग की गाथा मनोहर
विश्व को प्रिय दे गए तुम
और गौरव से धरा पर
चार दिन को जी गए तुम,
देश के स्वातंत्र्य-यज्ञों—
के पुरोहित हे!
तुम असीमित रे!
शान्ति की साकार प्रतिमा।
प्रेम की ममतामयी छवि!
कल्पना के लोक-वासी!
कर्म के ही काव्य के कवि!
नागरिक संसार के!
श्रद्धा-विभूषित हे!
तुम असीमित रे!

कैसे भूल सकेंगे

—गौरीशंकर श्रीवास्तव 'पथिक'

कैसे भूल सकेंगे नेहरू को भारत के लाल !
जिसने सदा रखा था ऊंचा भारत माँ का भाल ॥

नेहरू था स्वयमेव एक नक़शा भारत का।
नेहरू था जिन्दा मिसाल निर्भय भारत का ॥
नेहरू से थी कान्ति यहाँ सरसब्ज बाग था।
उसको प्रिय थी शान्ति व हिंसा से विराग था ॥
स्वर्गारोहण पर देवों ने सादर दी जयमाल !
कैसे भूल सकेंगे नेहरू को भारत के लाल ॥

जिधर किया संकेत करोड़ों पैर उठें उस ओर।
जिधर उठाया कदम करोड़ों वीर बढ़े उस ओर ॥
जिधर घुमाई दृष्टि शांति बस छा जाता उस ओर।
सौम्य मूर्ति को लख कर हो बस भग जाता था शोर ॥
विश्व-मान्य था अरे निराला भारतीय वह लाल।
कैसे भूल सकेंगे नेहरू को भारत के लाल ॥

नेहरू ने सचमुच हम सबको प्राण दिया था।
पराधीन भारत को जीवन दान दिया था ॥
फिर सत्रह वर्षों तक इसको खूब सजाया।
बढ़ कर आगे विश्व शान्ति का बिगुल बजाया ॥
बलि बलि जायें भारतवासी, ऐसा किया कमाल !
कैसे भूल सकेंगे नेहरू को भारत के लाल ॥

आज नहीं है इस धरती पर वीर जवाहर।
पर उसका आदर्श कर रहा देश उजागर ॥
हमें याद सर्वदा रहेगा चेहरा उसका।
'है आराम हराम' यही था नारा जिसका ॥
'बाल-दिवस' पर सभी मौन हो करें उसी का ख्याल।
कैसे भूल सकेंगे नेहरू को भारत के लाल ॥

वर्तमान से ज्यादा

—दुर्गाप्रसाद शुक्ल

खुशहाली की छाँह मिले
असहाय से असहाय को भी एक सबल बाँह मिले
इसके लिए
बेकारी की बंजर भूमि में
तुमने उद्योग धंधों के पौधे रोपे !
तुमने सही महसूस किया कि जिस सीमाहीन,
क्षितिज की दीवारों पर टिके,
नीले गुम्बद के नीचे
मंदिर, मस्जिद, गिर्जाघर और गुरुद्वारे सभी हैं
उसका एक ही धर्म है—
श्रम की साधना,
एक ही मज़हब है—
इंसानियत की आराधना।
तुमने अनुभव कर लिया था
कि शांति-निकेतन भारत की रखवाली के लिए
हर हौसले को लैस करना होगा फौलादी हिम्मत से
आज़ादी का मूल्य चुकाना होगा
जरूरत पड़ने पर
जानों की कीमत से ।
तुमने उत्पाती धारों को संयम के बाँध दिए,
विज्ञान के अंगुलिमाल को एक नया काया-कल्प,
पुरातन संस्कृति के हृदय को दिये नए नए स्पंदन
युगमानव !
भारत को इसका गर्व रहेगा
कि जब
दुनियाँ के लोग
चश्मा चढ़ाकर, दूरबीन लगाकर
केवल देख पाए अपने देश को
ज्यादा से ज्यादा
पास पड़ोस को !

तब तुमने अपनी
निर्दोष दृष्टि से
समूचा संसार देखा
यही नहीं—
उसमे फैले संक्रामक रोग देखे
निदान समझे
उपचार खोजे,
आज कोई कृतज्ञता ज्ञापित कर
तो कोई भूल भटककर
किसी न किसी रूप में
सभी स्वीकार रहे हैं
तुम्हारी ही मान्यताएँ।
जैसे-जैसे युग आगे बढ़ेगा
तुम्हारी दूरदर्शिता की सर्चलाइट राह दिखलायेगी
जवाहरलाल नेहरू !
वर्तमान से ज्यादा
भविष्य को तुम्हारी याद आएगी।

जो इन्सानों के मसीहा !

—श्यामलाल शुभंकर

वतन का चप्पा-चप्पा
सूरज की किरण-किरण असहाय पड़ी है
दिशायें शून्य : किरणें बे-ताज
सब के सब बस एक ही सवाल पूछ रहे है—
ओ इन्सानों के मसीहा
तुम क्यों चले गए ?
सिसकती हुई शेरवानी के गुलाब,
पवित्रता की अँगुलियों में फँसी हुई चन्दन की छड़ी,
और कपोत-सी श्वेत शेरवानी को छोड़ कर,

ओ इन्सानों के मसीहा तुम क्यों चले गए ?
क्या युद्ध की विभीषिका,
साम्प्रदायिक ज्वाला और फूट की लपटों के बीच
निष्पाप निष्कलंकित शबनम-सा स्वच्छ गुलाब टिक सकेगा ?
क्या मुर्दापरस्त खुदगर्ज इन्सान
चंदन की छड़ी को राइफल का कुन्दा न बना डालेंगे ?
गुलाब की मासुम पखुड़ियों पर रक्त के कतरे न छिड़क डालेंगे ?
कपोत-से स्वच्छ वस्त्र पर
इन्सानी अँगुलियाँ खुदगर्जी की छाप न डाल देंगी ?
वह माँ की गोद हमेशा खाली नहीं बनी रहेगी
जो अपने बेटे के भाल पर रोली का तिलक लगा कर
विजय का मुँह देख रही है ?
उस प्रेमिका की माँग हमेशा सूनी पगडंडी की तरह सूनी—
नहीं बनी रहेगी, जिसने अपनी माँग का सिन्दूर सरहद पे
चढ़ा दिया,
देहरी पर खड़ी बहन के थाल में राखी का सूत कच्चे धागे की तरह
निर्जीव बना नहीं रहेगा ?
क्या सबूत है इस बात का
आज एक साथ पूछ रहे—
शेरवानी के गुलाब, चंदन की छड़ी,
और पूछ रही हैं—
वह बिलखती माँ, सिसकती प्रेमिका, रोती बहन.
और···और···
उगते सूर्य
काँपती किरणें,
ओ इन्सानों के मसीहा, तुम क्यों चले गए ?

युग का प्रणेता

—कान्तानाथ पाण्डेय 'राजहंस'

त्यागकर नश्वर शरीर हो गया अमर,
गूँजती रहेगी गुणगानों से वसुन्धरा।
स्नेह की सुधा से अभिषिक्त होके होगी कब,
उसके उऋण अहसानों से वसुन्धरा।
जीवित रहेगी द्वेष-दाह से विमुक्त बनी,
उसके विचार-वरदानों से वसुन्धरा।
जनती सभी को, किंतु पुत्रवती होती अहा !
ऐसे ही अमर इन्सानों से वसुन्धरा।।

गीता का अमर उपदेश नस-नस में था,
वश में था बुद्ध के, प्रबुद्ध, शुद्धचेता था ;
संकट का सिंधु हो या शोक का समीर, वह
नौका इस देश की सम्हाल कर खेता था।।
भारत वसुन्धरा निहाल हुई पाके उसे,
विश्वविजयी था, जन-मानस विजेता था।
नेहरू हमारा वह नेता ही नहीं था नेक,
विमल-विवेक, एक युग का प्रणेता था।।

अब राजनीति जीवनभर अश्रु बहाएगी

—रमेशकुमार दीक्षित 'पंकज'

तुम छोड़ गये उस समय हमें, जब दुनिया के
इन्सानों की तकदीर बदलने वाली थी।
तुम रूठ गये जिस समय तुम्हारे भारत के
अरमानों की तस्वीर बदलने वाली थी।।
इस हिन्द देश की नौका को बस तुमने ही,
उन्नति के तट की ओर अचानक मोड़ दिया।

जब नाव भटकती हुई भँवर में जा पहुँची
नाविक ! तुमने पतवार चलाना छोड़ दिया ।।
हिंसा, शोषण, बर्बरता के उस दानव को
तुम समता का व्यवहार सिखाने आये थे।
पिसते, कराहते, पीड़ित, शोषित मानव को
तुम जीने का अधिकार दिलाने आये थे।।
हे भारत के जन-मानव के आराध्य-देव !
तुम भूतल पर ही स्वर्ग बनाने वाले थे।
दानवता की निर्मम छाया से दूर कहीं
तुम मानवता की सृष्टि रचाने वाले थे ।।
तुमने बापू के स्वप्नों को साकार किया
धरती का कण-कण कीर्ति तुम्हारी गाता है।
पर जाने क्यों प्रिय के वियोग में भारत के
जन-जन का बरबस कंठ आज भर आता है ।।
सीमा पर दुश्मन अपने दाँत गड़ाये हैं,
जागृत प्रहरी हिमवान आज अकुलाता है।
वह जननी का सिरमौर, देश का नंदन-वन,
कश्मीर तुम्हारे बिना आज घबड़ाता है ।।
अब याद तुम्हारी कर के कोने-कोने में,
इस पंचशील की ज्योति जगायी जायेगी।
उन्हीं सिद्धान्तों को अपनाया जायेगा,
विद्वेषों की होलिका जलायी जायेगी ।।
जब तक भूतल पर शेष रहेगी मनुज-सृष्टि,
तब तक मानवता गीत तुम्हारे गायेगी।
वह विश्वशांति दुस्सह वियोग में सिसकेगी,
अब राजनीति जीवन भर अश्रु बहायेगी ।।

सकल विश्व की क्रान्ति मर गई

—नारायणलाल कटरियार

दुःख-विह्वल हो धरती डोली, शोकातुर हो रोया अम्बर !
युग-दीपक का जलते-जलते एकाएक प्रकाश रुक गया,
वन, उपवन, वाटिका, कुंज में, जीवन और विकास रुक गया।
महामरण के अन्धकार में डूब गया संसार अचानक,
महाज्योति का पूरा होते-होते नव इतिहास रुक गया ॥
खो कर अपनी महाबूंद, छिछला-सा लगता है युग-सागर !

मिला न जो था कभी स्वर्ग को, आज धरा से दान मिला वह,
ठुकराकर पूर्ण, प्रखर उदयाचल को दिनमान मिला वह।
सोये और ऊँघते, हारे, थके निराश देवताओं को,
स्नेह प्यार से उन्हें जगाने वाला अब इन्सान मिला वह ॥
स्तब्ध खड़ा चुप महाकाल मन की पीड़ा निज आँखों में भर !

और न कोई मरा, अरे, यह सकल विश्व की क्रांति मर गयी,
दरवाजे-दरवाजे अलख जगाने वाली कांति मर गयी।
मानवता, सच्चाई, श्रद्धा, निष्ठा, दृढ़ता और एकता,
भारत के आँगन में सहसा सकल देश की शांति मर गयी ॥
हो स्तम्भित संतप्त समय ने देखा दुःखद समय का अंतर !

मरण नहीं, यह देव-लोक को महा भेंट अर्पण भारत का,
जिनके पुण्य प्रबल उनने ही किया महादर्शन भारत का।
उठी तबाही की आँधी, तूफान उठा भीषण विनाश का,
वातायन से गिर कर भू पर टूट गया दर्पण भारत का ॥
शत-शत महा जटिल प्रश्नों का एक सरल सीधा नव उत्तर !
दुःख-विह्वल हो धरती डोली, शोकातुर हो रोया अम्बर !!

सबके थे प्यारे नेहरू

—मोहम्मद हुसैन 'सग़ीर'

थे चमकते हुए भारत के सितारे नेहरू।
मादरे हिन्द की आँखों के थे तारे नेहरू॥
थे जमाने में गरीबों के सहारे नेहरू।
एक अपने ही नहीं, सब के थे प्यारे नेहरू॥
नौजवाँ कहते हैं दुनिया में थे अपने रहबर।
बच्चे कहते हैं कि चाचा थे हमारे नेहरू॥
याद करती है तुझे हिन्द की सारी जनता।
अब किसे तेरे सिवा आज पुकारें नेहरू॥
भूखी जनता को थी इस वक्त जरूरत तेरी।
क्यों उन्हें छोड़ के दुनिया से सिधारे नेहरू॥
अब किसे जा के सुनायेंगे वह अपनी विपदा।
अब कहाँ जायेंगे ये लोग बिचारे नेहरू॥
आज मँहगाई से किश्ती है भँवर में सब की।
कौन तूफ़ान से अब पार उतारे नेहरू॥
बुलबुलें आज भी रो रो के यह कहती हैं 'सग़ीर'।
गुलशने हिन्द को अब कौन सँवारे नेहरू॥

अधूरी कहानी

— रामशरण टंडन 'साजिद'

जहाँ में सैकड़ों पैदा हुए आली दिलावर!
जमी की गोद में खेला किए लाखों बहादुर॥
मगर तुम-सा न होगा कोई दुनियाँ में जवाहर।
जो अपने मुल्क पर कुर्बान कर दे लालो गौहर॥
जहाँ में हो न पायेगा दिलावर तेरा सानी।
रफाए आम के खातिर लुटा दी जिन्दगानी॥

उसूले जिन्दगी देखा जमाने में निराला।
हमेशा हर जगह हर बात को तुमने सम्हाला ।।
जहाँ में कर दिया तुमने अँधेरे से उजाला।
तुम्हारी शख्सियत का है जहाँ में बोलबाला ।।
वतन के वास्ते अपनी मिटा दी थी जवानी।
रफाए आम के खातिर लुटा दी जिन्दगानी ।।

जमाना फूट कर रोया तुम्हारी शख्सियत पर।
हर एक को नाज़ था रहवर तुम्हारी उन्सियत पर ।।
भरोसा था हमें तुम पर, तेरी इन्सानियत पर।
जहाँ को नाज़ था नेहरू तेरी वहानियत पर ।।
जवाहर रह गई बाकी फकत तेरी निशानी।
रफाये आम के खातिर लुटा दी जिन्दगानी ।।

शुजाअत औ' शहामत तेरे दिल में सबकी उल्फत।
बतायेगा हमें अब कौन आ राहे सदाकत ।।
सुनेंगे किस तरह तकरीर हम दुनियाँ की निस्बत।
बताएगा उरूजे जिंदगी की कौन हिकमत ।।
न जिसने जिंदगी में मौत से भी हार मानी।
रफाये आम के खातिर लुटा दी जिंदगानी ।।

अभी कहना न जाने चाहता था क्या जमाना।
शुरू तो अब हुआ था मुल्क का आला फ़साना ।।
तुम्हें हर बच्चा बच्चा चाहता था कुछ सुनाना।
मगर अफ़सोस शम्मा बुझ गई 'साजिद' न जाना ।।
शरीके मग़ अधूरी रह गई सारी कहानी।
रफाये आम के खातिर लुटा दी जिन्दगानी ।।

करिश्मये जवाहर

—(ठाकुर) मनमोहन सिंह

जवाहर का करिश्मा, नज़र में अब आ रहा है।
हमारा मुल्क आगे आगे बढ़ता जा रहा है ।।

नियत जिसने भी हिन्दुस्तान पर अपनी बुरी की।
होश आता है, जब मनमाने ठोकर खा रहा है॥
नेक इंसान था, नकों के दिल में घर बनाया।
जिसको देखो वही दौड़ा मदत को आ रहा है॥
जवाहर का ही जौहर था कि हिन्दुस्तान जागा।
नतीजा सामने में आज उसका आ रहा है॥
दुश्मनों के भी देखो, दाँत खट्टे हो रहे हैं।
हमारा तो तिरंगा, मौज में लहरा रहा है॥
अमर है काम उसका, धाम उसका, नाम उसका।
अमर इतिहास उसका आज लिक्खा जा रहा है॥
अमर वाणी जवाहरलाल की दिल में समाई।
प्रेम बंधन में हिन्दुस्तान कसता जा रहा है॥

मौन हुई रागिनी

—मृत्युञ्जय मिश्र 'करुणेश'

मौन हुई रागिनी कि जैसे टूट गये हों तार !
जैसे अभी गूँजकर कोई बन्द हो गया गीत।
जैसे रस-सौरभ गुलाब का गया अचानक रीत।
जैसे मधुर भावनाओं पर पड़ा कहीं से शीत।
बुझा देहली-दीप, तिमिर में डूब गया घर-द्वार !

किसने सूनी कर दी प्यारी भारत माँ की गोद ?
किसने उसकी हँसी छीन ली, लूटे किसने मोद ?
सूना-सा हो रहा आज कुछ मन को रह-रह बोध।
आया कैसे उमड़ नयन-सागर में इतना ज्वार ?

हरी-भरी बगिया स्वदेश की लगती विकल उदास।
बिलख रही हर कली, कुसुम भी जैसे हुए हताश।
आज कहाँ पिक-गान, रूठकर चला गया मधुमास।
अब केवल पतझार भाग्य में, बोल रही हर डार !

ऐसा तो वह लाल एक ही जिसकी एक न जाति !
ऐसा कोई हंस कि जिसकी होती कहीं न पाँति !
ऐसा वह नक्षत्र, दूसरा हुआ नहीं उस भाँति !
कौन चुरा ले गया जवाहर, वह मोती का हार ?

अब इन संकट की घड़ियों में बने रहें हम एक।
भूलें सभी भेद भीतर के, खोयें नहीं विवेक।
और नहीं तो शत्रु हमारे देंगे विघ्न अनेक।
नाव पड़ी मँझधार, लगेगी कैसे अब उस पार ?

रुक गया कारवाँ

—किरण

विश्व के व्योम में छायी काली घटा,
मौत ने हँस, प्रभा को कहाँ डस लिया।
हाय ! रोते रहे भाग्य के लेख पर—
वह जहाँ से हमारा 'जहाँ' ले गया ।।

एक पल न रुकी, री समय-सारिका,
पालकी उठ गयी अश्रु ढलता रहा।
इन समय के कहारों के पाषाण-मन,
एक क्षण न टिका, तेज चलता गया ।।

राष्ट्र के देव की कर सकूँ अर्चना,
लालसा ही बनी रह गयी पंथ में।
विश्व-विजयी जवाहर ने मूँदे नयन,
चल दिया मौन, निर्वाण के रंथ में ।।

कौन मुट्ठी में लेकर चलेगा गगन,
व्याल की ताल पर जो बजावे चरण।
कौन देगा संदेशा अमर-शान्ति का,
कौन है जो निराश्रित को देगा शरण ।।

माथ पर आज किसका गिरा वज्र है,
भाग्य फूटा है किसका, गिरा आसमाँ !
चलते-चलते डगर की बड़ी भीड़ में—
कैसे सहसा कहो, रुक गया कारवाँ !!

गीत का सम बँधा था अभी तार पर,
छन्द टूटा औ' गायन अधूरा रहा।
स्वप्न देखा था सोने का सुन्दर-सुखद,
वह अधूरा रहा, वह न पूरा हुआ !!

रात रोती है !

—श्रीपाल सिंह 'क्षेम'

ढल चुका है सूर्य कितनी बार लेकिन,
एक सूरज ढल गया तो रात रोती है !

हर सृजन के बाद उसका ध्वंस आता है,
आदि से ही सृष्टि पर संहार गाता है।
पंच तत्वों से रचित यह देह मूरत है,
गल गयी, संसार अपनी राह जाता है !!

मूरतें कितनी गली हैं धार में, पर एक
मूरत गल गयी, बरसात रोती है !

तारकों के अन्त पर ही प्रात आती है,
गत हुई अँधियालियों पर ज्योति गाती है।
रात के भटके पथिक को दिवस तक लाकर,
चूमकर निर्वाण को लौ मुस्कराती है।।

दीप कितने ही बुझाये प्रात ने, पर
एक दीपक बुझ गया तो प्रात रोती है !

पतझरों को फोड़कर हर फूल दहका है,
और अपने बाग मे हर फूल चहका है।
किन्तु शतियों में कही वह फूल खिलता है,
एक युग भर गंध बन जो फूल महका है!!
फूल कितने हो लुटे, पर एक ऐसा
लुट गया है फूल, झंझावात रोती है!

चेतना को रूप में कब तक रिझाते हम,
फिर, सुरभि को फूल में कब तक छिपाते हम!
विश्व भर के भाग को नन्हीं परिधि में ला,
बाँधते भी तो कहाँ तक बाँध पाते हम!!
एक ऐसी मृत्यु भी होती कि जिस पर
बेबसी में आयु को औकात रोती है!

हम सुरभि को फूल में ही प्यार देते है,
ज्योति का हम दीप को आभार देते है।
विश्व में फैले हुए संगीत व्यापक को,
बीन के लघु तार का आधार देते है!!
हाय, मानव-भाग्य का यह व्यंग, जिस पर
विश्व के इतिहास की हर बात रोती है!

पाटलों में अग्नियों का नाम था नेहरू,
शबनमों में बिजलियों का नाम था नेहरू।
अंधड़ों में शान्ति का शुभ मंत्र बन गूँजा,
ज्योतियो को आँधियों का नाम था नेहरू॥
जिन्दगी पर मौत की है जीत, लेकिन
जीतकर भी मौत अपनी मात रोती है!

आज भारत-कंठ से वह जीत का स्वर है,
त्रस्त मानव के लिये वह शान्ति का वर है।
और कल तक लाल मोतीलाल का जो था,
आज जगमग फैल वह जग का जवाहर है!!
आज माना आँसुओ मे हंस रही है,
विलग होकर साँस की सौगात रोती है!

वह चिता की अर्चियों में बँट नहीं सकता,
वह सिमटकर मूर्तियों में घट नहीं सकता।
विश्व-बन्धन पर चुभा वह मुक्ति का स्वर है,
राष्ट्र की लघ कल्पना में अँट नहीं सकता !
आज अपने आप में स्मारक बना वह,
आँख भर कर विश्व की बारात रोती है !

तुम खूब जिये मुस्काते !

—रघुवीर श्रीवास्तव

तुम खूब जिये मुस्काते !
और गए तो ठौर ठौर में, अस्थि सुमन बिखराते ! !

मृत्युजीत ! तुमने कौतुक ही त्यागा नश्वर भौतिक।
हुए आँख से ओझल, जसे लौकिक हुआ अलौकिक ॥
अब प्रकाश के क्षितिज बने तुम, चिर अनन्त से मेल मिलाते !

सदा सुहागिन-सी धरती से, रूठा तुम-सा श्याम सलोना।
जग अबोध-सा चीखा, जैसे बालक से छिन गया खिलौना ॥
जितनी दूर आज तुम, उतने विविध रूप दरसाते !

पंचशील के जनक, तुम्हारा विश्व-प्रेम दर्शन था।
कलि के कालकूट को शिव थे, तन मन धन अर्पण था ॥
पंचतत्व के ताज ! तुम्हें हम अश्रु भेट सकुचाते।

भूत भविष्य सुभाषित तुमसे, चिर बसंत तुम अमन चमन के।
ध्रुवतारा से आज अचल हो, ज्योतिर्मय इस जगत गगन के ॥
डूबो तम में जीवन-बाती, दूर दिये उकसाते !

तुम खूब जिये मुस्काते !
और गए तो ठौर ठौर में, अस्थि सुमन बिखराते।

नेहरू : वट वृक्ष

—प्रेमशंकर शुक्ल

गौतम, अशोक, गांधी के उपदेशों की
सिद्धान्त-सुधा, अभिसिंचित धरती से उमगा,
आनन्द भवन की बगिया में कोमल अंकुर, नन्हा पादप,
जिसने प्रगति की श्वासों के सरगम पर गति ली शनैः शनैः
बढ़कर वट-सा फैल गया,
छाया से छत्र तुल्य ताना,
विद्वेष, ईर्ष्या, युद्धातप से क्लान्त दग्ध मानवता को
जिसके सहस्र शत-मूल धरा के वक्ष पैठ
दृढ़ता धारे—गहरे, गहरे, गहरे प्रवेश कर।
वह वट हिमगिरि की दृढ़ता युत
लहराते सागर की गति ले
निस्सीम गगन की व्यापकता,
खगकुल कलरव से गुंजित था,
शाखों, पातों फल फूलों ने जाने कितने पाले विहंग,
हुलसे छाया में अग अंग,
वह चली पवन की मृदु तरंग
जाने कितनी आई आँधी,
कितने गरजे तूफान,
किन्तु, मुस्काकर केवल शीश हिला,
पी गया अँधड़ों की हाला,
आँधी शरमाई ले विराम,
नत हो वट के समक्ष मन्थर—
गति से चुपचाप विलीन हुई।
हाँ, एक बवण्डर—झोंके ने,
वट की सब जड़ें हिला डालीं
काँपा तरु का हर पात
शाख चरमरा गई, भरभरा गिरा,
वट धरा वक्ष में लिपटा, पर

उसका न पात टूटा कोई,
जिस धरती से उमगा अंकुर,
जिस धरती ने गुरु वपुष दिया,
बस उसकी ही माटी के कण में मिला वृक्ष का था कण कण।
जिस धरती ने था जन्म दिया,
उसकी सेवा में प्राण-दीप को जला
आरती को उतार,
अन्ततः प्राप्त निर्वाण हुआ,
उस धरती में ही मिली क्षार।

तुम भारत के कोहनूर

—हरिपालसिंह चौहान 'व्यथ'

तुम चहके तो नव प्रभात आ गया विश्व में,
मगर मौन के साथ धरा पर काली-काली रात छा गई!!

मोती तो खुद ही मोती थे किन्तु जवाहर—
जन्म तुम्हारा उन्हें एक वरदान बन गया।
दूनी चमक आ गई भाग्यवंत मोती में,
पर भारत माँ का भी भाग्य महान हो गया॥
चटकीं जंजीरें, कड़ियाँ खनखना उठी थीं,
काँप उठी थीं कारा की दुर्गम प्राचीरें।
धरा सपूती हुई, फटा अज्ञान-कुहासा,
तप्त धरा पर बहीं तुम्हें पा शांति-समीरें॥

पंचशील अवतरित हो गया उदयाचल पर,
प्राची हुई निहाल अमरफल कोख पा गई॥
तुम चहके तो नव प्रभात आ गया विश्व में,
मगर मौन के साथ धरा पर काली-काली रात छा गई॥

नाहर थे नेहरू तुम निर्भयता के सूचक,
मात स्वरूपा की गोदी के लाल जवाहर।

कमला के तुम कमल, भ्रमर तुम थे गुलाब के,
थे अटूट फौलाद मगर तुम भीतर-बाहर ॥
गांधी-दर्शन के तुम थे साकार भाष्य ही,
न्याय-नीति-गुण-गरिमा के स्वरूप नटनागर।
तुम भारत के कोहनूर, युग के अशोक थे,
जन-जन के उर की गागर में तुम थे सागर ॥

युग-द्रष्टा ! तुम मौन मगर हो गये अचानक,
मानो महाप्रलय की यह बरसात आ गई !
तुम चहके तो नव प्रभात आ गया विश्व में,
मगर मौन के साथ धरा पर काली-काली रात छा गई !!

विश्व-महामानव ! तुम थे युग के सेनानी,
इङ्गित से तुमने ऐटम-विध्वंस सुलाया।
विश्व-युद्ध के अंगारों को भी तुमने ही,
पचशील की बौछारों से शांत कराया ॥
तुमने अभय दिलाया भू को त्रास-नाश से,
विश्व - बन्धुता - वैदिक - नारा अमर कर दिया।
तुमने भू पर मानवता का शंख बजाकर,
नव युग के जागरण-मंत्र का गान भर दिया ॥

बच्चे रोते हैं चाचा तुम कहाँ गये हो,
दग्ध धरा को छोड़, स्वर्ग-सौगात भा गई !
तुम चहके तो नव प्रभात आ गया विश्व में,
मगर मौन के साथ धरा पर काली-काली रात छा गई !!

रोशनी बुझ गई

—कपिलेश्वर शरण 'तरुण'

हर जुबाँ पर जवाहर तेरी याद है।
मेघ घेरे हैं, पलकों में बरसात है।
बेरहम मौत ने छीन ली रौशनी—
यह धरा कँप उठी, हो गई रात है।

डॉक्टरों की कतारें, लगी-सी रहीं।
मिनट भर भी रुका न नियति कारवाँ।
प्राण रोते रहे, अश्रु ढलते रहे।
देखते-देखते बुझ गई वह शमाँ॥

भाग्य का ले सहारा, वह बैठा नहीं।
आखिरी साँस तक कर्म करता गया।
हाथ मलते रहे, वह तो हँसता गया।
वीर वैसा जहाँ मे न पाया गया॥

तूफानों में पलता रहा आज तक।
नित्य बढ़ता रहा आत्म-विश्वास से।
काल के ताल पर भी बढ़ाया चरण।
बाँधता ही रहा प्राण को प्राण से॥

थी कैसी तूफानी हवा मौत की।
रौशनी बुझ गई, हसरते सो गई।
दिल फट-सा गया, साँस रुक-सी गई।
पीर वैसी बढ़ी कि अमाँ हो गई॥

उठ गया हिन्द का आज नूरे जिगर।
पा खबर रुक गई धड़कने देश की।
छन्द टूटे औ' गायन अधूरे रहे।
शेष है अब कहानी मधुर नेह की॥

मुक्त आत्मा !

—मोहदत्त 'साथी'

मरे नही तुम मुक्त आत्मा;
सदा हमारे साथ रहे हो।

इससे पहले भी सौ वार धरा पर तुम जन्मे हो।
तुम सम्बोधनहीन व्यक्ति की आकृति भर थे।

चेतन गतिमय शाश्वत, कृति के मूर्धन्य पहले अक्षर थे।
व्यर्थ कर रहा जन का मानस शब्दों के सम्बोधन अर्पित;
तुम हो लाल गुलाब कि जिसका खिलना शाश्वत।
तुम हो शान्ति कपोत कि जिसका उड़ना निश्चित।
तुम हो एक निनाद गुञ्जरित जिससे दसों दिशायें जग की।
तुम हो एक प्रमाण, एक परिभाषा युग की।
वह माटी हो जिसके उर से फसल उगेगी,
फूल खिलेंगे।
वह पद-चिह्न समय रेती पर!
जिससे जग को दिशा मिलेगी
मंजिल के संकेत मिलेंगे
मरे नहीं तुम मुक्त आत्मा!

जग-प्रदीप हे!

—रामगोपाल 'रुद्र'

पंचशील को नव्य प्रतिष्ठा देने वाले,
डिगे न व्रत से पाँव तुम्हारे टले न टाले।
तर्जन करते रहे मेघ तूफान बवंडर;
जगे रहे तुम जग-प्रदीप हे, सेवा-तत्पर।
वाणी के वरपुत्र! उजागर चरित तुम्हारा,
हरता रहा अथक, जग-जड़ता का अँधियारा।
रक्त रहे निःस्वार्थ, सर्वजनहितसाधन में;
लाभ लोक का ही चिन्तन बन निवसा मन में।
ललित तुम्हारे भाव जहाँ बनते थे प्रवचन,
नेहमयी प्रेरणा स्पर्श करती थी जन-मन।
हरो शोक, शिवलोक गए हे शंकर-मानव!
रूपायित हो स्वप्न, निदर्शित भारत-गौरव।

महामानव की मृत्यु पर

—मदनमोहन व्यास

साँझ हो गई।
जीवन-सर की मुक्त गन्ध-रज कमल-कोष के मांझ खो गई!

डूबा रवि, किसने कवि-विहंगों की वाणी पर मौन धर दिया।
किस अदूरदर्शी कुदैव ने दिग्वधुओं को भ्रान्त कर दिया॥
शान्ति-ज्योति बुझ गई, गगन की छाती पर छाले उग आये।
काँपे प्राण, धरा के मुख पर घोर तिमिर के कच लहराये॥
जिन पाँखों में भरी हुई थी जन जन के सपनों की माया।
हाय! काल के निष्ठुर कर ने उन पाँखों का तोड़ गिराया॥
अपना एकमात्र सुत खोकर भारत-माता बाँझ हो गई!
साँझ हो गई!!

टूट गया हिमगिरि का साहस, धरती से विश्वास उठ गया।
झुलस गये सारे तरु-पल्लव मधुवन से मधुमास उठ गया॥
सागर रोया, उच्छ्वासों के मेघ गगन में घिर घिर आये।
कौन बँधाये हमको धीरज, कौन हाय! उलझन सुलझाये॥
मन्दिर तो है वही, मगर मन्दिर का वह शृंगार खो गया।
आत्मा तो है अजर अमर, पर उसका वह आकार खो गया॥
महापुरुष! तेरे बिन मधुरा वीणा फूटी, झाँझ हो गई!
साँझ हो गई!!

ओ गुलाब के फूल!

—रमेश विकट

ओ गुलाब के फूल!
तुम्हें जो कहता है, तुम मुरझ गये हो—
झूठ बात है, सच्चे अर्थों मे तुम केवल आज खिले हो॥
इन्द्रधनुष-सा प्यारा प्यारा;

है आकर्षक रङ्ग तुम्हारा;
सावित्री-सी गंध तुम्हारी;
सत्यवान-सा अङ्ग तुम्हारा,
ओ माटी के पूत !
दूर तुम माली से सब नहीं हुए हो—
पतझर जहाँ न डेरा डाले,
तुम तो ऐसे गाँव चले हो !!

तेरे हर पाटल पर अंकित;
विश्वशान्ति की दिव्य कहानी,
तेरी टहनी पर की शबनम;
दुखियों की आँखों का पानी,
सत्य प्रेम के दूत !
स्वयं बुलबुल से कहते सुने गये हो—
काँटों के साथी होने पर भी,
सचमुच में बहुत भले हो !!

क्या पतझर में, क्या वसंत में;
तुमको अपनी माटी प्यारी,
पुरवय्या का झोंका प्यारा;
पर्वत की हर घाटी प्यारी,
ओ बगिया के प्राण !
अलग तुम कब डाली से किये गये हो—
पंचभूत रूपी भौरे से,
तुम तो केवल गले मिले हो !!

ओ जन-जीवन के कल्याणी !
आकर्षक व्यक्तित्व तुम्हारा,
फैला इस तट से उस तट तक;
नील गगन-सा प्रेम तुम्हारा,
ओ गुलशन के भूप !
सितारों से तुम अब भी खिले हुए हो—
है गवाह इतिहास, धूप में तुम—
असत्य की नहीं जले हो !!

जन-मन नेहरू

—स्वतंत्र

मनहूस मई डस गई हाय ! नर नाहर,
सूना-सूना-सा लगता सब घर-बाहर।

टल गए अष्ट ग्रह ज्योतिष के मनमाने,
सत्ताइस का जमघट आया अनजाने।
अम्बर रोया, काँपी धरती की काया,
मातम का मैला रूप धुन्ध बन छाया।।
चौंसठ शठ हर ले गया अमूल्य जवाहर !

जो सपने देखे हमने रंग-रँगीले,
आँसू पी पी कर हुए अभागे गीले।
गत गौरव, गरिमा, गुरुता फिर पायेंगे,
धरती पर स्वर्ग उतार स्वयम् लायेंगे।
चल बसा समय से पहले जगत उजागर !

सिसकी सुकुमार कली वन्त से भटकी,
मुकुला की मुखरित साँस हवा में अटकी।
गोरे गुलाब के अधर पड़ गए नीले,
अरुणिम के गोल कपोल खुरदरे पीले।।
गुन गाहक गया देखनो पड़े दिसावर !

नन्हे-मुन्ने बच्चों की आँख भरी है,
अधभर में डूबी अपनी आज तरी है।
चाचा नेहरू कह किसका हाथ धरेंगे,
हम जन्म-दिवस रो रो कर सदा भरेंगे।।
चाचा नेहरू-सा मिले कहाँ अब नागर !

युवकों का साहस छूटा, धीरज डोला,
हिचकी से आगे बढ़ा न बोल अबोला।
दुर्दिन बन कर दुर्दैव भाग्य क्यों लूटा,
लगता असार संसार निरर्थक झूठा।।
अब कौन दिखाए पथ बन भव्य दिवाकर !

मन बालक-सा, तन युवक, वृद्ध-सा चेता,
हो गया तिरोहित युग-जन युग-अभिनेता।
आहुति ले जली हुतासन जग के तन में,
ममता की काया बिखर गई कन कन में।।
लेखनी कंठ अवरुद्ध, मौन कुल कविवर!

आज है धन्य मरण

—हरेन्द्रदेव नारायण

हे युग स्रष्टा, द्रष्टा जीवन के, छवि अमरण,
अद्भुत! अलंघ्य गिरि-शृंग छू गये मनुज-चरण!
गांधी युग के स्वर्णिम प्रभात के भास्वर रवि,
तुम गए, देश श्री हत, रोता है युग का कवि।
तुम सत्य, शौर्य धीरज, प्रतीति के अमल केतु,
जो उड़ा हिमालय से ऊँचा हो शान्ति-हेतु।
युग के सागर में देश हमारा निराधार,
जब बहा, तुम्हीं ने दिशा बतायी, कर्णधार!!
तेरे स्वर से गर्जित दिशि-आँगन, विश्व, गगन,
नूतन पथ निकले, पड़े तुम्हारे जहाँ चरण।
इतिहास खोल अध्याय नया है देख रहा,
यह कौन दिव्य मृत्युञ्जय जिसका स्नेह बहा।।
जिसमें मज्जन कर मानवता संगीतमयी,
जिसका विश्वास हिमालय, प्रगति प्रतीतिमयी।
यह काल अचानक तुमको लेता चला गया,
निर्मम ने सोचा नहीं देश है अभी नया!!
युग-युग तक झुका हिमालय तेरा पद-अर्चन
करता जायेगा, है अनन्त गति, चिर जीवन!
तेरा स्वदेश नित नवल किरण-मंडित होगा,
आया दुर्भाग्य कहीं पर जो खंडित होगा।।
वन्दना तुम्हारी सत्य शक्तिमय, किरण चरण
जीवन था पाकर धन्य, आज है धन्य मरण

छीन लिया नरनाह जवाहर !

—सरस्वती कुमार 'दीपक'

काल चक्र का सबल सारथी, कभी न करता था विश्राम।
दिन के क्षण हों, या रजनी हो, प्रतिपल करता रहता काम॥
हाय, अचानक बिजली टूटी, मचा दिशाओं में कुहराम।
छीन लिया नर-नाह जवाहर, हाय किया तूने क्या राम !

नर-नाह जवाहर की बाहों से, बाँह करोड़ों की छूटी।
भारत माता की एक बार, फिर दिल्ली में किस्मत फूटी॥
फट रहा सभी का हृदय, नहीं कुछ भी तो बोला जाता है।
पलकों के भारी पलड़ों पर कुछ और न तोला जाता है॥

दासों के भाग्य-विधाता ने, कितनों को मुक्ति दिलाई थी।
सत्ता, प्रभुता से लड़ने को, मन-भावन युक्ति सिखाई थी॥
उसकी मधु यादों के बादल जब उमड़-घुमड़ कर आते हैं।
संस्कृतियों की प्रतिमाओं के युग नैना नीर बहाते हैं॥

वह काया जिसकी छाया को छू कर अनगिनती मुक्त हुए।
जुड़ गए करोड़ों भग्न हृदय, कितने स्वतंत्र संयुक्त हुए॥
छिन गई वही छाया हमसे, जिसने सुख का आकार दिया।
जिसने युद्धों की आग बुझा कर समता को साकार किया॥

विश्वास नहीं अब तक होता, वे चले गए, वे छोड़ गए।
वे बापू ! मैय्या, कमला से फिर अपना नाता जोड़ गए॥
बापू, ऐसी क्या जल्दी थी, जो उनको तुमने बुला लिया।
कैनेडी ! इतना प्यारा था, यह मानवता का अमर दिया !!

'जाओ चाचा', कहते बच्चे, "बच्चों का जगत न भूलेगा।
हर बाल-दिवस के समय तुम्हारी चरण-धूल को छू लेगा॥
हर मई प्रेरणा नई लिए, फिर आकर हमें जगायेगी।
हे वीर जवाहर, याद तुम्हारी नहीं युगों तक जायेगी॥"

अमन के फरिश्ते से

—राजेन्द्रप्रसाद त्रिवेदी 'राजेश'

जोहर-ए-जवाहर सारे जहाँ में,
सदा-ए-अमन का इक साज हो गया।
मादरे-वतन हिन्दोसताँ का,
वो नाज ओ शान यूँ हो गया।
आजा-ए फिर से फलक से उतरकर,
वतन का सरताज जो हो गया।
हिफाजत को तेरी रूह के हुस्न पर,
खुदा भी फिदा आज यूँ हो गया।
तेरे जो अल्फाज निकले जुबाँ से,
वतन की हर साँस को राज वो हो गया।
इश्के वतन के जज्बात लेकर;
वतन तेरा मोहताज यूँ हो गया।
इन्सानी-दरिंदों ओ चीनी परिंदों,
के लिये आ आज वो हो गया।
ऐ ! अमन के फरिश्ते सारे जहाँ में,
वतन तेरा सरताज जो हो गया।

जवाहर चला गया

—केशवप्रसाद दुबे 'कैस'

माँ भारती का लाल जवाहर चला गया।
हा हत ! सारे विश्व का नाहर चला गया।

रत्नों में कोहेनूर सितारों में आफ़ताब।
दुनियाँ का वाकमाल मुजावर चला गया।।
वह शांतिदूत विश्व का नेता हमारा प्राण।
नेहरू विदेशी नीति का माहिर चला गया।

जंगों जिहाद का सही दुश्मन अहिंसा पूत।
हर कौम का सरदार हुनरवर चला गया॥
वह "कैस" इस वतन का विश्व शांति का आशिक़।
हँसता हुआ हम सब को रुला कर चला गया॥

वर्तुल मंच पर स्वप्न

—सुदीप

गुलाब के वर्तुल
मृदुल, कँटीले मंच पर,
एक स्वप्न द्रष्टा ने
अपने अर्द्धनिमीलित दृगों से
एक स्वप्न देखा था :
कि पर्वत निज गर्व को
कण-कण के समक्ष झुका देंगे;
कि उफ़नते तूफ़ान,
इनसानी दीवारों के घेरे में बँधकर
इस्पाती गोदियों में प्राण देना सीखेंगे;
कि नीला आसमान
हरियाली बिखेरेगा, और धूप—
पीले दाने बरसायेगी !

उसने स्वयं धरती में हल चलाया था;
हर सर्प के फन को
छाँह देना सिखाया था।

—स्वप्न सत्य हुआ,
होता रहेगा;
लेकिन वह द्रष्टा
सोता है, सोता रहेगा।

जवाहर

—शेरजंग गर्ग

मनुजता के सहारे को जवाहरलाल कहते हैं,
जमाने के दुलारे को जवाहरलाल कहते हैं।
कि जिसके सामने शरमा गई है आग ऐटम की--
जगत में उस अंगारे को जवाहरलाल कहते हैं ।।

हमारा देश अब हर हाल में खुशहाल हो जाये,
जगत में और भी ऊँचा हमारा भाल हो जाये।
यही है कामना सबकी, यही मेरी तमन्ना है,
युवक हर देश का मेरे, जवाहरलाल हो जाये ।।

आओ सूरज का मातम करें

—मासूम रजा 'राही'

आज एक शहर में रोशनी की गिरह कट गई
दोपहर कितनी तारीक है, सूझता ही नहीं
कौन हमसे बहुत दूर है, कौन नजदीक है
दोपहर कितनी तारीक है
आओ सूरज का मातम करें।
चाँद एक खाली कशकोल है
दूर तक भूखे नंगे सितारों का एक गोल है
कौन बाँटेगा अब सौगात नूर की
आओ पलकों में आँसू की शम्म-ए-लिये
उसके दर पर चलें जिसको आँसू गवारा न थे
और जिसने हमें अच्छे ख्वाबों की सौगात दी
आरजुओं की बरसात दी
प्यार के खेल में मात दी
उस तबस्सुम को बिजली को हम अब कहां पायेंगे ?
अब महरूमियों की कहानी सुनाने कहाँ जायेंगे !

किससे टकरायेंगे।
किस पर अब फूल बरसायेंगे
आज हम लुट गये
कौन जाने कि दोपहर कब तलक खत्म हो
आओ सूरज का मातम करें।।

२७ मई, १९६४

—रामगोपाल परदेसी

गहरा अंधकार छाया हुआ है
सूझता नहीं कुछ भी
दूसरा गांधी जो चला गया है!

उफ़! आज का दिन कितना मनहूस है।
वह सूरज जो छिप गया—
अब नहीं निकलेगा,
वह चाँद जो सबको प्रकाश देता था—
शीतलता देता था—
अब उसे कोई नहीं देख सकेगा
शोक की दीवारें खड़ी हो गई हैं
४७ करोड़ों की किस्मतें सो गई हैं,

आने वाली पीढ़ीं
उस सदाबहार गुलाब का शोक नहीं मनायेगी,
देवता मानेगी उसे,
पूजा करेगी उसकी
क्योंकि वह अपने लिये नहीं—
औरों के लिए शान से जिया, शान से मरा।

नेहरू का पत्र अपने देशवासियों के नाम

—डॉ० मिथिलेश कांति

मेरे देश के वासियो, भाइयो और बहनो
तुमने मुझे जितना प्यार दिया, मुहब्बत दी
उसी का सहारा लेकर
अपने दिल को मजबूत कर
कुछ कहने की हिम्मत कर रहा हूं—
कुछ कड़वी, कुछ तीखी और तेज बात;
क्योंकि मुझे विश्वास है तुम्हारी मुहब्बत का
तुम्हारे बेशुमार, असीम प्यार का।
मुझे याद आ रही है सत्ताईस मई की दोपहरी
जब मेरे प्राण कंठ में अटक रहे थे
जब मेरे दिल की धड़कन बंद हुआ चाहती थी
जब मेरी आत्मा
मेरे पिचहत्तर वर्ष के इस पुराने चोले को बदलना चाह रही थी
उस समय मैं शांत था, सुखी था, संतुष्ट था।
जिंदगी की कामयाबियों से लबरेज,
तुम्हारी मुहब्बत से सराबोर, अपने विश्वास से विश्वस्त,
उस समय मैंने कहा : मैं मरने को तैयार हूं
मेरा काम पूरा हो गया।
कितना सुखद था वह मरना—
संतोष, विश्वास और प्रेम से लिपटा वह मरण !
उस दिन मैंने देखा तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी मुहब्बत,
मैंने शोक का उमड़ता सागर देखा
मैंने स्कूल-कालेज, कल-कारखाने, दफ्तर-दुकान,
सभी को बन्द होते देखा
मैंने देखा हजारों प्यारे गुलाबों से सजी अपनी अर्थी।
मैंने देखा मई की चिलचिलाती धूप में
लपलपाती लू में—ग़म को खाते और आंसुओं को पीते
अपने प्यारे देशवासियों को।
मुझे लगा कि मैं कितना खुदनसीब हूं।

मैं खुद कितना अदना, कितना खुदगर्ज
फिर भी देश ने मुझे प्यार किया
मेरी तमाम कमजोरियों को नज़रअंदाज़ करते
मुझे अपना बेशुमार प्यार दिया।

जिस समय मेरी चिता जल रही थी
उसकी लपटों में मैंने भारत का उमड़ता तेज देखा
जिस समय मेरी भस्मी
इस मेरी प्यारी मातृभूमि पर बिखराई जा रही थी
उस समय मैंने सोचा—यह खाद बनकर
धान की सुनहली बाल बनकर, खेतों में लहलहा उठेगी।
मैं देश के कण-कण में जी उठूँगा, अमर हो जाऊँगा।

पर अफ़सोस
आदमी अपने को कितना बड़ा समझ लेता है!
भूल जाता है अपनी हकीकत को, अपने अदनेपन को।
मैं भी ऐसा ही भूला इंसान था।
पर मेरी आँख खुली
जब मौत ने अपनी तनहाई में मेरी आँखों में उँगली डालकर
मुझे देखने को मजबूर किया।
सच कहता हूँ प्यारे
मुझे सख्त तकलीफ़ हुई उस समय
जब मैंने परीक्षाओं को स्थगित न करने के कारण
हड़तालें होती देखीं,
जब मैंने कल-कारखानों को बंद करने की माँग सुनी
और जब मैंने दफ्तर में ऊँघने वाले बाबुओं को
छुट्टी के लिये उत्सुक देखा
जब 'आराम हराम है' की जगह
'काम हराम है' का नारा बुलंद हुआ
क्योंकि दूर दिल्ली में जवाहरलाल मर गया!
सचमुच मेरे दोस्त
मैं उसी क्षण मरा।
मेरी जिन्दगी बरबाद हो गई

मरने का मेरा हौसला पस्त हो गया
फिर से जन्म लेने की तमन्ना जाग उठी

फिर मैंने देखी अपने मुर्दे की तिजारत
अपने सिद्धांतों की तिजानत
मुर्दा-परस्ती के मुझ विरोधी की
मुर्दा-परस्ती के लिये गरीब हिंदुस्तान का,
वह तीन मूर्ति का मकान ले लिया गया !
क्या आनन्द भवन इसके लिये काफी नहीं था ?
क्या इलाहाबाद की म्युनिस्पैलटी का संग्रहालय
यह काम बखूबी नहीं कर सकता था ?
फिर मैंने देखा कि देश के पिता के—
अपने गुरू, पथ-प्रदर्शक गांधी के लिए
मैंने जो नहीं किया वह मेरे दोस्त कर बैठे—
उन्होंने मुझे सिक्के में कैद कर
मुर्दा-परस्ती और बुत-परस्ती का जो नमूना पेश किया
उससे मैं कितना शर्मिन्दा हूँ, कह नहीं सकता।
मैं सख्त नाराज भी हूँ—हाय, कुछ कर नहीं सकता !

मेरे देश के वासियो
तुम मेरे दिल को पहिचानते हो
इसी से तुम से कह रहा हूं
भूल जाओ तीन मूर्ति को
भूल जाओ मेरे सिक्के को
भूल जाओ मेरी तस्वीरों को
वह सब करो जिससे मुझे प्यार था
जिसमें देश का उद्धार था।
जिससे कि देश की रग-रग में मिली मेरी भस्मी
धान की सुनहली बाल बन जाए
कल-कारखानों की आवाज बन जाए
हमलावरों पर चलने वाली गोलियाँ बन जाए
ईमानदारी और मेहनत की सुनहली तस्वीर बन जाए,
और मैं कह सकूँ, मेरा काम पूरा हो गया है !

पिता का महाप्रयाण

—गुरुदेव काश्यप

हम अपने पिता के प्राणहीन पैरों पर
माथा टेक देते हैं
सिरहाने शताब्दी की आखरी लौ सुलग उठती है
प्रकाश के पृष्ठों पर
अवसाद के श्लोक-सी हवा थरथराती है
जवान बेटे के कंधों पर सिर रखे विधवा कुल-दुहिता
यह अश्रु-व्यथित धरती
मुट्ठी भर अस्थि लिए
जीवन के दिशाहीन घाट से गुजरती है
लोहे के दरवाजे अभी भी बंद हैं
अभी भी छटपटाती है जनता—
तोड़ देने को सलाखें, दीवारें,
इन्द्रप्रस्थ के घेरे
पुलिस की कतार
काँच में कैद वक्त के काँटे
जो सीने में चुभते हैं !
कट गईं हमारे ही हाथों कपोत-धवल आस्था।
अमन की भुजाएँ
सो गया अग्नि की चादर ओढ़ कर पथ-क्लांत सूर्य
हमारे रक्त के शौर्य का !
नदियों के शव-वस्त्र पर
झुक गए व्यथित परिजन-से पर्वत
तट पर बिखर गए
गुलाब के फूल से नगर-ग्राम
इतिहास का एक और आशीर्वाद
हमारे ही अभिशप्त हाथों
पुष्पांजलि-सा प्रवाहित हो गया पराजय के प्रवाह में
डूब गई एक और नूह की नौका
कट गया बोधिवृक्ष

एक और सलीब हमारी देह को जकड़ गया
लोहे के दरवाजे अभी भी बंद है
पिता के प्राणहीन पैर जहाँ कैद थे !

एक गीत-गुलाब

—श्यामा सलिल

कल तक महकी क्यारी,
फूली थी फुलवारी !
सबके मन भाया था
जैसे; उग आया था—
यौवन की डाली पर, बचपन का फूल !
आज़ादी की दुलहिन,
निर्भय हो धरे चरण,
तपती दोपहरी में,
मेहनत की छतरी में,
बैठ, चुना करता था, दुर्दिन के शूल !
छोड़ा आनन्द-भवन,
अपनाये दुर्गम-वन,
वह तो संन्यासी था,
सचमुच अविनाशी था,
तन ही ले काल सका, प्राण गया भूल !
जाने क्यों लगता है,
सूरज जब उगता है,
आज भी गुलाबों में,
नेहरू के ख्वाबों में,
रोती है शबनम, मुस्काती है धूल !

धीरज को धैर्य सिखाया था

—गोपाल गुप्त

फिर घेर लिया है एक बार भारत माँ के घर को तम ने।
फिर खोया एक बार गांधी के बाद जवाहर को हमने।।

आँधी बन कर ये क्रूर काल आया, आकर यों चली चाल।
इस घर का दीपक बुझा दिया, पीड़ा में सबको डुबा दिया।
रो रही गली, हर कली कली, ऐसी दर्दीली हवा चली।
हर तट उदास, पनघट उदास, भारत को है उसकी तलाश।
सिर झुका दिया जिसकी खातिर सारी दुनियाँ के परचम ने।
फिर खोया एक बार गांधी के बाद जवाहर को हमने।।

जिसने गोरों से टकराकर आज़ाद तिरङ्गा पहराकर।
जीवन भर किया मार्ग-दर्शन, मरुथल को दान दिया सावन।
दे दिया देश को तन-मन-धन, बस होम दिया अपना जीवन।
था वह मानवता का दर्पण, इस जग को किया अमन अर्पण।
कर डाला दिल छलनी छलनी जग वालों का उसके ग़म ने।
फिर खोया एक बार गांधी के बाद जवाहर को हमने।।

दुश्मन के आगे झुका नहीं, हिम्मत वाला था, रुका नहीं।
माता का कर्ज़ चुकाने को जिस तन का लोहू चुका नहीं।
वह तो खतरों में खड़ा रहा, आँधी में भी वह अड़ा रहा।
जन-जन की हृदय-अँगूठी में वह लाल जवाहर जड़ा रहा।
धीरज को धैर्य सिखाया था, सीमा पर उसके दम-खम ने।
फिर खोया एक बार गांधी के बाद जवाहर को हमने।।

मुक्त हो गए जरा-मरण से !

—विष्णुकुमार त्रिपाठी 'राकेश'

टूट गया अमिताभ जवाहर, भारत माँ के सिताभरण से !
निराधार हो गई अचानक प्रजातंत्र की पावन गरिमा,

दिग-दिगन्त निःशब्द बन गए शोकाकुल भावों की प्रतिमा ।
पंचशील हो गए अकिंचन, रोते अखिल विश्व के लोचन;
बिखराकर परिमल अग-जग में, मुक्त हो गए जरा-मरण से!

विश्व बंधुता के उद्घोषक, नेहरू सचमुच सिद्ध सर्व थे,
दुःख से कातर धरती के हित दिव्य अलौकिक पुण्य पर्व थे।
जन वाणी के प्रथम विधायक, मौलिक अधिकारों के गायक;
सूत्रधार थे नव भारत के, निष्ठा के शुचि उदाहरण-से!

आत्म-त्याग से भर दी तुमने मानवता की रीती झोली,
अधर अधर पर लगी गूँजने प्रीति-प्यार की मीठी बोली।
ओ युग नायक, ओ पुरुषोत्तम, आत्र न होगी 'मोती' की कम;
युग युग तक प्रेरणा मिलेगी त्याग, तपस्या, सदाचरण से!

नेहरू : एक दर्पण

—नरेन्द्र 'चञ्चल'

शृंगार-सदन का
सबसे निर्मल दर्पण टूट गया !
दर्पण, हाँ, निर्विकार दर्पण
जिसमें देश ही नहीं—
विश्व अपना प्रतिबिम्ब देखता था ।
थके झुलसे स्याह चेहरों पर
किरणों के ढेर-ढेर फेंकता था !
टूटे हुए दर्पण को जोड़ना तो मुश्किल है
आओ ! भीड़ से अलग हटकर
एक-एक टुकड़े में अपना प्रतिबिम्ब निहार,
कुछ सोचें-विचारें :
इस तरह टूटे हुए दर्पण की—
इच्छाओं को सँवारें ।

तुम : तुम्हारी तस्वीरों में

—सरल

तुम नहीं हो अब हमारे बीच—
केवल तस्वीरें हैं तुम्हारी
तस्वीरें ही तो हैं जिन्हें हम टाँगते हैं
बैठक, संसद, सभागारों में
सजाते
फ्रेमों किताबों एलबमों में
देखते-दिखाते
हर टटके गुलाब को
जो
तुम्हारी याद में
स्पर्श के अभाव में
खिलता हुआ मुरझा रहा
तस्वीरें दिखाते हर अतिथि को
जिज्ञासु पर्यटक को
जो तुम्हें,
तुम्हारी मिट्टी में न देख
दुःखता जा रहा है;
अब शेष केवल तस्वीरें ही तो हैं
जिन्हें
हम दिखा सकते है
तुम्हारे साथ बीते-बिताये सब क्षणों को
(जो अमर है)
ताजा
और ताजा कर
स्वयं को बहला सकते हैं
अब मात्र तस्वीरें ही तो है
जिनमें देख सकते है—
भाखरा, नागल भिलाई तीर्थों में

आदमी के रूप में.
सृष्टि के निर्माणकर्त्ता को—
तुमको
तुम्हारी मुस्कराहट में सुरक्षित
देश की गरिमा
प्रगति को
और बाँध लेते गाँठ मन में
टूटे हुए हम लोग—कि
तस्वीरें बचानी हैं
कल के भारत को
तुम्हारी ही कहानी
तस्वीरों से बतानी है।

संगम का फूल

—रामभजन त्रिपाठी 'सारंग'

मानसरोवर चिटक गया है खोकर मंजु मराल को।
भुला न पायेगी वसुन्धरा वीर जवाहरलाल को॥

फूल उठी मानवता पाकर उस संगम के फूल को।
जग मस्तक से लगा रहा है उस धरती की धूल को॥
ऐसा था व्यक्तित्व, कि जैसे मणि-कंचन के योग-सा।
था गुलाब का प्रमी लेकिन कोसा नहीं बबूल को॥
ऊँचा किया विश्व में सचमुच भारत माँ के भाल को।
भुला न पायेगी वसुन्धरा वीर जवाहरलाल को॥

वाणी के जादूगर का कुछ अजब निराला रंग था।
एक मंत्र में सभी दिलों को करता अपने संग था॥
कोटि-कोटि कंठों में जिसका गूँज रहा जयनाद है—
देश-भक्ति की गुरु-गरिमा का धवल कीर्ति गिरि-शृंग था।

पाँवों से पाताल, हाथ से थामे व्योम विशाल को।
भुला न पायेगी वसुन्धरा वीर जवाहर लाल को॥

वह अनुरागी था, जीवन में रहा विराग विराग से !
ईद बहुत प्यारी थी उसको, प्यार बहुत था फाग से॥
पूर्व और पश्चिम का अद्भुत एक समन्वित रूप-सा,
परम साहसी खेला हरदम क्या पानी क्या आग से!!
देख देख कर लज्जित होते मृगपति उसकी चाल को।
भुला न पायेगी वसुन्धरा वीर जवाहरलाल को॥

कर्मठता में प्राण भर दिये अब आराम हराम है।
यह औद्योगिक क्रान्ति कह रही—सफल तुम्हारा काम है॥
भारत फिर से सोने की चिड़िया हो ऐसी योजना,
विश्व क्षितिज पर अंकित अनुपम अमर तुम्हारा नाम है॥
स्तम्भित दिग्पाल देखते तेरे किये कमाल को।
भुला न पायेगी वसुन्धरा वीर जवाहरलाल को॥

एक और गुलाब

—डॉ० शत्रुघ्न प्रसाद

सुर्ख गुलाब की पंखुरियाँ
शतदली-सी
सौरभ
पारिजात-सा
पर दुर्गन्धों में डूबीं दिशाएँ
उस भुवन-मोहन सौरभ को
ग्रहण करने को तैयार नहीं
और भाण्डार कोण—
उसके उपमान को कुचल कर
अपमान की चिनगियाँ बिखेरने लगा

वह मुस्कुराता रहा
वायव्य कोण
उसकी मुस्कानों से घायल हो गया
लेकिन
उन पंखरियों को पाकर
अनन्त निहाल हो गया।

कबूतर, बाज और हम

—राजेन्द्र च्यवन

विस्तृत नीले आकाश में
शान्ति का श्वेत कबूतर
भर रहा था मंगलमय उड़ान
ग्रीवा में बँधा प्रेम सत्य अहिंसा का सुरभित गुलाब
विश्व की आँखें उस पर टिकी थीं
पर अनायास मई की तपती दोपहरी में
उस बाज ने मारा झपेटा
(जो समय समय पर यूँ ही मारता है- झपेटा
और सब देखते रह जाते असमर्थ असहाय)
काँप गये दिग्दिगन्त
धरती और नभ
गीली हो गईं आँखें
असहाय हम न कुछ कर पाये
पर आज तक उस कबूतर की
अमर स्मृति कचोटती है प्राण
शायद फिर ऐसा कबूतर पैदा न हो।
क्या करें हम ?
बस उस कबूतर की उड़ान का अनुकरण-
यही तो श्रद्धांजलि है।

तुम्हारे न रहने से

—राही शंकर

तुम्हारे न रहने से
कवर पृष्ठ पर बच्चे रोते हैं,
चुपचाप उदास है गीतकार।
कलम रख कर,
उदास दोपहरी में सोचते है;
आकाश छोटा लगता है,
धरती सूनी—
चारों ओर रेंगता है समय
धीरे धीरे।
हवा चुप है
कलैण्डर में—
सत्ताईस मई का दिन
लगता है मूर्छित-सा—
लाश-सा—आज का दिन
तुम्हारे न रहने से !

पिकासो के कबूतर

—रमेश शर्मा 'महबूब'

गेहूं की वाली चोंच में दावे
गणतन्त्र दिवस पर
पिकासो के कबूतर दिल्ली तक आयेंगे।
लालकिले पर
चक्रांकित तिरंगा लहराता देखेंगे,
गद्गद् हो जायेंगे।
खोजेंगे उसे अनगिनित लोगों की भीड़ में
जिसकी धवल अचकन पर

गुलाव मुस्कुराता था।
वे, अव उसे नही पायेंगे।
नन्हीं-नन्ही आँखों में
वड़े-वड़े आँसू भर लायेंगे।
आये थे जिधर से—उधर लौट जायेंगे।

तुम प्रतिविम्ब सकल भारत के

—धर्मपाल शर्मा 'अलकेश'

वीर जवाहर नाम तुम्हारा अमर हुआ इतिहास में।
तुम ध्रुव तारा बन कर चमको इस नीले आकाश में।

भारत की वह पुण्य धरा जिससे देवों ने प्यार किया,
जिस धरती पर ऋषि मुनियों ने मंत्रों का उच्चार किया!
जहाँ सभ्यता के सूरज की किरण सर्वप्रथम फूटीं,
उसी भूमि पर मोती के घर नेहरू ने अवतार लिया॥
हे नेहरू तुम वास कर रहे जनता की हर श्वास में।
तुम श्रद्धा बन फूट पड़ो जन-जीवन के उल्लास में॥

हे नेहरू! तुमने युग वदला, मृत देही में प्राण दिया,
तुमने भारत के हित अपना तन मन धन वलिदान किया।
युग सृष्टा, युग द्रष्टा थे, युग-युग की अमर विभूति,
तुमने त्रस्त दलित मानव को संकट से परित्राण दिया॥
तुम भारत के रत्न, निरन्तर चलते रहे प्रकाश में।
नवनिर्माण देख मुस्काये, दुःखित हुए हर नाश में॥

विश्व शान्ति के तरु को तुमने अपने श्रम से सीचा,
स्नेह, प्रीति औ' बन्धु भाव का चित्र अनूठा खीचा।
हे उदार, तुमने पुकार कर कहा अमर वाणी मे,
'सह अस्तित्व बहुत ऊँचा है, द्रोह-द्वेष है नीचा॥'
तुम वह पाटल पुष्प कि जो खिलता है हर मधुमास में।
महाप्राण! सौरभ भर दो तुम मेरे हर उच्छ्वास में॥

तुम प्रतिबिम्ब सकल भारत के, पंचशील के निर्माता;
कोटि-कोटि बाहों के संबल, हे मानव-मन के ज्ञाता।
तुमको पाकर धन्य हुए हम, धन्य हुई भारत माता,
तुमसे लेकर नई प्रेरणा गीत सुबह के मैं गाता।।
तुम प्रियवर मुझसे मिल जाना कभी-कभी अवकाश में !
शान्ति-विपिन के शान्ति दूत तुम अमर हुए इतिहास में।।

क्यों सोये हुए हो

—प्रेमशंकर 'आलोक'

आज बन कर मौन क्यों सोये हुए हो ?
एक भारत क्या, जगत ही रो रहा है !
धैर्य जन जन के हृदय का खो रहा है !
और, तुम निज नयन मूँदे बेखबर हो,
राम जाने ! क्या तुम्हें यह हो रहा है ?
आह ! किसके ध्यान में खोये हुए हो ?
आज बन कर मौन क्यों सोये हुए हो ?

खोल दो ! अपने नयन युग खोल दो तुम,
जग रहे हो, यह अधर से बोल दो तुम।
विरह की आकुलमयी अनुभूतियों में,
हे जवाहर ! मिलन का मधु घोल दो तुम।।
आँसुओं के बीज क्यों बोये हुए हो ?
आज बन कर मौन क्यों सोये हुए हो ?

तुम हँसो तो हँस पड़े यह देश प्यारा,
सूख जाये एक क्षण में अश्रु-धारा।
लो लगा अपने गले से शीघ्र आकर,
द्वार पर कब से खड़ा है विश्व सारा।।
हृदय का अपनत्व क्यों धोये हुए हो?
आज बन कर मौन क्यों सोये हुए हो ?

एक स्वप्न और भंग हो गया !

—धर्मपाल भसीन

चाँद भी उदास आज लग रहा,
दर्द चाँदनी बिखेरने लगी।

आज हर खुशी अतीत हो गई;
श्वास पर समय की जीत हो गई।
डाल-डाल झुक गई, शोक हो गया मुखर—
वेदना की उर्मि गीत हो गई !
सूख धूल में मिली है पाँखुरी—
क्यारियों से आँख फेरने लगी।

बागवाँ कहाँ, बहार लुट रही;
पाँखियों की साँस-साँस घुट रही।
नाव डगमगा रही, आज सिंधु कूल पर—
डाँड हाथ से सभीत छुट रही !
आँधियाँ न छीन लें कगार को—
कामना युगों की टेरने लगी।

ज़र्द पत्तियों का रंग हो गया,
एक स्वप्न और भंग हो गया।
देह सिर्फ धूल है, आत्मा भले अमर—
प्राण काफ़िले के संग हो गया।
छोड़कर गया हमें अनाथ-सा—
याद आँधियों-सी घेरने लगी।

ओ गीता के साक्षात कर्मयोग

—प्रमोद त्रिवेदी

चिलचिलाते सूरज पर, घटाटोप खग्रास
सुनसान गलियों में सिसकती लू
सुनाती है मौन व्यथा
काँप जाता है सहस्त्र फणि
विद्रोह करता है विश्वास
पड़ता है तमाचा जब विश्वास पर यथार्थ का।
नहीं रहा नेहरू ?
चला गया युगपुरुष ?
सो गया भाग्य-विधाता ?
मई की सत्ताईस तारीख आई और चली गई।
आँसू के बदले पटा लिया सौदा, ठग लिया हमें !
छोड़ गई याद
बनकर पुण्य तिथि
दौड़ पड़े गुलाब होने को न्यौछावर
पाने को स्पर्श पावन समाधि का
होते हैं धन्य
भूलते स्वयं को, सारी व्यथा का।
छलकाते ओस भरे आँसू
पंखुरियों की आँखों से
खिले अधखिले उदास बेआब गुलाब।
कहती है सुगन्धि—
चला गया पारखी।
रोकते है आँसू
देखते गीता, समझाते मन
"जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु ध्रुवम् जन्म मृतस्य च"
पर, सारा ज्ञान हो जाता है परास्त
गोपी के सामने ऊधो की तरह !
तब डबडबाती हैं आँखें
रुँधता है कंठ, हो जाते हतप्रभ
जी चाहता है कोई रुला दे, हल्का कर दे।

तब रोकता है कोई
"देखते नहीं
सोया हूं पहली बार
खुली हवा में
बापू की गोद में शान्तिघाट पर !
कर रहा हूं विश्राम
सारी फाइल निपटा कर
मत करो शोर, जगाम्रो मत"
तब रह जाती है गुंजन
"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन
तुम्हीं थे विषपायी
जो पीते रहे हलाहल और भुलाते रहे
पचाते रहे
करते रहे पागल
प्यार लुटाते रहे
काँटों की चुभन में मुस्काते रहे।
ओ विधाता के अद्‌भुत रहस्य !
तेरा हल, विश्लेषण कहाँ सम्भव हमसे
ये क्या कम है हमारे लिये--
जिये तेरे युग में,
ओ गीता के साक्षात् कर्मयोग !
अब लगता है ऐसा हजारों हजारों को—
सिसकता, रोता, बिलखता छोड़,
जा रहा है ऋतुराज
जो आया था उड़ाता गुलाल
जा रहा है, जा रहा है
छोड़कर मँझधार में
पतझार में
उजड़ दयार में।

एक व्यक्ति : एक स्वप्न

—विनोदकुमार भारद्वाज

तुमने एक स्वप्न देखा था,
गुलाबी रंग का।
तुमने कल्पना की थी—
एक ऐसे संसार की
जहाँ नामोनिशान न हो
इन्सानियत को झुलसा देने वाली,
आदमी को गिरा देने वाली—
जंग का।
लेकिन तुम्हारे गुलाबी सपने पर
एक काले नाग ने अनायास ही—
अपनी काली छाया डाल दी।
तुम्हारे सपने में कालापन आ गया।
कुछ समय के लिए,
भटका देने वाला—
कुहरा छा गया।
फिर भी तुम्हारी मुस्कान गायब नहीं हुई,
तुम्हारा चेहरा मुरझाया नहीं।
तुम्हारा गुलाबी सपना
काला न होने पाया
तुम मुस्कुराते ही रहे!
आखिरी साँस तक
तुम्हारी मुस्कान को
तुमसे कोई छीन न पाया
चूँकि तुममें ताकत थी
तूफानों से लड़ने की
आगे-आगे बढ़ने की!

कौन गरल का पान किए था

—दामोदर शास्त्री

कौन धरा-सा धीर, विनत था नभ-मण्डल-सा ?
सागर-सा गंभीर, विमल था गंगा-जल-सा ?
कौन शान्ति का कमल, क्रान्ति का अनल लिये था ?
चन्द्रचूड़-सा कौन गरल का पान किये था ?

कौन विश्व का मापदण्ड बन आज खड़ा था ?
कौन सत्य पर अंगद-पद-सम अडिग अड़ा था ?
कूटनीति से किसने छल को पृथक् किया था ?
सत्य-शिला पर राजनीति को किसने खड़ा किया था ?

व्यष्टि-कमल में कौन समष्टि-पराग सजाता ?
कौन समष्टि-गगन में था रवि-तेज जगाता ?
किसने मन की वाणी को निर्बन्ध किया था ?
प्राण लेखनी का किसने स्वच्छन्द किया था ?

शोषण-विष इस ओर, उधर वह तानाशाही;
कौन ढूँढ़ता था मध्यम-पथ युग का राही ?
कौन तना गिरि-शृंग सदृश था तूफानों में ?
सजा रहा मधुस्वप्न कौन गीले गानों में ?

टिकी आज थी जग की किस पर कोमल आशा ?
कौन शान्ति की आज गढ़ रहा था परिभाषा ?
कौन विश्व का सर्वाधिक विश्वासपात्र था ?
कौन विश्व का केन्द्र-विन्दु बस एकमात्र था ?

धरती माता फूट-फूटकर रोयी

—रामकृष्ण प्रसाद 'उन्मन'

एक महामानव की अर्थी चली आज तज हमको,
एक बार फिर धरती माता फूट-फूटकर रोयी।

क्रूरनियति ! तूने मानव को दिया अमिट यह शोक,
सत्य पंथ के शान्ति-पथिक को लिया मार्ग पर रोक।
आज विश्व ने अपनी साधों की संचित निधि खोयी !

जिसने सारे जन-जीवन को नव आलोक दिया था,
कुंठित मानवता को अपने तप से पूत किया था।
उसको जाते देख सृष्टि ने अपनी आँख भिगोयी !

उसे अमरता ने अपने हाथों से वरण किया है,
हार गया है काल, मरण का काँपा कुलिशहिया है !
उसने मर कर भी जीवन की विजय-वेलि है बोयी !

जाओ, वीर जवाहर तुमको हम न भूल पायेंगे,
स्वप्न तुम्हारा पूरा करने में मर-मिट जायेंगे।
अमर तुम्हारे आदर्शों की हमने लड़ी पिरोयी !

नेहरू की मौत पर : प्रतिक्रियाएँ

—विद्याभूषण

एक विशालकाय वटवृक्ष
मौत की आँधी में उखड़ कर
धराशायी हो गया।
उसकी जड़ें खिचीं
कि दूर-दूर तक दरारें पैदा हो गईं।
सिर्फ कुछ बौने पौधे खिलखिला कर हँसे
एक प्रकाश-स्तम्भ टूट गया।
यह तूफ़ानी रात कितनी अँधेरी है,
हाथ को हाथ नहीं सूझता,
कदम आगे बढ़ें कैसे ?
दिशाएँ काली हैं, रास्ते कंटकाकीर्ण !
छोटे-छोटे टार्चों का नन्हा प्रकाश दूर तक साथ नहीं देता !

एक छत टूट गई
नीचे दबे हुए लोग चीख रहे हैं,
उन्हें बचाने को कुछ लोग दौड़े हैं
जिनमें अधिकतर चोर है !
एक तेज़ चलने वाली नाव
अपने मल्लाह को खोकर
भँवर में पड़ी है।
जहाजों पर खड़े लोग हँस रहे हैं।
एक मजबूत रस्सी
जो सबको बाँधे थी,
अचानक कई जगहों से टूट कर खुल गई,
कसे हुए बन्धन ढीले पड़ गए,
पुर्जे छितराए !
और अब खतरा है—
भारी मशीन कहीं टुकड़ों में बँट न जाए !

एक शोक-गीत

—पद्मधर त्रिपाठी

हम दुःखी नहीं हैं
इसलिए कि उसने बहुत आगे के लिए चाहा गया संकेत दिया।
दुःखी हम नहीं हैं
इसलिए कि दर्पण पर जमी हुई धूल को उसने पोंछा
और दिखे हर चेहरे को एक नया अर्थ दिया।
हम दुःखी नहीं हैं
इसलिए कि
उसकी मुँदी पलकों में एक नीली नदी बह रही थी
और अनेक टूटे हुए गुलाब उसमें तैर रहे थे
(वह केवल नींद में था !)

वह जितना ही बिखरा
और अधिक जुड़ता गया भीतर से।
उसके घायल कन्धों पर रखा हुआ
लड़खड़ाती साँसों का बोझ
उतर गया था, और
वह चुप हो चुका था
अपनी ही चोट पी।
वह स्मारक बन गया था एक दहकते इतिहास का !
और हम दुःखी नहीं हैं
सच ही
इसलिए कि वह बारिश में नहीं
दर्द की धूप में जिया

× × ×

हाँ, हम दुःखी हैं
केवल इसलिए कि हम दुःखी नहीं हैं !
और हम बहुत दुःखी हैं
कि उसके सफेद कबूतरों के पंख
हमारे बालों में फँस गए हैं !

स्मरणाञ्जलि

—डॉ० कर्णसिंह

अब तुम चले गये, उनकी कतारों में खड़े होने के लिये
जिनके नाम सर्वदा प्रत्येक हृदय में रहेंगे,
हँसते हुए उस गुलाब की आनन्दमयी खुशबू की तरह,
जो तुम्हारा अन्तरंग हिस्सा था;
तुम लड़े और भिड़े हमारे राष्ट्र को प्रकाश देने के लिये,
उसे मुक्ति दिलाने के लिये, उसकी जंजीरों को काटने के लिये
तुमने एक विशाल, साम्राज्यवादी शक्ति से लोहा लिया,

तुमने कष्ट और पीड़ा, क्षति और दुःख सहे,
फिर भी तुम लड़े, और अंत में जब हम विजयी हुए,
और स्वतंत्रता के उज्ज्वल आलोक में अपना स्थान ग्रहण किया
तो तुम स्वयं राष्ट्र के सूर्य बन गये,
और उसके कल्याण हेतु दिन-रात परिश्रम किया !
अब तुम चले गये, और हम जो तुम्हारे पीछे यहाँ बच गये हैं,
तुम्हारी मधुर स्मृतियों को सँजोये रहेंगे,
और हृदय एवं मन की प्रत्येक शक्ति से प्रयास करेंगे,
कि तुम्हारे उज्ज्वल सपने सच हो सकें।

हे युगपुरुष ! शांति अवतार !

—रमेशचन्द्र जैन

आवागमन इस जग की रीति,
करे क्यों कोई मौत से भीति।
न बच पाये जब बुद्ध महान्,
करे क्यों शोक तू फिर नादान।
गये नेहरू भी त्याग शरीर,
नयन तो व्यर्थ बहाए नीर।
है किस पुष्प में कितनी बास,
बताता यह केवल इतिहास !

× × ×

हे युगपुरुष ! शांति अवतार,
दिलों पर है तेरा अधिकार।
दिखा कर शांति-राह महान्,
मानव का चाहा कल्याण।
सर्वोच्च स्थान तू पायेगा,
जब इतिहास लिखा जायेगा।

वसीयत श्री नेहरू की

—शोभनाथ पाठक

अस्थि युग का मेरे इतिहास, आज हो गया वही साकार।
वसीयत श्री नेहरू की दिव्य, ला रही उस पर अधिक निखार।।

प्राण जब तक शरीर में रहें, करेंगे वे दुनियाँ का काम।
शब्द में कर्मठता की लोच, हमें तो है "आराम हराम"।।

मृत्यु के भी मेरे पश्चात्, अस्थि का हो समुचित उपयोग।
विहँसती धरती से मिल सकूँ, साथ में रहें देश के लोग।।

मृत्यु को जहाँ करूँ मैं प्राप्त, जला दी जाय वहीं पर देह।
भस्मियाँ भी जनता के लिए—मिला है जिससे अतुलित नेह।।

विमानों से भस्मी का अंश, बिखेरा जन्मभूमि पर जाय।
बचे जो कुछ उसका अवशेष, प्रवाहित किया गंग में जाय।।

हमारे बंधु कृषक मजदूर, अहर्निशि करते जिसमें काम।
मातृ भू को माटी से मिलूँ, निरखता रहूं जिसे अविराम।।

बन्धुओं का मेरे श्रम-स्वेद, गिरेगा भू पर जब तत्काल।
मिला कर उसमें अपनी भस्मि, पुलक होऊँगा अधिक निहाल।।

जाह्नवी का अतुलित अनुराग, मुझे बचपन से ही है प्राप्त।
जलधि में जाऊँ उनके साथ, चतुर्दिक जो भारत के व्याप्त।।

मातृ भू की माटी से प्यार, मिला है जो जनता से नेह।
करूँ मैं क्या उसका प्रतिदान, युगों तक रहे देश ही गेह।।

हृदय में है विह्वलता व्याप्त, राष्ट्र से कब हो जाय बिछोह।
हमारे कृषक और मजदूर, हमारी जनता का है मोह।।

प्राण जब तक शरीर में रहें, करूँगा जनता का कल्याण।
सूक्ष्म स्थूल रूप में देह, मृतक पर मानवता का त्राण।।

जून इक्कीस सन् चौवन सदा, कहेगा अमर अस्थि इतिहास।
पूर्ण इच्छा नेहरू की हुई, कर रहे कण कण में वे वास!!

जन-जन के सिरमौर

—राजेन्द्र 'काजल'

प्रगति क्षितिज का भाल चूमने को व्याकुल प्रत्येक,
उसी तरह हो रहा शान्ति का देश देश अभिषेक।
बडा शान्ति से कोई जग में नहीं इरादा नेक,
धीरे धीरे पूरब-पच्छिम होते जाते एक॥

कौन कह रहा लाल गुलाबों का अस्तित्व नहीं अब,
मन से इन्हें सटाकर रक्खे वह व्यक्तित्व नहीं अब!
इसका अर्थ कि नंगल चम्बल में भो तत्व नहीं अब,
इसमें प्रतिबिम्बित क्या उसका वह देवत्व नहीं अब?

जो कण स्पर्श किया वह सहसा सूरज बनकर चमका,
देख हर लिया हर दुखिया का दुखड़ा जनम-जनम का।
दिशा दिशा में फूँका वह मर्मीला मन्त्र मरम का,
जिसमें था उत्थान विश्व के हर जाति धर्मों का॥

इसीलिये तू अमर कि कहते विश्वासों के आँसू
गोरों के वह हृदय बींधते उपहासों के आँसू।
तूने ही तो पोंछे वन्दी इतिहासों के आँसू,
पतझारों का वक्ष चीर हम मधुमासों के आँसू!!

आजादी के अट्टहास थे जन जन के सिरमौर,
रहा निराला दुनियाँ में तेरा जीने का तौर!
बिना काम निपटा लेना सीखा न था ठौर,
घुटने टेक दिये एटम ने शुरू किया वह दौर॥

ऐसा वृक्ष कि जिसकी शाखाओं का मृदु आंचल,
करता था आश्वस्त हमें देकर छाया शीतल।
क्या पूरब क्या पच्छिम दक्षिण या उत्तर चंचल,
सब जिसके विस्तार के नीचे रहते थे प्रतिपल॥

जिसके पीछे विश्व चल पड़े वह इतिहास अमर है,
मँझधारों में भी न टूटे वह विश्वास अमर है।
मिल जाने से कुछ पा जाने का आभास अमर है,
जो स्वदेश के हित में निकले ऐसी साँस अमर है!!

तूने केवल किया नहीं भारत का नाम उजागर,
जग की हर दुखती रग को पाँवों की बना महावर!
रीत न पायेगी युग युग तक तेरे त्याग की गागर,
स्वीकारो बिखरे छन्दों में श्रद्धा सुमन जवाहर!!

क्यों उदास लग रहा गगन

—दिनेशचन्द्र 'अरुण'

युग पुरुष, गये कहाँ, सूर्य से प्रकाशवान्।
विलीन हो गया नक्षत्र, चन्द्रमा-सा कांतिमान्।
बहार रो रही, रो रहा चमन!
क्यों उदास लग रहा गगन!!

हिमशिखर की सिसकियाँ, गूँजती दसों दिशा।
घुट रहा है कण-अकण, लुटी लुटी उषा निशा।
है वही समय, मगर लिए घुटन!
क्यों उदास लग रहा गगन!!

मृत्यु भी ठगी गई, हवा मधुर ठहर गई।
झूठ है खबर उड़ी जो, यह धरा सहम गई।
गुलाब चुप, सिसक रहे सुमन!
क्यों उदास लग रहा गगन!!

सुन के मृत्यु देव की, प्रगति शिथिल हो गई।
सिंधु भी सिसक उठा, लहर लहर विकल हुई।
कोटि कोटि छलक उठे नयन!
क्यों उदास लग रहा गगन!!

फूल की पवित्र भस्मियाँ, किरण-सी बिखर गईं।
जो न मिट सके प्रकाश, ज्योति वह जला गई।
कभी न मंद हो मशाल की अगन!
क्यों उदास लग रहा गगन!!

पैग़ाम था नेहरू

—लखपत जैन

इन्सान की हकीकत का नाम था नेहरू !
गांधी के ख्वाब का ही अंजाम था नेहरू !!

संसार के लिए ही वह शान्ति चाहता था।
उपकार के लिए ही वह क्रान्ति चाहता था ॥
इक आदमी के रूप में पैगाम था नेहरू !
गांधी के ख्वाब का ही अंजाम था नेहरू !!

वह चाहता था मिल्लत हर एक से सदा।
हर रोज इसी खातिर रहता था वह फिदा ॥
वह रोशनी बना-सा सरे-आम था नेहरू !
गांधी के ख्वाब का ही अंजाम था नेहरू !!

हाकिम था, हूकूमत थी, पर वह फकीर था।
मंज़िल की तरफ बढ़ता एक राहगीर था ॥
बढ़ने की कोशिशों में सुबह-शाम था नेहरू !
गांधी के ख्वाब का ही अंजाम था नेहरू !!

विश्वास नहीं होता

—विश्वमोहन गुप्त 'भारती'

विश्वास नहीं होता यह कि नेहरू चले गये हैं !
गंगा की कल-कल धारा, मानो नेहरू को वाणी।
नर्मदा-कछार में हँसता, अब भी वह अवढ़र दानी ॥
सिन्धु, ताप्ती गाती शुचि पंचशील का नारा।
नेहरू के चरण पखारे, देखो यमुना की धारा ॥
विश्वास न होता मन को कि नेहरू चले गये हैं !

हरे-भरे खेतों में, उसके दिल की हरियाली।
हँसती गुलाब की कलियाँ, अब उसके मन की डाली ॥

टेसू-पलास में देखो उसका रोबीला चेहरा।
धानों की नई बालियाँ उसके माथे का सेहरा॥
मत रहो मौन, बोलो कुछ, क्या सचमुच चले गये हैं !

सीमा के प्रहरी सुनते अब भी नेहरू की भाषा।
वे ही सन्देश पुराने, अब भी देते नव आशा॥
हर ग्राम-ग्राम में जलती बस आजादी का ज्वाला।
हर देश आज मतवाला, पी विश्व-शान्ति की हाला॥
कैसे कह सकते है फिर, वे सचमुच चले गये है !

अदृश्य जवाहर

—रामेश्वर माहेश्वरी

मौन क्यों हैं आज स्वर सारे,
क्यों उदास हैं आज गगन के चन्दा-तारे ?
क्या तुम्हें नहीं मालूम कि खोया आज जवाहर
आओ ढूँढ़ें हम सब मिल कर—
कहाँ गया है ?
जिधर देखते उधर उसी के पद चिह्नित हैं,
कही भाखरा-नंगल और कही चम्बल वन !
इधर-उधर लहराते निर्माणी स्वर उसके,
कहीं बने फौलाद, कही हथियार बने है !
किन्तु स्वयं वह नही दीखता,
बना हुआ अदृश्य, छिपा है—
खेतो में खलिहानों में,
गंगा यमुना के पानी में !
कौन दे सकता है हमको आज पता फिर उसका
हिन्द की माटी में समा चुका हो—
कण-कण जिसका

+ + +

चित्र यों तो अब भी हजारों हैं
मगर नेहरू के चित्र-सा
चित्र कोई दिखता नहीं है।
दुनियाँ में यों तो इन्साँ आज भी हैं अनेकों
मगर नेहरू-सा इन्साँ एक भी नहीं
जो जिया भी हो तो देश की खातिर,
मरा भी हो तो देश को खातिर !!

मुंद गये नयन

—मधुमालती चौकसी

मुंद गये नयन धरती के प्यारे लाल के,
हिल उठी धरा, रुक गये चरण ससार के।

पलभर पहले जिन होंठों पर मुस्कान थी,
गुनगुन करते भौंरों-सी मधु गुंजार थी।
जिन नयनों से बचपन-यौवन झाँका करते
उन नयनों में अह ! आँसू की भरमार थी।

रो उठी दिशा जब हाथ बढ़ाया काल ने,
बुझ गये दीप झोंपड़ी, महल, घर-द्वार के !

जब उठी लपट, बाँहें फैला बढ़ने लगीं,
जल जल लकड़ी भी रोती थी श्मशान की।
छिप गया सूर्य, भारत को रजनी दे गया,
जल रही शान्ति की लाश, न थी इन्सान की।

रुक गया विश्व, बस तेरे ही विश्वास से,
जब थे बाजे बज रहे तुमुल संहार के।

स्नेहिल आँखों में हँसे हजारों स्वप्न जो,
साकार हुए कुछ बन्दी पलकों के तले।

वह हँसी सरल, सीने पर हँसते फूल-सी
उर-उर मे जिससे समता के दीपक जले।
जब-जब निराश हो दुनियाँ ने टेरा तुझे,
तू दौड़ा और रुका न पलभर हार के !

हाय ! यह भूचाल कैसा

—शेषनाथ सिंह 'शेष'

हाय ! यह भूचाल कैसा, गगन फटता जा रहा है।
हाय ! असमय ही प्रलय-घन क्यों गरजता आ रहा है ?
सज रहे अनुपम किरण-रथ, देवगण किसको चढ़ाने ?
बज रहे है शंख-घंटे किस मनुज के विरह गाने ?

कौन वह, जो आज हमको छोड़ कर यों जा रहा है ?
कौन वह, जो रूठ कर मुँह मोड़ कर यों जा रहा है ?
रोक लो उस मृत्यु-रथ को, ज्योति जग जिसमें समाई।
हिल रहा हिमराज अब भी, किस तरह देंगे विदाई ?

कौन पोछेगा कपोलों पर वही जो अश्रु-धारा ?
कौन मरते विश्व को संतोष का देगा सहारा ?
कौन हँस कर हाय ! बापू का हमें सन्देश देगा ?
कौन नन्हें बालकों की सिसकियों में दम भरेगा ?

वह कि जग का प्यार जो था, धार बन क्यों बह रहा है ?
वह कि जग का हार जो था, क्षार बन क्यों दह रहा है ?
आह, जलती जा रही क्यों आज कमला की धरोहर ?
हाय छलता जा रहा क्यों आज सुषमा का सरोवर ?

नयन-पट खोलो जवाहर ! है खड़ी बेहाल दुनियाँ !
देख ! तेरी इस चिता पर टेकती है भाल दुनियाँ।
भारती यमुना किनारे आरती ले रो रही है।
देख ! तेरी इन्दिरा मुँह आँसुओं से धो रही है ।।

जवाहर-ज्योति

—राजेश्वर मिश्र 'रत्न'

जले ज्योति यह सत्प्रकाश ले, दे जग को आलोक।
भारत का कण कण दीपित, संसृति हो उठे अशोक ।।
तपःपूत जो दिया राष्ट्र को एक स्वतन्त्र निदान।
वही जवाहरलाल नेहरू, मेरा वही महान ।।
भौतिक सुख की परिभाषा तज, त्याग तपस्या धार।
तूफानों में भटकी नैया की बन कर पतवार ।।
परवशता से मुक्त किया जो लौह श्रृंखला तोड़।
जग-हित देकर अग्नि-परीक्षा, लेकर यम से होड़ ।।
खींच गया जो लक्ष्मण रेखा उसी नीति पर आज।
जगत-ज्वार में भी तटस्थ बन तरता हिन्द जहाज ।।
ऊंच नीच का भेद मिटा, दे जन-अधिकार समान।
विषम निशा में लाये तुम समता का स्वर्ण विहान ।।
पंचशील की शान्ति-शिखा जब पड़ी बवंडर बीच।
तेरी शान्ति-अहिंसा के बल रिपु हो भागा नीच ।।
झुका विश्व तेरे चरणों पर, भारत की क्या बात।
अब भी जग को राह बताते तेरे शुभ सिद्धान्त ।।
वही ज्योति अब भी जलती नित, ले व्यक्तित्व प्रकाश।
जिससे अन्ध तमस् में भी हम पाते सत्याभास ।।
धन्य बने जिसको पा हम, वह जनता का भगवान्।
शत वन्दन उसको, था जो भारत का प्रथम प्रधान ।।

संकल्पाञ्जलि

—रामभरोसे अभिराम हयारण

पाता पुण्य प्रकाश रहा जिससे जग सारा,
हाय ! अस्त हो गया अचानक ही वह तारा।
भारत माँ का रत्न लाल-सा लाल खो गया,
आज सदा के लिये जवाहरलाल सो गया ।।

सत्ताईस मई चौंसठ दिन बुद्धवार का,
दो बज कर दस मिनट उठा वह काल ज्वार हा !
लूट लिया भव-विभव विश्व निस्तब्ध रह गया,
यह कैसा बटमार समय, हा ! ग़जब ढह गया ॥

क्षुब्ध हिमालय हुआ, सिन्धु रह गया मौन है,
शोक न व्यापा जिसे विश्व में बचा कौन है ?
हुआ नेहरु-निधन सभी का मन-धन खोया,
समाचार कर वहन समीरण हिलकिन रोया ॥

आज प्राण का प्राण हाय ! निष्प्राण हुआ है,
जन मन का भगवान स्वर्ग-मेहमान हुआ है।
महाशोक ने यह विचित्र वैभव ढाला है,
गर्मी में पड़ गया कठिन कैसा पाला है !!

'मोती' का प्रिय आबदार हीरा-सा बेटा,
होकर हा चिर मूक धूल-शैय्या पर लेटा।
अमर शान्ति का दूत आज विश्रान्त हुआ है,
हर स्वरूप उसके स्वरूप-सा शान्त हुआ है ॥

करने चारों तरफ़ लगा नीरव नर्तन-सा,
तीस कोटि का गेह हो गया अब निर्जन-सा।
यह कैसा विधि का विधान कुछ समझ न आया,
हाय ! नियति निर्दयी कि कैसा वज्र गिराया ॥

अभी राष्ट्र-निर्माण-कार्य सब पड़ा अधूरा,
विपदाओं का वंश-वृक्ष कट सका न पूरा।
ऐसे में हा, अस्त्र हाथ का तोड़ दिया है,
डाँडहीन कर पोत ज्वार में मोड़ दिया है ॥

हे कर्तार, कुचक्र-चक्र तेरा यह कैसा,
है तुझको सौगंध न करना अब फिर ऐसा।
यह तो भारत देश, इसे दुःख से क्या भय है,
होगा फिर अवतार नेह-रू का निश्चय है ॥

अब हर दाना उगे जवाहर

—विष्णु शर्मा 'हितैषी'

कैसा यह तूफान आ गया, उमड़ उठे क्यों बादल काले,
बीच भँवर में फँसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

ओ, परित्राता ! शांति-गगन में पारावात उड़ाने वाले,
कौन करेगा रक्षा बोलो, इस गुलशन की ओ ! रखवाले।
पुनरागमन करोगे क्या, यह धरा छोड़ कर जाने वाले ?
या हम सदा अनाथ रहेंगे, बोलो मौन चढ़ाने वाले.।
बीच भँवर में फसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

मथुरा तो वैसी है अब भी, पर मुरली की तान कहाँ ?
उसी वेग से बहती गंगा, पर लहरों में गान कहाँ ?
दिनकर रहा जगत में फिर भी, अँधियारा-सा लगता है,
शायद तेज गया, अब केवल शेष रहे धुँधले उजियाले ।।
बीच भँवर में फँसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

तुमने अपना सारा जीवन भारत माँ को सौंप दिया था,
उस दुश्मन को झुका दिया, जिसने ममता का मोल किया था।
सुख सुविधाएँ त्याग, किया धारण तुमने शूलों का सेहरा,
पराधीन भारत माता को आजादी दिलवाने वाले ।।
बीच भँवर में फँसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

ओढ़ तिरंगी प्रावृति जब तुमने महा प्रयाण किया,
शैल-शिखर भी डोल उठे, पिघला हर पाषाण हिया।
हर चेहरा डूबा आँसू में, गम की रेखा फैल गई,
स्वर्ग चले ओ नेहरू तुम, पर किसके हमको छोड़ हवाले ?
बीच भँवर में फँसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

समा गई माटी के कण-कण में, राख जवाहर लाल की,
मुखरित फिर रेखाएँ होंगी, भारत माँ के भाल की।
अब हर दाना उगे जवाहर, धरती नव श्रृंगार करे,

हर कण मोती-लाल बनेंगे, अपने में विश्वास जगालें ॥
बीच भँवर में फँसी नाव, अब तुम बिन माँझी कौन सम्हाले ?

ज्योति-पुरुष नेहरू

—सुन्दरलाल चतुर्वेदी 'अरुणेश'

एक ज्योति बुझ गई देश में भीषण हाहाकार हुआ।
भूतल पर हर ओर तिमिर का अतिशय अशुभ प्रसार हुआ।
एक ज्योति बुझ गई कि भारत माँ की गोद हुई सूनी।
यत्र-तत्र-सर्वत्र जल गई घोर वेदना की धूनी ॥

एक ज्योति बुझ गई, चन्द्रमा आज चन्द्रिका-हीन हुआ।
हास लुप्त हो गया, सितारों का भी हृदय मलीन हुआ।
वह थी ऐसी ज्योति कि जिसमें बसता जन का जीवन था।
वह थी ऐसी ज्योति कि जिससे आलोकित हर आँगन था।

सूने सब शृंगार हो गये, सूने हैं घर-द्वार सभी।
सूने मंगल-कलश लग रहे, सूने वदनवार सभी।
कड़ा विरोधाभास दीखता, होनी में कितना बल है !
एक ओर यह दीप-पर्व है, एक ओर आँसू-जल है !!

विधना के निर्मम विधान से, भारत कैसा छला गया।
लघु दीपों का प्राण-प्रदाता, अक्षय दीपक चला गया।
पर अक्षय दीपक शाश्वत है, उसकी आभा अक्षय है।
महानाश के तुमुल युद्ध में निश्चय हो उसकी जय है।

श्रद्धावन्दन

—हरिश्चन्द्र दीक्षित

जब तक तुम वीर जिए, मैंने गाया न तुम्हारा यशोगान,
मानव को मैंने इस प्रकार था दिया न अब तक काव्यमान !
गांधी-जीवन के वट तरु पर जब हुआ अचानक वज्रपात,
जल गई विपुल शीतल छाया, निर्नीड़ हुए खग छिन्नगात !
तब मैं था मात्र अबोध बाल, मेरी प्रतिभा का धवल सानु,
नीहार पुंज से ढँका हुआ, चमका न अभी था कांत भानु !
मुझको केवल आभास हुआ वह सत्य अहिंसा मुक्ति मूर्त्त,
हो गया लीन सत् चिन्मय में जिससे यह सारा जगत् स्फूर्त्त।
उस वट के दीर्घ जटा-तरु दो—पंडित, नेहरू नेता सुभाष,
जिनमें सर्वाधिक मूल सत्व, सबसे बढ़कर जिनका विकास।
बन एक क्रांति मारुत-कम्पन, गिरि सागर भूतल हिला चुका,
संशय की उड़ी प्रचंड धूलि जिसमें वह अब तक हंत लुका।
जन मुक्ति मान सुख चिंता से गांधी-वट का दूसरा अंग,
निज प्राण सुखाता रहा सतत हो गया अचानक आज भंग।
ब्रह्मांड कोटि बनते मिटते इस महासृजन में पल पल पर,
उद्भव विनाश, उत्थान पतन जग का क्रम सभी अमर नश्वर।
तब एक मनुज का जन्म मरण रखता इस जग में क्या महत्व ?
चाहे जितना हो वह महान्, वह भी परिवर्त्तनशील तत्व !
पर आज निधन पर नेहरू के सब को इतना हो रहा शोक,
जीवन सरि उद्गम हिमगिरि ज्यों बिखरा मरुवन, भय-क्लांत लोक !

है मुझे नियति की शुभता पर यद्यपि निर्भ्रम विश्वास अटल,
अनिवार्य समझ कर उसकी गति, मैं द्वन्द्वों में रहता निश्चल।
पर देख विकल दयनीय दशा, सुन कर जन जन का करुण रुदन,
निस्संशय तेरा निधन हंत लगता ले गया प्राण प्रियधन !
भारत जननी का तुच्छ पुत्र, मैं बंधुशोक में व्यथित खिन्न,
करता हूँ श्रद्धा-वन्दन, जो दुःख विकल, कोटि स्वर से अभिन्न !

जनता के ज्योतिर्नयन

—हृदयानन्द तिवारी 'कुमारेश'

जनता के ज्योतिर्नयन तुम्हें खो, रोम-रोम रोता है।

नव स्वदेश की लुटी लालिमा, गहन कालिमा छायी,
सूझ न पड़ता पंथ हाय! यह कैसी विपदा आई?
सिसक रहा अम्बर का अन्तर, धसक रही है धरती,
पल-पल पवन पछाड़ें खाता, पावन प्रीति उमड़ती;
चिर निद्रा में देख तुम्हें, अब उर कम्पित होता है।
जनता के ज्योतिर्नयन तुम्हें खो, रोम-रोम रोता है।।

तुमने अणु-अणु में फूँका था, नव विकास स्वर न्यारा,
कोने पड़ा कराह रहा हा! पंचशील वह प्यारा;
पौरुष-धनी, महामानव, तुम युग-स्रष्टा थे ज्ञानी,
भव-दानी को लूट, काल ने की कैसी नादानी?
निशि-दिन नयनों से बहता रहता आँसू का सोता है।
जनता के ज्योतिर्नयन तुम्हें खो, रोम-रोम रोता है।।

सूर्य अस्त! अब त्रस्त देश की कौन सम्भाले थाती?
दरक रही छाती की बाती, बुझी जा रही बाती;
नर-नाहर-नेहरू-निधन पर, संसृति सकल विकल है,
जीवन का आदर्श तुम्हारा जग का ध्रुव सम्बल है;
आकुल मन का पंछी, पीड़ा का दुसह भार ढोता है।
जनता के ज्योतिर्नयन तुम्हें खो, रोम-रोम रोता है।।

कर्मयोगी जवाहर लाल

—जनार्दन प्रसाद पाण्डेय

जब तक जीवन रहा, देश की बाग सम्हारा।
जन-जन को नित रहा, जवाहर लाल सहारा।

क्षण भर को भी विलग न सेवा से होता था।
प्रतिपल जीवन-बीज सुसेवा में बोता था।
कितने लोगों ने वैराग्य मार्ग बतलाया।
कितनों ने मन का विष उन पर भी छलकाया।

किन्तु कर्मयोगी सुकर्म से कभी न हिचका।
मानवता-कल्याण-पंथ से कभी न बिचका।
अधरों पर आनन्द सिन्धु छलका करता था।
मस्तक पर यौवन प्रफुल्ल दमका करता था।

गीता का निष्काम कर्म करके दिखलाया।
मानवता को सीधा पथ चल कर सिखलाया।
अथक कर्म-योगी निशिदिन करता रहता था।
हँस-हँस कर आघात गहन सहता रहता था।
जब तक श्वासें रहीं कर्म में रत जीवन था।
कर्म निरंतर कर्म, धर्ममय-व्रत-जीवन था।

कौन आज नेहरू-सा सच्चा नेह करेगा?
कौन देश हित सदा त्याग निज देह करेगा?
कौन देश के कण-कण में तन-मन बिखरा है?
कौन तपस्या-त्याग-शान्ति में यों निखरा है?

नेहरू : एक फूल

—स्वामीनाथ पाण्डेय

देश की मिट्टी में खिला हुआ मिट्टी का फूल एक
मिट्टी के आँचल में सो गया।
खेतों खलिहानों में, गाँवों में, बिखर गया,
लहरों में खो गया।
नेहरू : एक ऐसा फूल
जिसकी गंध दूर-दूर, विश्व में फैली थी

जिस पर चमन का चमन मुस्कुराता था
आज वह चला गया
अब वह लौट कर कभी नहीं आयेगा
कभी नहीं शान्ति के कबूतरों को उड़ायेगा।
आँसू, अवसाद ये, शोक श्रद्धांजलियाँ ये,
यहीं रह जायेंगी।
फूल मालाएँ किसी काम नहीं आयेंगी।
क्योंकि वह इन सब से दूर चला गया।
बाँधने के प्रयत्न अब सारे बेकार है।

आज उसकी मुस्कान सूरज की किरणों में तैरती है।
आज उसका उल्लास चाँदनी की लहरों में झड़ता है
आज उसके फूल साँझ की रंगीनियों में खिलते है।
आज उसका अवसाद करुणा की बूँदों में ढलता है,
आज उसके गीत खेतों के आँगन में बिखरे हैं।
आज उसकी गंभीरता अतल सागर की गहराइयों में उतरती है।
क्योंकि वह नहीं केवल एक मिट्टी का पुतला था
'नेहरू' एक नाम था आजादी के संघर्षों का!
'नये भारत' के सपनों का!!

आदर्श और भी निखर गया!

—ब्रजनन्दन लाल 'नन्दन'

युग के दधीचि की आज दूसरी वर्षी है,
अरे साथिन! मुझको याद जवाहर की आयी!

हा हन्त! हमारे बीच मसीहा नहीं रहा,
मानव हित में बन राख धरा पर बिखर गया।
पर इससे क्या है, पंचशील की धरती का,
रंग हरा हुआ, आदर्श और भी निखर गया!!

यह अनायास किसलिए आँख भर लायीं तुम,
क्यों छलक उठे पलकों पर आँसू के मोती ?
है व्यर्थ नहीं बलिदान विश्व के प्रहरी का,
युग युग चिरजीवी अमर जवाहर की ज्योति ॥
हो चुकी प्रकाशित देखो सभी आत्मवादिन,
मोती के दीपक से संसृति की तरुणायी !

किसका प्रकाश जो ताशकंद में चमक बुझा,
दे गया एक संकेत शान्ति के अम्बर को ?
दिल्ली में दमकी है फिर उसकी एक किरण,
विश्वासित कर हरएक अँधेरे के घर को ॥
चल पड़े भतीजे समझा चाचा के पथ पर,
भर लिए शांति के मंत्र प्यार की झोली में।
मैं आशावादी हूं सिन्दूर सुरक्षित है,
अब रक्त नहीं झलकेगा कचन रोली में ॥
आशंका से निर्मित-सी भय की रातों में,
साहस है अपने प्रश्नों का उत्तरदायी !

आओ ! मोहन से अधर माँग लाएँ प्यारी,
यमुना तट पर दो गीत प्यार के गायेंगे।
जब देखेंगे सब भेद अकबरी आँखों से,
तो अनायास ही हम अशोक बन जायंगे ॥
निश्चय है फिर धरती पर युद्ध नहीं होंगे,
अणुबम समृद्धि की आग विश्व में उगलेंगे।
जल जायेगा जब असन्तोष आततायी,
तब समझो प्रिय हम सच्ची श्रद्धांजलि देंगे ॥
नापी जा सकती नहीं भावभीने स्वर में,
ओ संगिनि ! अपने कर्त्तव्यों की गहरायी !

जयति जय जयति जवाहरलाल

—लखनलाल गुप्त

समर्पण किया राष्ट्र-हित प्राण,
धरा पर किया स्वर्ग निर्माण।
तजा भव-वैभव भोग विलास,
किया दीनों का संतत त्राण ॥

रत्न भारत का भरा प्रकाश,
जगत का था जिस पर विश्वास।
शांति-प्रिय सत्य अहिंसा व्रती,
गया कर सबको निपट निराश ॥

खो दिया हमने अपना लाल,
क्रूर निर्दय है कितना काल।
शून्य भारत माता का क्रोड़,
शोक का बिछा चतुर्दिक जाल ॥

रहा जिसका व्यक्तित्व विशाल,
समुन्नत था भारत का भाल।
रहेगा जन-गण-मन में बसा,
विश्व में अमर जवाहर लाल ॥

रुचा तुमको न कभी आराम,
देश से केवल निशि-दिन काम।
गये कर दुर्गम मार्ग प्रशस्त,
युग-पुरुष सादर तुम्हें प्रणाम ॥

स्वर्ग में भी तुम स्वर्णिम प्रभा,
प्रकाशित करना बन अभिराम।
जयति जय जयति जवाहरलाल,
वहाँ भी गूँजे यह शुभ नाम ॥

उस रोज फिर हमको जवाहर याद आयेगा

—निर्मल 'मिलिन्द'

सही है आदमी जब छोड़कर जग चला जाता है,
कि सचमुच हर दिवस फिर तब नहीं वह याद आता है,
अमर लेकिन कीर्ति होती, है हमें मालूम इतना,
कृत्य उसका तो हमेशा मुस्कुराता है।
कि हर बाधा-विपद् से जूझ मंजिल तक पहुंचने को,
कि जब जब योजना का युवक अगला डग बढ़ायेगा,
बहुत उस रोज फिर हमको जवाहर याद आयेगा।

हम जब पाक से और चीन से कश्मीर ले लेंगे,
अपने हाथ में अपनी लुटी तकदीर ले लेंगे,
'नेफा' और 'त्रिपुरा' को बचाने के लिए कर में,
कबूतर शांति के, पर साथ ही शमशीर ले लेंगे।
कि फिर से भाखड़ा जैसा नया हम बाँध बांधेंगे,
कि राजस्थान के मरु बीच गुलशन महमहायेगा,
बहुत उस रोज फिर हमको जवाहर याद आयेगा।

अगर लाओस की ज्वालामुखी से आग बरसेगी,
अगर इंसानियत दो रोटियों के लिए तरसेगी,
अगर फिर दमन या विद्रोह होगा, लोग रोयेंगे,
कि फिर से युद्ध की संभावना अंगड़ाइयाँ लेगी।
समस्या साइप्रस की, आदमीयत को डरायेगी,
कि जब अहमक बहक फिर शांति पर खंजर उठायेगा,
बहुत उस रोज फिर हमको जवाहर याद आयेगा।

रुकी है कब भला गति काल की? दुनियां यही तो है,
कि 'मीलों नींद के पहले' उसी की जिंदगी तो है,
हमारा ही जवाहर है कि जिस पर नाज दुनिया को,—
नहीं वह पास में है, स्वर्ग में बैठा—कहीं तो है!
कि उसका न्याय, वह कर्त्तव्य प्राणों को रुलायेगा,

कि उसको कभी कोई कहीं जो गाथा सुनायेगा,
बहुत उस रोज फिर हमको जवाहर याद आयेगा।

नर-नाहर चला गया

—रामदास गुप्त 'दास'

(१)

पाते हैं शांति नहिं, किसी भाँति अपने उर;
बार-बार रो-रो नेत्र, आकुल अकुलाते है।
लाते हैं शब्द भी यदि, साहस से जिह्वा प,
प्रेम से गद्गद् हो, कण्ठ भर आते है।
आते हैं याद जब हमें पूज्य 'नेहरू जी',
विह्वल बन जाते, अग-अग शिथिलाते है।
लाते हैं 'दास कवि' भाव उर क्या-क्या पर !
अधर पुट हमारे यह, खुल नहीं पाते हैं।

(२)

चला गया ! चला गया ! हाय ! आज भारत से,
भाग्य का विधाता नर-नाहर चला गया,
चला गया हृदयों पर कटार-सी जनता के;
याद में अपनी फूट-फूट कर रुला गया।
रुला गया जन-जन को, बहा गया अश्रुधार,
भारत को आज शोक-शैया पर सुला गया।
सुला गया सब को ही, मृतक-सा भुला गया,
भारत का मुकुट मणि 'जवाहर' चला गया।

(३)

जाहिर हैं जग में जोर-जौहर जवाहर के;
भारत में एक बस यह ही नर-नाहर था।

नीति नय नागर सत धर्म का उजागर वर,
व्यापक यश देश माँहि, भीतर और बाहर था।
नाम का 'जवाहर' और काम भी जवाहर थे,
'मोती' का लाल नाम इनका जग जाहिर था।
'दास कवि' दुनियाँ में रत्नों की कमी है क्या ?
परखा हुआ श्रेष्ठ किन्तु जाहिर-जवाहर था।

राजघाट की ओर

—शिवशंकर पाठक 'कलित'

कहाँ गया तू त्याग भँवर में इस भारत की नैया,
कहाँ दूसरा पायेंगे हम तुझ-सा चतुर खिवैया।
जला रही तेरे वियोग की ताप धरा की छाती,
कौन सम्हाल सकेगा अब यह तेरी अनुपम थाती ।।
शुष्क बना जाता है तेरा पंचशील का सागर,
शान्ति लहर टकराएगी अब कौन किनारे जाकर।
समराङ्गण को त्याग, भाग तू गया अचानक हाय,
प्यारी मातृभूमि को संकट में करके निरुपाय ।।
मानव नहीं देवता था तू या देवों का राजा,
तब समझा जब त्याग धरा को तेरा उठा जनाजा।
व्याकुल बिलख उठी मानवता, छाती नभ की फोर,
अर्थी चली सुमन से सज जब राजघाट की ओर ।।
चीखी वसुधा, अखिल मेदिनी का था जो रजनीश,
रे निर्दयी ! उठाकर उसको भी बनता जगदीश !
एकमात्र जो मातृभूमि का था अमूल्य शृंगार,
है धिक्कार उसे क्षण भर में तूने लिया उतार ।।

शोकाञ्जली

—उमेश चतुर्वेदी

सिन्धु-सी शून्यता बढ़ गई विश्व में,
हो सदा के लिये अस्त तारा गया।
हिल उठी भूमि, आकाश कंपित हुआ,
देश से देश का उठ सहारा गया॥

रो रहे गिरि शिखर, रो रहे चन्द्र रवि,
जर्जरित हो पवन भी विकल हो रहा।
शोकरञ्जित दिशायें हुईं, भूमिकण—
रो उठे, औ' व्यथित हो जगत रो रहा॥

रो रही है अमा, रो रहा है दिवस,
रो रही है उषा, रो रहा है अरुण।
राष्ट्रध्वज रो रहा, रो रही भारती,
औ' जलद अश्रुजल से धरा धो रहा॥
रो रहे नारि नर बाल आबाल सब,
देश के नौनिहालों का प्यारा गया॥

देश सोया हुआ था, जगाया उसे,
देश जागा तो तुम ही स्वयं सो गये।
शान्ति-सन्देश तुमने प्रसारित किया,
औ' सदा के लिये शान्त तुम हो गए॥

बीज बोया विमल प्रेम का विश्व में,
भेद की भावना को मिटाते रहे।
ज़िदगी भर किया प्रेम जिस देश से,
अब उसी से उदासीन तुम हो गये॥
गोद सूनी हुई, कह रही माँ—कहाँ,
आज मेरा जवाहर दुलारा गया॥

एक मृत गुलाब और हम

—चन्द्रमोहन दिनेश

यह निस्तब्ध रात
और यह भयानक सूनापन,
कुछ दबी-घुटी सिसकियों के बीच—
हम उदास खड़े हैं।

एक बदनसीब दोपहर…
पतझर आया और—
एक गुलाब की जिंदगी पी गया।
लेकिन मुरझा गया सारा बाग…
जाने कैसा गुलाब था।

एक देवता था,
जो भूल से हमारे बीच आ गया था।
किन्तु हमने टीका-टिप्पणी कर—
उसका कलेजा छलनी कर दिया।
क्योंकि हम लघु थे और—
वह आखिरकार महान् था।

लेकिन उसके जाते ही जाने कौन-सी—
वेदनायें एकाएक घुमड़ी कि,
अट्ठासी करोड़ आँखे फूट कर रो पड़ीं।

और अब—
जब कि देवता चला गया है,
उसके अस्थि-अवशेष माथे से लगाते हे और
मुरझाया गुलाब देख
आँसू बहाते है।

नेहरू के पथ पर बढ़ते चलें

—चन्द्रेश 'शोला'

हम सब—
हिलमिल कर
बढ़ते चलें।
नेहरू के
पथ पर;
पंचशील के
रथ पर;
देश का नवनिर्माण
करते चलें!!
साथ हैं
हमारे—
सम्पूर्ण लोकशक्तियाँ;
सदा हम रखें;
देश के प्रति—
निष्ठा और भक्ति
और ···
श्रम के आगे
कठिनाइयाँ स्वयं ही झुकती है,
और······
सफलताएँ
कदम चूमती हैं;
नेहरू के सपनों को,
हम साकार करते चलें!
और ·····
श्रम के नए नए
तीर्थ गढ़ते चलें;
आगे बढ़ते चले!!

श्रद्धा-सुमन

—प्रेमपाल सिंह तोमर

श्री सुषमा सम्पन्न सुशोभित अक्षय गौरव-माला।
जय मोती-सुत रत्न जवाहर नर-केहरी-निराला॥
वाग्वीर, रणवीर, बाँकुरे, भारत के उजियारे।
हतप्रभ छोड़ हमें तुम सहसा सत्वर स्वर्ग सिधारे॥
रजत-स्वर्ण-मंडित भारत में जीवन-ज्योति जगाते।
लालायित सुरग· -समाज वह स्वर्ग धरा पर लाते॥
लक्ष्य-सिद्धि में ६.फल सदा, क्यों लूटा हाय विधाता।
नेहयुक्त नव नीति निपुण से टूट गया अब नाता॥

हम उस त्यागी देशभक्त को श्रद्धा-सुमन चढ़ाते।
रूरे रूरे रुक्ष निराशा में दृग नीर वहाते।
सदा शांति की सुखद सम्पदा जगती पर फैलायी।
दान-धर्म की परम अलौकिक अक्षत ज्योति जगायी।।
अखिल विश्व में वंधु-भाव के अभिनव मंत्र-प्रदाता।
मन-मानस में राष्ट्र-प्रेम ले वने राष्ट्र-निर्माता।।
रम्य विपुल भारत वसुन्धरा के प्रिय राजदुलारे।
रहे सदा चालीस करोड़ों की आँखों के तारे।।
हेंहें कर दयनीय भाव से वैरि नवाते माथा।
गेय रहेगी अवनीतल पर तव यश-गौरव-गाथा।।

चन्दन-तरु

—सजलकुमार स्पर्श

तुम कंचन जैसा उर लेकर, माटी के आँचल में छाये!

चंदन-तरु वनकर भूमे थे शरणागत के उन्नायक-से।
मधुसिक्त धरा पर उतरे तुम सपनों में भटके नायक-से।।
फिर विहँसे तो मंदिर विहँसा—निर्जन में, देव सजाये!
तुम कंचन जैसा उर लेकर, माटी के आँचल में छाये!!

तव नयन-शून्य में दिखता था सृष्टि-कर्त्ता का रूप सजग।
तुम सगुण भक्ति के प्रतिपादक, पर निगु ण का समझाते मग।।
तुम कहते जो वह कर देते, धर्म-ऐक्य, बनाये!
तुम कंचन जैसा उर लेकर, माटी के आँचल में छाये!!

जीवन तो एक प्रतीक्षा था श्वासों की शीतल छाँव तले।
अनथके पथिक बन कर आये, जब थके, अजाने गाँव चले।
श्रद्धा के स्वामी वनकर भी 'अहं' को रहे भुलाये!
तुम कंचन जैसा उर लेकर, माटी के आँचल में छाये!!

एक गुलाब

—विपिन विहारी ठाकुर

मेरी आँखों के सामने रह-रह कर नाच उठता है
एक गुलाब
जिसकी पंखुड़ियों में
शाश्वत मानवता की कमनीयता समाहित थी,
जिसकी लालिमा
हमारे जीवन-क्षितिज पर व्याप्त आस्था-किरणों को
रंजित करती रही,
और, जिसकी सुगन्ध
हमारे घर-आंगन के दायरे को भी लांघ
दिग्-दिगन्त तक फैल-पसर गई थी
उदासी के प्राचीरों में कैद हूं मैं
क्योंकि
हवा का एक बेरहम झोंका
उड़ा ले गया था
पिछले ही साल
उस गुलाब को
यह उपवन हो उठा था
बेहद सूना—बेहद नंगा,
मेरी आँखों में सावन-भादों की दर्दीली बरसात उतर आई थी
और
देख लेता हूं
जब कभी मेटल-फ्रेम में कैद
उस गुलाब की रंगीन छाया को
(तो) उसे खो देने की पीड़ा
हो उठती है और भी सघन।

गुलाब-गंध

—बलदेव वंशी

आज बैठा हूं अकेला
बाग़ के एकान्त में
सब फूल झुलसा दिए हैं
गर्म, फुफकारती पछवा हवा ने ।

वृक्षों से झड़े पत्ते प्रेत बन कर भटक रहे हैं
हर वीथी, हर क्यारी !

पीली बीमार धूप फैली है हर कहीं
अभावों की विस्तृत खाइयाँ
फूटी ही जा रही हैं......।

मेरे नेत्र इतिहास के पृष्ठों पर देखते हैं :
एक काला हाशिया
जिसमें गुलाब का एक फूल—
अनन्य फूल—सुगंध देता ।

मेरे मन में शोक-धुन बज उठती है
रोम-रोम चिता की अदृश्य अग्नि की,
जलन को महसूस करता है ।

किन्तु फिर गुलाब-गंध की एक किरण
मेरे मन के अँधेरे को छू जाती है ।
और दूर से आती कोयल की कुहक
मेरे कानों में,
शरीर के हर रन्ध्र में भर जाती है ।
मुझे नए वसंत के आगमन का अहसास होता है ।

एक फूल

—विश्वलोचन मिश्र 'विश्वबन्धु'

एक फूल—
था जिससे वातावरण सुगंधित,
जिसने सब को गंध दान दी,
और सदा उपवन के हित में,
जुटा रहा अनवरत आयु भर !
तूफानों को मोड़-मोड़ हर दम मुस्काया !

वह आकर्षक फूल,
सभी जन-जन का प्यारा
वही आज मध्याह्न दो बजे—
उपवन में सहसा मुरझाया,
जिसे देख कर उपवन की हर डाल झुक गयी !
और एक पल—
सरस समीरण बहते-बहते सहम रुक गयी !
दूर-दूर तक सभी उपवनों—
के फूलों का मन अकुलाया,
श्रद्धा से निज नयन मूँदकर,
सबने अपना शीश झुकाया।
वह मुरझाया लेकिन उसकी मधुर गंध से
महक उठा धरती का कण कण !

महक उठे इतिहास-पृष्ठ भी,
स्वर्ण अक्षरों में अंकित—
अब उसका नाम अमर है।
आज हर तरफ उसकी जय का
गीत मुखर है।।

उपवन का पावन युग बीता

—प्रेमलता श्रीवास्तव

उपवन का पावन युग बीता, जिस दिन लाल गुलाब झरा !
मौन व्योम के सागर से उस दिन ही अश्रुज्वार उभरा !!
जनसागर की आशा-लहरें रुकी हुई-सीं,
जन-जन की मृदु श्वास अचानक थकी हुई-सी।
किया नहीं विश्वास कि जिसने सुनी बात यह,
विश्वासों का दीप बुझा आँधी से रह- रह ॥
फूट फूट रोयी भारत माँ, 'लाल' चला जब हरा भरा !
मौन व्योम के सागर से उस दिन ही अश्रुज्वार उभरा !!
टूटे तारों-सी रोयी रजनी पल-प्रतिपल'
पुष्प-पाँख में अश्रुबिन्दु की होती हलचल।
रोते नयन सभी के, खोया हुआ हृदय हर,
सारे चिंतन मूक, तर्क सोया था दृग भर ॥
समय चक्र थम गया कि जब पखुड़ियों का वर-चय बिखरा !
मौन व्योम के सागर से उस दिन ही अश्रुज्वार उभरा !!
प्रखर भावना उस अतीत की याद आ रही,
विश्व-वीण पर युग-मानव के गीत गा रही।
दर्शन करने चरण विवश बढ़ते जाते थे,
सभी उदासी के वस्त्रों में दीख रहे थे ॥
और धरा ने उस दिन मन में कोई धीरज नहीं धरा !
मौन व्योम के सागर से उस दिन ही अश्रुज्वार उभरा !!
और युद्ध की आवाजें थीं बढ़ी जा रहीं,
शांति खड़ी हो कोने में थी थरथरा रही।
उस दिन खोयी बापू को वह मूर्त्त धरोहर,
पंचशील का वर कपोत सो गया कि डर कर ॥
किन्तु, ज्वार गंगा का पावन होने को आतुर, घहरा !
मौन व्योम के सागर से उस दिन ही अश्रुज्वार उभरा !!

गुलाब का फूल झर गया

—रामकिशन सोमानी

हिमालय के बर्फीले भाल पर
कोई खरोंच उभर आई;
फिर एक आघात हुआ—
मौत ने उसे छू लिया।

गंगा-जमुना के जल में जाने कितने आँसू घुल गये,
उनका सारा जल खारा हो गया।

हरे-भरे खेतों की छातियाँ दरक गईं।
निर्माणों की आधार-शिला नीचे से सरक गई।

मिलों की मशीनें—
चिमनियाँ दर्द से चीख उठीं।
बाँधों के चढ़ते जल में लपटें-सी दीख उठीं।

कोई भूकम्प नहीं आया—
केवल—
सफेद-सी अचकन पर
टँगा हुआ गुलाब
मुरझाकर खिर गया।
सारा आकाश
काले बादलों से घिर गया।

वीर जवाहर

—शान्तिस्वरूप शर्मा 'अलिमस्त'

पावन प्रेम प्रतीक रूप वह, दृढ़ता का साकार स्वयम्।
धरती पर आई धर मानो मानवता अवतार स्वयम्॥
विधि ने विधिवत् विशद भाल पर मातृभूमि का प्यार लिखा।
सरस्वती ने स्वतन्त्रता का जन्मसिद्ध अधिकार लिखा॥

जिसके आगे हर बाधा ही स्वयंसिद्धि बन जाती थी।
कदम उठाने से पहले खुद मंजिल शीश झुकाती थी॥
भीषण आँधी तूफानों में भी जिसका पग रुका नहीं।
किसी शक्ति के भी आगे था जिसका मस्तक झुका नहीं॥

जिसके भ्रूविलास से ही भूधर विशाल हिल जाते थे।
अधरों पर मुस्कान निरख कर फूल फूल खिल जाते थे॥
दलन दुशासन आजादी का जब दीवाना जाता था।
उसके संकेतों पर सारा घूम जमाना जाता था॥

उठा सत्य-गाण्डीव अहिंसा - बाणों का संधान किया।
महाप्रलय के अग्रदूत ने, झुककर जिसे प्रणाम किया॥
दृष्टि घुमाते ही जग मे भर जाता दिव्य प्रकाश नया।
जिसके प्रति पग पर बनता था युग-युग का इतिहास नया॥

अमर रहेगा वह अधरों पर, शैशव को मुस्कानों में।
अमर रहेगा वह शाश्वत यौवन के मधुर तरानों में॥
अमर रहेगा शान्ति बीण के सदा झंकुरित तारों में।
मिटने वाले मानवता पर, वीरों की हुंकारों में॥

अतल महासागर के जल को, कोई माप सकेगा क्या ?
है कितना विस्तार गगन का, कोई आँक सकेगा क्या ?
क्या चित्रण कर नील गगन पर, ऊषा रँग भर पायेगी ?
उसकी गाथा क्या प्रभात तू, या संध्या लिख पायेगी ?

जिसका हर संघर्ष, हर्ष का, धरती पर वरदान बना।
जिसके जीवन का प्रतिक्षण जन-जीवन का कल्याण बना॥
जिसकी आशा विश्वासों का भारत ही जय-दोल रहा।
साँस साँस में, हर धड़कन में, वीर जवाहर बोल रहा॥

पहन गुलाबी हार चिता पर, नेहरू तुम मुस्काये

—मदन 'विरक्त'

ओ ! सत्य अहिंसा के साधक, विश्व शान्ति के दाता।
मानवता के सफल पुजारी, भारत-भाग्य-विधाता ।।
आज देश अभिवादन करता, अपने नर नाहर को।
अभिवादन देती सरितायें, श्री के उच्च शिखर को ।।

दिग्-दिगन्त सब सिसक रहे है, हाल हुआ बेहाल।
जग को रीता छोड़ चले तुम, कहाँ जवाहर लाल ।।
धरती काँपी अम्बर रोया, ज्योति नयन की खोयी।
जमना के तट देह तुम्हारी चिर-निद्रा में सोयी ।।

मोती के सुत लाल जवाहर, महा काल ने खाये।
टूट गया नक्षत्र गगन का, जुल्म मौत ने ढाये ।।
शांति घाट पर चिता जल उठी, जली गुलाबी काया।
पृथ्वी ने जो खोया उसको, आज स्वर्ग ने पाया ! !

यह विपदा औचक आई है, जागो भारतवासी।
शीश नवाओ सभी चिता को, यह है काबा-काशी ।।
श्रद्धा-सुमन चढ़ाने तुमको जन जगती के आये।
पहन गुलाबी हार चिता पर, नेहरू तुम मुस्काये ।।

भारत-दीप

—अदास गोस्वामी

शान्ति का दीप अपनी शुभ्र ज्योति-शिखा दान कर चला गया—
हम हो गये हैं हतप्रभ !
कबूतर के श्वेतपंखों पर शान्तिदूत का अभिनव रूप धर कर
भारत-दीप चला गया
हम हो गये हैं निष्प्रभ !

विश्व के कठों से निःसृत होता है उसका नाम, शान्ति का ध्यान —
आज हम तुम्हारे वपु-विच्छेद से हुए हैं व्याकुल
शोकाहत हृदय में तुम्हारे अभाव की निष्ठुर करुण
रागिनी बजती है पल-पल।
तुम्हारी अकाल विदा-वेला में पृथ्वी सजा कर
निवेदित कर रही है प्रणाम
तुम्हारे अहिंसक चरण का अनुसरण करेंगे हम
दे कर निज प्राण, अभिमान, स्वाभिमान।
भारत का प्रतिरूप
भारत का गौरव !!
विश्व-यात्रा की पंचशीलित गतिविधि बतलाकर चला ग.ा
तटस्थता-मंत्र की उभय सम्मानार्जनी फलप्रदा साधना
सिखा कर चला गया—
हम हो गये हैं निष्प्रभ !
हम हो गये हैं हतप्रभ !!

शान्ति के चिरजीवी दीप में अवध्य प्रभा संपुंजित कर
विश्वान्धकार की छलना को
प्रशमित कर भारतावतारी वह निरासक्त देशप्रेमी चला गया—
हम हो गये है निष्प्रभ !
जन-जन के हृदय में, देवोपम देश की आत्मा में
और विश्व की सहावस्थानी अन्तरात्मा में आज वर्षोपरान्त
तुम्हारी उपकार-ऊष्णित स्मृति
प्रत्येक अनिश्चय, आशंका, गतिरोध के क्षण में
जन्मान्तरितहो रही है :
भारत-दीप की ज्योति प्रलय-पूर्व ही शायद
स्वर्ग तज कर आने वाली है—
हे भारत-दीप
लो वार्षिक श्राद्ध का प्रणाम निष्पाप !!

कर्म की गीता

—सुरेश उपाध्याय

वतन का अन्धकार भागा है, आदमी किस क़दर अभागा है!
आप जागे तो देश सोता था, आप सोए तो देश जागा है!!

दर्द यह खत्म क्यों नहीं होता, स्वप्न हर सत्य क्यों नहीं होता!
नेहरू के समान लोगों का, हाय! फिर जन्म क्यों नहीं होता!

दर्द बढ़ता है, कम नहीं होता, ज़हर चढ़ता है, कम नहीं होता।
आपकी याद कभी आए तो—कौन-सा नैन नम नहीं होता॥

आँख में अश्रु सब पिरोते हैं, हाय! सौ सौ गुलाब रोते हैं।
पीढ़ियाँ मान सकेंगी क्या अब, 'आदमी' इस तरह के होते हैं॥

जिसका व्यक्तित्व यों खुला-सा था, दूध डूबा मधुर बताशा था।
जहाँ जाता था भीड़ लगती थी, आदमी था मगर तमाशा था॥

एक संग्राम खत्म होता है, नहीं पर नाम खत्म होता है।
'कर्म' की भेद भरी गीता का, एक अध्याय खत्म होता है॥

एक शब्द : एक अर्थ

—प्यारे सिन्हा 'परेश'

एक शब्द—हिन्दुस्तान,
एक अर्थ—जवाहर लाल,
कल तक मात्र यही था बेमिसाल;
विश्व के नक्शे पर एक निशान,
शान्ति का, सद्भाव का, मूर्तिमान;
शब्द शाश्वत है,
अर्थ के पर्याय जुड़ रहे हैं उस मौलिक अर्थ से
जिसकी संज्ञा था ज़वाहर लाल,

अजेय नाम, कीर्ति-जाल;
ओ विस्मृति की याद के आदमी ! —
आदमी भगवान होता है,
तुम क्या थे, तुम जानो।
तुम काल-कवलित हुए
या कि काल कवलित हुआ तुमसे
एक शब्द—एक शाश्वत प्रश्न।
जीवन जी गये तुम !

बुझ गया चिराग एक !

—राजेन्द्र मोहन शर्मा 'भृङ्ग'

झर गया गुलाब एक, गंध पर उड़ी नहीं !
बुझ गया चिराग एक, रोशनी बुझी नहीं !!

देवता कहूं तुझे, या तुझे कहूं मनुज।
कुछ नहीं समझ सका, या तुझे कहूं अनुप॥
ज्योति तो जली मगर, वह अभी बुझी नहीं !

भारती-सपूत था, और क्रान्ति-दूत था।
त्याग का स्वरूप था, और शान्तिदूत था॥
पंचशील की मशाल जो जली, बुझी नहीं !

देश के लिये मरो, देश के लिए करो।
क्या मिलेगा फल तुम्हें, न फिक्र तुम जरा करो॥
नेहरू तो मर गए, किन्तु रूह मरी नहीं !

वह गुलाब लाल था, देश की मशाल था।
भर रहा जो जिस्म में रक्त का उबाल था॥
पँखुड़ी तो गिर गई, गंध पर मिटी नहीं !
बुझ गया चिराग एक ! रोशनी बुझी नहीं !!

२७ मई : दो भाव

—श्याम सुधाकर

कर्म की,
सुगंधि से तर
गुलाब,
सूख गया।
सत्ताइस मई,
सन् चौसठ का सूरज
सर्द हो,
डूब गया।
लगता था जैसे
बवंडर उठा है।
अकस्मात् सदमे के कुहासे ने
सबको छला है
सच ! बिलकुल सच !!
किसी के व्यक्तित्व की
यह भी कला है।

उस दिन,
धरती ने पूछा था—
मेरी छाती पर,
यह प्रहार कैसा है ?
शांति घाट की भीड़ का
यह भार कैसा है ?
उस दिन,
गगन ने पूछा था—
ये चिता है किसकी ?
कि आँच में जिसकी
है अजब तीखापन !
जिसकी असह्य गरमी से
सभी धरती के चेहरों पर
है अजब पीलापन !
तपता हुआ वैसाख
पर आँखों में गीलापन !

किस लिए निर्माण ठंडा हो गया है

—ईश्वर 'अलबेला'

कौन कहता है जवाहर खो गया है ?
कौन कहता है जवाहर सो गया है ?
वह जवाहर देखिए निर्माण में है,
वह जवाहर देखिए हर प्राण में है !
सुख ही सुख में ढूँढ़ते हो क्यों उसे तुम,
वह जवाहर देखिए हर त्राण में है !

कुछ गरीबों का भी तुम दुःख दर्द बाँटो—
फिर समझ लोगे जवाहरलाल क्या है !

देखिए उस मंच पर बोला जवाहर,
हर हृदय का प्राण वह भोला जवाहर!
देश क्या हर प्रान्त की प्रतिमा बना है,
विश्व शांति का अमर हामी जवाहर !
अगर थोड़ा-सा भी उसका दर्द समझो—
कर्म साधो छोड़ कर वह जो गया है !

मुस्कराता देखिए तो वह जवाहर,
खेत औ' खलिहान के उस छोर पर !
राह के इस मोड़ पर, उस मोड़ पर, हर मोड़ पर,
हर लहर में नजर आता है जवाहर ही जवाहर
राष्ट्र के हर गाँव में उस रत्न का,
गहना अमोलक और सुन्दर हो गया है !

मैं तो कहता हूँ जवाहर बँट गया है,
इस धरा के शूल में, हर फूल में !
श्रमिक के श्रम में, कृषक के धान में,
हवा, पानी में, धरा की धूल में !
जब जवाहर है चहुँ दिश फिर भला—
यह किस लिए निर्माण ठंडा हो गया है !

आज दीप की ज्योति बुझ गई

—गोविन्द दीक्षित 'अचल'

कुसमय गगन बदरिया छाई, पावस का अधिकार हो गया।
आज दीप की ज्योति बुझ गई, मधुवन का शृंगार खो गया।
तपसी वीर जवाहर विहँसा, माटी में निज स्वत्व मिला।
जग को सत की राह दिखाकर, दिनकर का उपमान खो गया।

जिसने कोमल शैय्या त्यागी, हर कुटिया को शीश नवाया।
पल कर सुख की गोद न जिसने, सुख को अपने गले लगाया॥
वैभव का प्रासाद छोड़ कर, बना रहा जो अचल विरागी।
ऐसा था वह प्रेम कि जिसने सब पर अपना नेह लुटाया॥

आज अचानक श्रम से थक कर, युग नायक यह ज्यों सोया है।
फूट-फूट कर धरती ही क्या, नीरव अम्बर तक रोया है॥
माँ ने अपना सबसे प्यारा लाल आज खो दिया अचानक।
वसुधा सिसको सागर उफना, हिमगिरि ने रक्षक खोया है॥

दिवंगत जवाहर के प्रति

—सुरेश प्रसाद

विश्व की संस्कृति के तुम गान, जवाहर ! तुम भारत के प्राण।
भारत की पूजा के दीप, शिखा जाज्वल्यमान, अम्लान॥
भारती के ओ वीर सपूत, अहिंसा, सत्य, शान्ति के दूत।
जला कर पचशील का दीप, ले गए जग को ऐक्य समीप॥
अमर तुम और तुम्हारा मान, कल्पना जिसकी कोमल प्राण।
भावना करती स्वर संधान, सदा करती भू का कल्याण॥
मन्त्र भी वह आराम हराम, सदा भारत को देगा शक्ति।
कि यह धरती हो जाए स्वर्ग, करेंगे हम सब ऐसी युक्ति॥
रहेंगे जब तक तन में प्राण, चलेंगे सत्पथ पर अविराम।
सत्य के चिर पावन आदर्श, बनेंगे राम, शक्ति उद्दाम॥
हमें तुम दो ऐसा वरदान, कि जब तक चमकें सूरज चाँद।
भरतमुनि की हम जो सन्तान, तुम्हारा करें सदा सम्मान॥
तुम्हारे जन्म दिवस पर आज, जिसे तुम आज न सकते देख।
सृष्टि के कण-कण में अम्लान, खिंची है आज तुम्हारी रेख॥

उद्गार

—चन्द्रभूषण झा

उठ गया है लाल भारत का, जवाहर उठ गया।
क्रूर कितना काल, भारत का जवाहर उठ गया ॥

रो रही धरती वतन की, रो रहा है आसमाँ,
रो रहा ऊँचा हिमालय, लुट चुका है कारवाँ।
रो रहे हिन्दू-मुसलमां, सिक्ख के दिल एक साथ,
रो रहे गुरुद्वार, मंदिर और मस्जिद एक साथ ॥

निस्तेज लगता भाल भारत का, जवाहर उठ गया।
क्रूर कितना काल, भारत का जवाहर उठ गया ॥

पोंछ लो आँसू, उठो हिन्दोस्ताँ के वासियो,
नेहरू के प्रेमियो, उत्कर्ष के अभिलाषियो !
स्वप्न उसका जो अधूरा, पूर्ण करना है हमें,
देश के उत्थान-हित संघर्ष करना है हमें ॥

रो कर न देना टाल, भारत का जवाहर उठ गया।
क्रूर कितना काल, भारत का जवाहर उठ गया ॥

जान दे देंगे मगर, विश्वास रखना नेहरू,
दुश्मनों के हाथ हम, लुटने न देंगे आबरू।
स्वाभिमानी तुम चले, पर याद रखेंगे तुम्हें,
देश के ही साथ हम, आबाद रखेंगे तुम्हे ॥
लाल है यह खून, पानी बन नहीं सकता कभी।
दुश्मनों का जाल अब फिर तन नहीं सकता कभी ॥

लो विदा अब शान्ति से, वरदान दो तुम नेहरू !
देश की हर माँ जने, बस नेहरू ही नेहरू !!

२७ मई की शाम : कुछ इम्प्रेशन्स

—अनिल श्रीवास्तव

वह शाम
शहर की जिन्दगी में पहली शाम थी
जो एक योगी की तरह राग-हीन थी,
एक वेसहारे की तरह उदास थी।
सिर्फ आँसुओं और सन्नाटे के पास थी
चारों ओर-एक ताजा गुलाव गुम गया था
उस शाम
एक समाचार इमारतों के गमलों में
नागफनी वो गया था !
ऐसा कुछ
जो नहीं होना चाहिए
हो गया था !

हे भारत के प्रारब्ध पुरुष !

—नन्दकुमार 'आदित्य'

हे भारत के प्रारब्ध पुरुष ! हे युग स्रष्टा ! हे जननेता !
हे महामनुज ! हे दिव्य पुरुष ! युगद्रष्टा ! नवयुगनिर्माता !
हे भारत उपवन के प्रसून ! हे जनजीवन की अभिलाषा !
भू-लोक छोड़ क्यों चले गये, पथभ्रान्त पथिक के पथदाता !

हे प्रजातंत्र के अग्रदूत ! हे विश्वशान्ति के आराधक !
हे पंचशील के स्वर उदात्त ! हे जनवाणी ! हे जननायक !
हे राष्ट्रपिता के अनुयायी ! हे सत्य अहिंसा के प्रतीक !
थे त्यागमूर्ति ! करुणानिधान, तुम स्वयं साध्य, साधन, साधक !

हे विश्वशान्ति के सुप्रभात ! हे भारत के सुरभित वसन्त !
अपनी वाणी से गुंजित कर प्राची पश्चिम क्या दिक् दिगन्त ?

हे 'नेह रूपधारी नेहरू' ! क्यों हुए जगत् से न्यारे तुम ?
तुमको खोकर रोती धरणी, सागर रोता, रोता अनन्त ॥

मोती के लाल जवाहर ! तुम बहुमूल्य रत्न भारत के थे,
पाकर तुमको तम दूर हुआ, तुम दिव्य दीप भारत के थे।
हे राष्ट्र देवता ! विश्व युद्ध की विभीषिका के अवरोधक !
तुम विश्वबन्धु थे दीनबन्धु ! तुम पुत्ररत्न भारत के थे ॥

भारत-नभ है तिमिराच्छादित, रवि आज क्षितिज पर अस्त हुआ,
दुर्भाग्य आज आया समक्ष, भारत है सकटग्रस्त हुआ।
क्यों वीर जवाहर चला गया ? क्या क्रूर काल से छला गया ?
है शोकमग्न भारत समस्त, शोकाकुल जगत् समस्त हुआ ॥

वह वीर मनस्वी दिव्य पुरुष मरकर भी अब हो गया अमर,
पार्थिव तन तो अब नहीं रहा, पर यश-काया हो गयी अमर।
वह दिव्य दीप बुझ गया किन्तु आलोक विश्व में छोड़ गया—
जो सदा रहेगा पथ-दर्शक, स्मृति जिसकी हो गयी अमर ॥

अब भूल द्वेष मद मत्सर हम जन-मन को एकाकार करें,
आस्था, उत्साह सहित उनके लक्ष्यों का आज प्रचार करें।
स्वर्गीय राष्ट्र नेता के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यह होगी—
तन-मन-धन से उनके अपूर्ण सपनों को हम साकार करें ॥

युग-पुरुष जवाहरलाल नेहरू !

—कुन्ती देवी

वैभव की मदहोश हवाओं से मुक्त
तुम्हारी संज्ञा-सार्थकता अक्षुण्ण है,
देश की पीड़ा ने तुम्हें द्रवित किया है,
तुम्हारी तलस्पर्शी दृष्टि, तुम्हारा बौद्धिक उपगम,
तुम्हारी अनुपम भावुकता,
गुलाब के रूप में,
लाख-लाख लोगों की कच्ची जिजीविषाओं को

आगे बढ़ाया है,
सपनों ने साकार रूप धारण किया है,
उभरते हुए अंकुरों ने
तुममें नयी धूप और नया आकाश देखा है,
विवश मानवता, शांति का शीतल अनुलेप पाकर,
धन्य-धन्य हुई है।

गुलाब के प्रति

—रामसिंह यादव

विश्व-नर्सरी की,
भारतीय क्यारी के इलाहाबादी गमले में;
खिला था एक गुलाब।
जिसने नर्सरी में,
सत्य, अहिंसा, विश्वशांति की सुरभि फैलायी,
वहाँ के अन्य पुष्पों में, मित्रता, भाईचारे,
सहअस्तित्व की भावना का विकास किया,
अपनी महक से समस्त वातावरण को सुवासित किया
भारत की मिट्टी को जग में विख्यात किया!
वह गुलाब—
सत्ताईस मई चौंसठ को पौधे से झर गया,
मिट्टी में समाहित हो,
यत्र-तत्र सर्वत्र बिखर गया।

एक श्वेत कपोत

—रघुनन्दन प्रसाद तिवारी

यात्रा के बाद,
एक स्यापा,
और फिर अमन,

किन्तु
अब उसका क्या होगा—
जो आहिस्ता से,

शहर के सायरन—
अब नहीं बोलते !
न ही दुश्मन के जहाज,
झपट्टा मारते हैं,
न ही हमारे हवाबाज—
उन्हें घेरते हैं !!

तेरे नाम के साथ—
ओठों के भीतर
शान्ति बन रह गया !
वह श्वेत कपोत
नील नभ में—
कहीं खो गया !!

जवाहर-ज्योति

—चौहान 'चातक'

अंधकार में दिव्य ज्योति-सी वह मृदु मृदु मुस्काई,
दुनिया की आँखों में जिससे चमक नई-सी आई।
देश-प्रेम के दीवाने बलिदानी रंग-बिरंगे;
निकल पड़े अपने घर घर से नारी-पुरुष पतंगे।
स्वर्ण मुकुट रख शैलराज-शिर, कर कैलाश सुनहला;
जगतीतल पर नव प्रभात का कदम पड़ा फिर पहला।
पंचशील की प्रभा छिटक कर क्षिति-मंडल पर छाई;
कुटिल चीन को कण्ठ लगाया, अपनाया कह 'भाई'।
अमरीका, जापान, रूस, इंगलैंड दीप्ति से दमके;
विश्व-प्रेम के अंकुर उर में जन-प्रतिजन के चमके।
वह रवि-द्युति-सी सृष्टि-सरोजिनि की संतत कल्यानी;
सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की शुचि मूर्त्तिमान ब्रह्मानी।
उसकी कलित किरन के पड़ते पतझर बने बसंती;
अधखिल कलियाँ पुलक उठीं तज अवगुणन लजवंती।
बादल में बिजली बन चमकी, तड़पी धरा हिलाई;
सागर के अन्तर में पैठी बड़वानल धधकाई।
दाँतों तले अँगुलियाँ दाबे देख रहा जग सारा;
उद्जन औ' अणुबम ने छिपकर उससे किया किनारा।
आर्त्तपरायण ऐसी जिसने दानवता ललकारी;
सम्मोहन में शक्ति कि श्रीहत भूपति बने भिखारी।

यह वह विद्युत है जिससे जग-शक्ति संतुलित रहती;
सदा नियंत्रित नियति-चक्र-सी सृष्टि-चेतना बहती।
नश्वर यह संसार सार बस केवल ज्योति अमर है;
जिसके लघु स्पर्शमात्र से मिट्टी बनी मुखर है।
मूर्त्तिमती ममता मोती की लाल जवाहर ज्योती;
जिसके सम्मुख मलिन बनी हैं द्युति अनेक खद्योती।
यह जागृति की ज्योति कि जिसकी विभा बढ़ी अंबर में,
नई चेतना, नई कल्पना उमड़ उठी हर स्वर में।

नेहरू लौट आ, जवाहर लौट आ !

—समर चौहान

आ, लौट आ ! मेरे लाल जवाहर लौट आ !
भारत माँ आज पुकारे नेहरू लौट आ !
ओ युग ! बतला इतिहास लपेटे कहाँ चला
भारत का सब संसार समेटे कहाँ चला
तेरे अभाव में गंगा यमुना रोती हैं
संगम के सबरे फूल समेटे कहाँ चला
ओ ! मानवता के प्राण सजीले लौट आ !
तेरा कश्मीर बुलाता नेहरू लौट आ !
तेरे जाने से युग का सूरज डूब गया
चाँद सितारों का घर सूना-सा लगता है
आज 'भाखरा' से बहतीं व्याकुल धारायें
देख 'भिलाई' स्मृति में धूँ धूँ जलता है
ओ ! दुनिया भर के शान्ति-दूत अब लौट आ !
ऐटम से विह्वल संसार बुलाता, लौट आ !
हिन्द महासागर का रुदन न रोके रुकता
देख हिमालय भी पिघल-पिघल कर रोता है
पूरब से पश्चिम कहता कैसा गजब हुआ
पूरा उत्तर-दक्षिण फफक-फफक कर रोता है

ओ ! हिन्दुस्तानी शेर सिपाही लौट आ !
नेफा लद्दाख बुलाता नेहरू लौट आ !
हर बच्चे की आँखों के आँसू खोज रहे
बतला दो कोई चाचा नेहरू कहाँ गया ?
आज योजना सभी अधूरी सिसक रहीं
हर गली द्वार कहता जवाहर कहाँ गया ?
ओ ! स्वतंत्रता के अमर प्रणेता लौट आ !
रो रो हिन्दुस्तान बुलाता, नेहरू लौट आ !

सच्ची स्वतन्त्रता

—अचल राजपूत

मानव के बन्धन को देख,
निर्भयता ने तुमको ललकारा—
"हे युग के सुपूत,
तुम मानव स्वतन्त्र करो।
घृणा की ऊँची-ऊँची भीतों में रुद्ध कण्ठ
मानवता दीन क्लांत
साम्यवाद प्रजातन्त्र जैसे खिलौनों से
कहाँ बहल पायेगी ?
वर्ग भेद ! वर्ण भेद !
जाति भेद ! वाद भेद !
भेद-उपभेदों की उठती, टकराती, छितराती लहरों ने
मानवता सागर में
पड़े हुए मानव को
जल में की मीन का-सा ऐसा झिझोड़ा है,
विकल कर डाला है।
मानव तड़पता है —
जीवित है, जीवन की आशा न शेष किन्तु—
जीवन का मुक्त अर्थ पाने को तरसता है।

मानव के आत्म का गला घुटा जाता है।
बोदी दीवारें गिराओ—
मानव को सचमुच स्वतन्त्र करो।"
और वीर, तुमने
निर्भयता का आह्वान
कर्मों में ढाला है।

फरिश्ते के क़दम

—मुरारीलाल गोयल 'शापित'

बात कल की-सी,
मगर,
दिल में यही होता गुमाँ
जैसे,
सदियों से चमन का बाग़वाँ सोया हुआ है।
बात बेला, चमेली की करूँ क्या ?
अब हर गुल—
रूह-ए-ज़रदा बन गया है।
मैं खड़ा था,
बाग के एक द्वार पर,
एक झोंका वेग से आया,
थपेड़ा दे गया मुझको
और, जाने कौन-सा संगीत उपवन में गया भर।
हँसने लगा हर गुल,
सभी में ज़िन्दगी चहकी,
मैं खड़ा, ठगा-सा,
देखता का देखता ही रह गया
यह क्या हुआ यह कौन आया ?
पास में मेरे खड़ी झाड़ी—तुनक कर, जोश से बोली।

"अरे पगले बटोही,
यह न झोंका था, फरिश्ते के क़दम थे !
और आये थे,
शान्ति वन के दर्शनों से,
देख कर हम को विपथ पर,
दे गये संदेश—
इस युग के महाचेता, महाद्रष्टा, महाकर्मण्य मानव का—
'कर्म के रथ पर चढ़ो,
आगे बढ़ो,
जीवन बनाओ,
कर्म की वेला—यहाँ
केवल कर्म के ही गीत गाओ,
उदासी, दर्शनों में ठीक,
पलायन योगियों का भाग,
इन्सान का जीवन : कर्म करना और सहना, सहते जाना
किन्तु हँसना और बढ़ना
हर दशा में"
और हम सब चहक उट्ठे,
मैं चकित-सा चल पड़ा अपनी डगर पर।

झर गया गुलाब

—डॉ० त्रिलोक उजागर

कली कली सिसक रही, सुमन सुमन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है॥

जिस किसी ने यह सुना, रह गया ठगा खड़ा।
रोया हर हृदय बिलख, बता ये देव ! क्या किया ?
काँपने लगी धरा, लगा गगन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है॥

खिजाँ में जो बहार-था, हार था सिंगार था।
हर किसी के ही लिए जिसके दिल में प्यार था।।
उसी गुलाब के लिए नयन नयन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है।।

हा ! असमय ही झर गया, डाल सूनी कर गया।
खेत खेत में मगर वह राख बन बिखर गया।।
चन्दन-सी धूल को उड़ा पवन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है।।

"गुलाब जो कि शान था, मान था, गुमान था।
एक शब्द में वतन के जो चमन की जान था।।
है रतन कहाँ कहो, बहुत वतन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है।।

यही सवाल है यहाँ, गुलाब लाल है कहाँ?
शान्ति-वन में खिल रहा—सूनी डाल है कहाँ?
शान्ति-वन को विश्व का सतत नमन उदास है।
झर गया गुलाब, याद में चमन उदास है।।

एक दीपक : नेहरू

—राजेन्द्रकुमार मेहरोत्रा

मन मलिन सब हुए, हास तन से गया।
एक दीपक बुझा और तम घिर गया!

दीप वाला कभी था किसी ने कही,
चमचमाता रहा, तम मिटाता रहा।
दीप पर जब बुझा, दूर हम से हटा,
जग तिमिरमय हुआ, दीप्ति जग से गया,
एक दीपक बुझा और तम घिर गया!

भूल सकते नहीं कार्य उसके सकल,
हम अनोखे, निराले, प्रबल औ' सबल।

वह सितारा नहीं, चांद तारा नहीं,
भारती का दुलारा था जो लुट गया,
एक दीपक बुझा और तम घिर गया !
राजनीतिज्ञ था और ज्ञानी बड़ा,
ध्येय पर वह सदा ही रहा दृढ़ अड़ा।
मार्गदर्शक नहीं, एक नेता नहीं,
अभिभावक, बड़ा भाई ही ढ़ल गया,
एक दीपक बुझा और तम घिर गया !
चाहिए हम सभी को करें अनुगमन,,
उसके कर्मों का, उसका लुटा जो चमन।
अब चमन ही नहीं, वह रतन ही नहीं,
हर हृदय रो उठा, एक युग मिट गया।
एक दीपक बुझा और तम घिर गया !

गुलाब की कली

—मिथिलेश

यों ही उस दिन मचलते, कुलाँचते, वल्लरियों के बीच,
आ पहुँचा हठात् एक अजनवी।
लम्बा छरहरा गेहुअन रंग।
विष दाने भी लजा जाते
जब वह हँस देता यदा-कदा।
न बोलता, न चालता।
कभी-कभी दूर-दूर कुछ देख लेता।
शून्य ही शून्य चारों ओर,
सूरज भी ढल रहा था,
संध्या-सुन्दरी विरह से पीड़ित, लज्जा से आरक्त,
अन्धकार को बाजुओं में कस सिसक उठी।
तारे निकल पड़े।
आखिर न रहा गया उससे।

पूछ ही बैठा—"कौन हो बाबू ? क्या चाहते हो ?
घूर-घूर कर क्या देखते हो ?
कुछ खा तो नहीं गया है ?
तुम ऐसे गुम-सुम हो कि
मौन को भी डर लगता है।"
"नहीं जी, कुछ नहीं
कुछ बीती बातें ताजी हो गयी थी;
गुलाब का फूल कुम्हला गया है
और इसी तरह वह भी असमय में ही......
माली हँस पड़ा।
"अबोध ! और चले हो—
भारत की पतवार सम्भालने,
उठो, सँभालो, जवाँ हो
तुम एक नहीं, करोड़ों की आशा हो।"
माया बिलख पड़ी
ज्ञान मुस्करा उठा,
सामने था नंगा-भूखा भारत।
उसी दिन उसने प्रतिज्ञा कर ली,
भारत को गुलामी से मुक्त करेगा,
परन्तु साथ रहेगी हर दम, हर समय
प्रेरणा-सूत्र गुलाब की कली,
उसके वक्ष-स्थल से चिपकी-चिपकी
पर सर्वदा ताजी

तुम गुलाब-से महके

—महेशचन्द्र 'सरल'

तुम गुलाब-से महके भारत के कानन में।
गन्ध रूप रस ले दमके तुम विश्व-विपिन में।।

राष्ट्र-सूर्य बन तुमने किया प्रकाशित मग को ।
उज्ज्वल आभा से आलोकित सारे जग को ।।
स्नेहमूर्ति मानवता ममता का सम्मिश्रण ।
शान्ति-दूत, जागृति-प्रहरी, कर जीवन अर्पण ।।
राष्ट्र-देश के लिये जिये, मरना कब जाना ?
श्रेष्ठ युग-पुरुष सारे जग ने तुमको माना ।।
देव-दूत से तुम आये थे इस धरती पर ।
जन-कल्याण किया, अपनाया सबको जी भर ।।
तुम इतने पावन थे जितनी गंगा-धारा ।
तुम संगम इतिहास-लेखनी-वाणी द्वारा ।।
तुमने ध्रुवतारा-सी ज्योति किरण बिखरा दी ।
तुमने फसलों में जीवन की शक्ति जगा दी !!

एक व्यक्ति : एक स्वप्न

—राजानन्द

(१)

एक व्यक्ति था
जिसकी एक हथेली पर उसका देश था,
दूसरी पर ग्लोब,
वह दोनों को बहुत चाहता था;
उसने अपने देश को आजादी से जीना सिखाया
और विश्व को मिलजुल कर रहना;
वह व्यक्ति नेहरू था,
जिसकी आँखों में सपना था—
देश की सम्पन्नता का
और विश्व की हरीतिमा का
वह आज नहीं है;...
पर...पर वह है !

(२)

कभी-कभी धरती एक सपना देखती है
और उसे किन्हीं आखों में भर देती है;
कभी-कभी
युग अपने अथाह कष्टों के दर्द को
किसी हृदय में उतार देता है,
'वह कोई' बेचैन हो उठता है परिवर्तन लाने को,
उसकी आखों में जाग्रत अनागत तैरता है
धम्नियों में अन्यमनस्क रक्त
'वह कोई' अपने युग का शिल्पी होता है;
इतिहासकार उसे 'महान्' कहता है
क्या नेहरू ऐसे नहीं थे ?
.........थे !

साथ हमारे ही रहना

—कुसुमाकर उपाध्याय

आ न सकोगे भूतल पर तुम, पास हमारे ही रहना !
दे न सकोगे दर्शन लेकिन, साथ हमारे ही रहना !!
पंचशील के अटल पुजारी, विश्व अहिंसा के अवतार।
भवसागर की मँझधारा में, तुम भारत के कर्णधार॥
मातृ-भूमि की मर्म व्यथा तुम मौन देखते मत रहना !
दे न सकोगे दर्शन लेकिन साथ हमारे ही रहना !!
सूख गये आँखों के आँसू, दे न सकूंगा मैं तुमको।
घायल रणवीरों की स्वासें, जुटा सकूंगा मैं तुमको॥
डूबूँ जब मैं बीच भँवर में, हाथ बढ़ा देना अपना !
दे न सकोगे दर्शन लेकिन साथ हमारे ही रहना !!
आह नियति को कब स्वीकृत, संयोग जगत में होता है।
छोड़ चुके हो साथ मगर आभासित ऐसा होता है—

खुले हुए हैं नयन युगल, 'कुसुमाकर' देख रहा सपना !
दे न सकोगे दर्शन लेकिन साथ हमारे ही रहना !!

नीति का आगार था वह

—पुरुषोत्तम 'अनासक्त'

नीति का आगार था वह, प्रीति का विस्तार था वह।
विश्व के सारे वसंती सपन की मनुहार था वह ॥

जागरण भी जागता था, क्रांति के कण माँगता था।
पत्र था तारुण्य का, आलस्य को जो दागता था ॥

युग का नवल संगीत था, हर साँस का वह मीत था।
मनवन्तरों की वादियों में वह गुलाबी गीत था ॥

सूना धरा का वक्ष है, यह देश लेकिन दक्ष है।
प्रत्येक कण में नेहरू को फिर जिलाना लक्ष्य है ॥

नेहरू-गीत

—रामावतार चेतन

हमने आगे बढ़ना सीखा, कठिन कितावें पढ़ना सीखा,
नेहरू जी ने सिखलाया है।
हमने नया जमाना देखा, सुख का ताना-बाना देखा,
नेहरू जी ने सिखलाया है।
हमें काम से काम रहेगा, औ' आराम हराम रहेगा,
नेहरू जी की चाह यही थी।
पंचशील के बीज फलेंगे, सब हिल-मिल कर साथ चलेंगे,
नेहरू जी की राह यही थी।

चारों तरफ़ सुरक्षा होगी, प्रजातंत्र की रक्षा होगी,'
नेहरू जी का तन्त्र यही था।
सभी तरह के भेद मिटाओ, सबको बढ़ कर गले लगाओ,
नेहरू जी का मन्त्र यही था।

वीरव्रती !

—आशुतोष कुमार चौधरी

वीरव्रती ! पददलित मनुजता का रक्षक
निर्बल मानव का त्राता,
भारत का भाग्य-विधाता,
पंचशील गायक, दस्यु-संहारक,
त्याग और अहिंसा का आलोक स्तूप,
युग-प्रगति का द्रष्टा,
दिग्मंडल तममय पर
मानवता को निराश्रित कर
चला गया।
उसकी यादों के संबल पर
जीने की आशा में मानवता जूझी है।

दैदीप्यमान सूरज भू का

—भवानीशंकर 'पुष्प'

सौ सौ हीरों का नहीं मूल्य उस एक जवाहर के समक्ष,
जिसने सम्पूर्ण जिन्दगी भर मानवता का ही लिया पक्ष।
जिसने भारत का अन्धकार देखते देखते पी डाला,
जिसकी वाणी के अमृत ने लाखों मुरदों में जी डाला॥

जो भारत माता की आँखों का प्यारा था ध्रुवतारा था,
जिसने धरती का उजड़ा दिल, दे अपना लहू, सँवारा था।
आँधियों और तूफ़ानों में जिसका निर्भय रथ रुका नहीं,
दैदीप्यमान सूरज भू का, वह टूट गया पर झुका नहीं॥

२७ मई : तीन प्रतिक्रियाएँ

—श्रवण कुमार

चौराहे पर पड़ा दिया अचानक बुझ गया!
जो स्वयं जलकर
सबका अँधेरा हर रहा था—
वही दीपक,
मौत की आँधी आने पर बुझ गया।
कई राही,
उसके दिखाये जाने वाले पथ पर,
जाने को तैयार थे!
परन्तु अँधेरा होते ही सब के कदम रुक गये
सब दिये के ही अन्धकार में खो गये!
महान्!
देश की मशाल!
सचमुच तुम चले गये,
सुनी जब तुम्हारी ख़बर
बिलकुल झूठ जाना था!
परन्तु शीघ्र ही हो गई पुष्टि!
कुछ समय पहले जो था सत्य
वही अब इतिहास हो गया!
जाते ही तुम्हारे,
सारे जग में अँधेरा हो गया!
धरती रोयी,
आकाश ने आँसू बहाये!

चाँद छिप गया,
सूरज ने जाकर चेहरे को बादलों में छुपाया !
सभी की आंखों में था पानी
और मुँह पर मातम छाया !
तुम मरे नहीं,
अमर हो !
संसार में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं—
जो मरते हैं,
पर कीर्ति सदा उन्हें जीवित रखती है !
तुम्हारी कीर्ति भी तुमको अमर रखेगी !
परन्तु तुम्हारी कमी को,
कोई भी पूरा न कर सकेगा !

एक श्रद्धाञ्जलि

—धर्मपाल 'अकेला'

२७ मई !
प्रतिवर्ष यह २७ मई आती थी
आती रहेगी
पहले कभी भी यह याद रखने योग्य
शायद नहीं थी,
पर अब तो यह एक अमिट याद छोड़ गई है
रेडियो से किसी की 'टॉक' सुनी है
तुम 'अमर' हो गये
मरे नहीं।
कितनी सुन्दर गंभीर शब्दावलियों से भरी
थी यह 'टॉक',
'वे मरे नहीं हैं, वे अमर हो गये है'
क्या सचमुच तुम नहीं मरे हो
पर २६ जनवरी को तुम्हारा भाषण नहीं हुआ,

रेडियो पर तुम्हारी स्पीच सुनने के लिये—
नुक्कड़ के उस पनवाड़ी की दुकान पर
पहले जैसी भीड़ तो अब नहीं दिखती ?
लोग कहते हैं चोला बदलकर तुम पुनः आओगे
जरूर आना
हमें अब तुम्हारी आवश्यकता पहले से अधिक है
सचमुच
निष्कलंकता की वह स्निग्ध चेतना और पवित्रता
की उस मुस्कान की हमें
तब से अधिक अब आवश्यकता है ।

गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो

—रमेश जोशी 'मृदुल'

गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है !
जिसे खून दे करके सींचा था तुमने,
तुम्हारा वो प्यारा वतन रो रहा है !!
बसाने जगत में खुशी के खजाने,
वतन पर चढ़ा दी तुम्हीं ने जवानी ।
मिटाने अँधेरा स्वयं जल गये तुम,
तुम्हारी हैं ऐसी बहुत-सी कहानी ।।
संजोया था जिसको तुम्हीं ने नयन में,
तुम्हारा वही मधु सपन रो रहा है ।
गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है ।।
तुम्हारे वचन से मनुज ही न केवल,
पत्थर औ' फौलाद गलता पिघलता ।
तुम्हारे ही कर्मों के पथ पर ये भारत,
युगों तक चलेगा सम्हलता, सम्हलता ।।

यही कथ्य कहने को आँसू गिरा कर,
धरा तो धरा पर गगन रो रहा है।
गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है॥
करोड़ों समुद्रों की गहराइयाँ भी,
तुम्हारे हृदय की न समता में होंगी।
जहर को पचाकर सुधा बाँटने की,
अनोखी तपस्या न ममता में होगी॥
यही दर्द दिल में छुपाकर हमारा,
तिरंगा तुम्हारा कफन रो रहा है।
गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है॥
उत्ताप लहरों को शीतल दशा में,
बदल कर के तुमने ही बहना सिखाया।
सदा लड़खड़ाते रहे युद्ध में जो,
पकड़ उनको उँगली था चलना सिखाया॥
बनाये हुओं को मिटाता रहा जो,
तुम्हें मार कर वह मरण रो रहा है।
गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है॥
अभी तक तो चिड़ियों के बच्चे से बन कर,
चुग्गों की खातिर चहकते रहे हम।
महक सब उधारी में लेकर तुम्हारी,
तुम्हारी महक से महकते रहे हम॥
मगर आज मुरझा के सिर को पकड़ कर,
तुम्हारा गुलाबी सुमन रो रहा है।
गुलाबों के राजा जवाहर कहाँ हो,
तुम्हारा लगाया चमन रो रहा है॥

सहिष्णुता का अवतार

—विश्वेश्वर दयाल त्रिपाठी 'द्विजमान'

मान था अनुग प्रतिद्वन्द्वी लोहा मानते थे,
देश से विदेश में अधिक सम्मान था।
क्रांति थी मुदित फूली शान्ति न समाती तन,
स्वत्व कामना का खिला वनज प्रधान था॥
नव्य योजनाओं के गगन पै समुन्नति का,
चढ़ रहा अति ही उदार भासमान था।
मानव महान् नेहरू-सा पाय द्विजमान,
मुदित अवनि थी प्रसन्न आसमान था॥

तज कर भोग को महान कर्मयोगी बने,
धुन देश-सेवा की अनोखो आन वाले थे।
प्रेम रहा क्रांति से, उपासक स्वतंत्रता के,
शक्ति पर शांति की अहिंसा व्रत पाले थे॥
पाशविक बल का गरूर करते थे चूर,
ध्रुव ध्येय पै अटल टलते न टाले थे।
मोहन के उत्तराधिकारी विश्ववन्द्य वीर,
युग के पुरुष विश्व प्रेम मतवाले थे॥

गर्व करते हैं, भरते हैं नौजवान दम,
साहस-सहिष्णुता का मानो अवतार था।
द्विजमान सुकवि अखिल अवनीतल के,
छोरों तक महती महत्ता का माप था॥
ध्येय ध्रुव का सा, दृढ़ता थी हरिचंद की सी,
कर्मयोगी योगियों-सा मधुर अलाप था।
वर्तमान युग के जवाहर पुरुष श्रेष्ठ,
शक्ति शक्ति जैसी थी, प्रताप-सा प्रताप था॥

कैसे मान लूँ……

—सुधा गुप्ता

अब तुम नहीं रहे—
यह मैं कैसे मान लूँ ?
यह गुलाब……सुर्ख गुलाब
मुझे दे रहा है तुम्हारे होने का बोध
जो सदैव तुम्हारा अभिन्न रहा है;
उसने तुम्हारी हर आहट को
तुम्हारे स्वरों को, तुम्हारी मुस्कराहट को
हर क्षण अपने क़रीब पाया है
और दुःख दर्द के संग संग जिया है।
अब कह रहा है सिर हिला हिला कर !
"लाल जवाहर, कहीं नहीं गया है
मुझमें ही लय हो गया है।"

धरती का सौभाग्य मिट गया

—रामस्वरूप खरे

आज छा गया सघन अँधेरा, अस्त हुआ दिनमान !
धरती का सौभाग्य मिट गया, रूठा स्वर्ण-विहान !!

कहाँ द्विजों का कलरव पावन, त्रिविधा सुखद समीर ?
युगों-युगों से आह्लादित क्यों रोता सुर-सरि-तीर ?
रोती है क्यों बिलख-बिलख हर आँख आज भर नीर ?
क्या सचमुच ही फूट गई है भारत की तकदीर ?

कौन सुमन कर सुवासित भू, झरकर अम्लान !
कौन बना युग का दधीचि, रखने देवों का मान !!

मोती का वह लाल जवाहर था गुलाब का फूल !
वह 'स्वरूप' की आशाओं की सरि का था नव कूल !!

'कमला'[३] का था विष्णु, शिवा का शिव, सत्यं का मूल !
जनक 'इन्दिरा' का, 'लक्ष्मी' की उर-बगिया का फूल !!

कहाँ आज 'आनन्द-भवन' का संन्यासी प्रिय-प्रान !
मानवता का दूत मसीहा, भारत का अभिमान !!

तोड़ सभी सीमाएँ तुमने किया हृदय विस्तार !
स्वतंत्रता की नव वीणा में भरकर मधु झंकार !!
शान्ति-कपोत उड़ाये जग के नभ में पंख पसार !
तुमने सचमुच भारत माँ का किया नया शृंगार !!

श्रद्धांजलि स्वीकार करो, हे जीवन के उत्थान !
लीन हो गये तुम असीम में, बन विराट द्युतिमान !!

उठा कौन नर-रत्न

—शिवचन्द्र ओझा,

(१)

कुटिल नियति की क्रूर है व्यंग्यमयी मुस्कान,
हँसते-हँसते मनुज के हर लेती है प्राण !
हर लेती है प्राण, नहीं कोई बच पाता,
किन्तु अमिट है महापुरुष की कीर्त्ति-पताका !
विरले मोती, लाल, जवाहर माता जनती,
उठा कौन नर-रत्न ? हिली दिल्ली की धरती !

(२)

हाय अचानक उठ गया विश्व-शान्ति का दूत,
प्रजातन्त्र का उठ गया सबसे बड़ा सपूत !
सबसे बड़ा सपूत, सत्य का सतत पुजारी,
कुशल राष्ट्रनायक उदार पटु पंडित भारी !
समझ न आती महाकाल की अद्‌भुत लीला,
मोती के प्रिय लाल जवाहर का भी लीला!

(३)

भारत माँ के पुत्रद्वय की जोड़ी थी खूब,
पंडित जी जिस दिन उठे, कल होकर महबूब !
कल होकर महबूब प्रोड्यूसर स्वर्ग सिधारे,
निर्माता थे उभय, उभय जनता के प्यारे !
एक राजनीतिज्ञ, दूसरा कला-पुजारी,
'मदर इण्डिया' दोनों को प्राणों से प्यारी ! !

(४)

भारत माँ का लुट गया हाय जवाहर लाल,
गया दुलारा देश का क्रूर काल के गाल !
क्रूर काल के गाल एक दिन सब हैं जाते,
महापुरुष भी हाय यही अन्तिम गति पाते !
गये जवाहर लाल, किन्तु यश-काय अमर है।
आदर्शों पर चलें, देश ने कसी कमर है।।

टूट गया ध्रुव तारा

—शीला पाठक

विश्व शान्ति के नील गगन का टूट गया ध्रुव तारा।
आज शोक-संतप्त हो गया सारा जगत हमारा।।

अन्यायों के आगे बढ़-बढ़ जिसने छाती तानी।
त्याग और बलिदान अनोखा, जिसकी भरी जवानी।।
अंग्रेजों की संगीनों का जिसने था मुख मोड़ा।
गोआ और काश्मीर विलय कर खण्डता को जोड़ा।।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई सब का सबल सहारा।
विश्व शान्ति के नील गगन का टूट गया ध्रुव तारा।।

कमल-पुष्प-सम शोभित मुख था, ओजमयी थी वाणी।
जन-जन को जीवन देती थी मृदुवाणी कल्याणी।।

गांधी जी के स्वप्न अधूरे सब साकार किये थे।
विश्व शान्ति आधार मान कर सब को साथ लिये थे।।
तन-मन-धन भारत सेवा हित नेहरू जी ने वारा।
विश्व शान्ति के नील गगन का टूट गया ध्रुव तारा।।

कौन 'लाल' रोकेगा बढ़ अब एटम बम की आँधी।
राष्ट्र संक्रमण की वेला में ले ली मौन समाधी।।
उमड़ पड़ी जन-जन की श्रद्धा, गिरा नयन से पानी।
कहाँ सुनेंगे कैसे अब चाचा नेहरू की वाणी।।
शोकाकुल दिल्ली ही क्या है, शोकमग्न भूमण्डल सारा।
विश्व शान्ति के नील गगन का टूट गया ध्रुव तारा।।

बापू जी से निष्ठापूर्वक ले शान्ति, सत्य संदेश।
शस्त्रीकरण से दूर रहो, दिया तटस्थता उपदेश।।
जन-अधिकारों की रक्षा का, पन्थ न कभी रुकेगा।
सत्य न्याय का ध्वज तिरंगा, रिपु सम नहीं झुकेगा।।
अमर रहेगा युग-युग तक, नेहरू आदेश तुम्हारा।
विश्व शान्ति के नील गगन का टूट गया ध्रुव तारा।।

लोकनायक नेहरू के प्रति

—ब्रजेश्वर प्रसाद शर्मा

जीवन और मृत्यु
सत्य है यह चिरन्तन
उद्घोष हुआ
महामानव महाप्राण
भ्रमित द्वाभा की चादर में
राष्ट्र को लपेट
कहीं खो गया, सो गया
एक स्वप्न था
जो अधूरा रह गया

प्रखरता का आलम
जो कुंठित खंडित हो गया
जन-जीवन में फैले प्रकाश का
अमर-प्रदायक
रंग-बिरंगी छवियों—
सुषमाओं का जीवंत प्रतीक
आज मन को
लक्ष्य-भ्रमित कर छोड़ गया
युग-पुरुष !

जो आज नश्वर बन चुका है
वास्तव में मरा नहीं है
अपने हृदय का सौरभ
धरती के कोने-कोने में
कस्तूरी-बास बिखेर कर
जीवन की
अनसुनी आवाज की तरह
पल-पल क्षण-क्षण
फैल-फूल कर सिकुड़ गया

किन्तु मरा नहीं वह
मानस-विधायक,
इतिहास-पुरुष
क्योंकि मरता नहीं है
यश का शरीर भिरता नहीं है
वह समग्र विश्व का
मनीषी-पुत्र
आत्मा के प्रकाश की तरह
अजर है ...अमर है......

एक सूरज ढल गया

—गजेन्द्र तिवारी

आज तक जिसने निरन्तर ज्योति का झरना बहाया।
जगत का तम-तोम हरकर शान्ति का सूरज उगाया॥
स्वयं जल जल कर कि जिसने नेह की गंगा बहाई।
आज वह दीपक चिरन्तन मौन साधे रह गया॥
जिन्दगी के वक्ष में पीड़ा उगाकर, एक सूरज ढल गया !
जिसकी अडिगता पर स्वयं हिमवान भी कुरबान था।
सिन्धु ही जिसके हृदय का एक बस उपमान था॥
एक होकर भी जगत में सब कहीं छाया रहा जो—
आज वह आकाश ही अनजान पथ पर चल दिया॥
चेतना की वादियों में क्रांति का परचम उड़ाकर महामानव गय
आस्था का ध्रुव दिया जिसने 'दिशाहारा जगत को।
'जियो, जीने दो' सिखाया द्वेष से जलते जगत् को॥
आराम था हराम जिसको, कर्मयोगी आज वह—
सद्भाव का ऋतुराज देता, मुस्कराता चल दिया॥
पीड़ितों दलितों गरीबों को जगाकर युगपुरुष खुद सो गया !

ओ युग-रथ के सारथि !

—शेफाली

ओ युग-रथ के सारथि !
तुमने क्यों खीच दी लगाम
गति थम गई : अभी तो मार्ग कितना था !
ओ युग-वाटिका के गुलाब
तुमने क्यों मूँद लिये नेत्र
मुरझा गये सब फूल : अभी इनकी जरूरत थी !
ओ युग-नभ के धवल कपोत
तुमने क्यों रोक दी उड़ान
जगत स्तब्ध है : अभी सन्देश देना था तुम्हें !
लेकिन ओ ज्योति-पुंज !
तुमने था सौंप दिया
पीढ़ी को अपनी इतना विश्वास—
कि युग-रथ फिर दौड़ने लगा है !

हम क्या करें !

—(डॉ०) नरेन्द्र मोहन शर्मा

लोग ही लोग हैं सभी ओर
फिर भी यह सन्नाटा क्यों है !
चुप्पी और स्तब्धता क्यों है !
लोग निराश, हताश और रूआँसे क्यों हैं !
ऐसा क्या है जो इन सब को बींध गया है
दर्द और टीस दे गया है
करुणा का समुद्र रोएँ रोएँ में उपजा गया है ?
ऐसा क्या हुआ है !
ऐसा हुआ था सदियों पहले
बुद्ध के महानिर्वाण पर।

ऐसा हुआ था कुछ वर्ष पहले
बापू के महत् बलिदान पर।
ऐसा ही हुआ है आज
एक नायक के—युगद्रष्टा के महाप्रयाण पर,
एक युग बीता है
और हम द्रष्टा हैं
हम क्या करें !
वह लाल फूल जो हमारी मिट्टी से उगा था
जिसे हम प्यार करते थे
जिससे हम महक उठे थे
मिट्टी को अमरत्व दे कर
धारा में विसर्जित हो गया है
हम क्या करें !

जवाहरलाल से

—सेवक वात्स्यायन

आया एक प्रात:काल
रोज़ाना से अधिक लाल
धरती ने दु:ख सहे
जवाहर लाल नहीं रहे
यह तो कोई बड़ी बात नहीं
होता है ऐसा सभी कहीं
आग लगती हैं
मुरदे फुँकते हैं
और पार्थिव शरीर
राख बना दिया जाता है।
परन्तु हे नेहरू जी !
युग के सबसे बड़े ब्राह्मण !
और पण्डित जी !

देर में समझ आई
तुम से अब कहूँ क्या !
खुद से अब डरूँ क्या !
शर्म अब करूँ क्या !
तुम को हम कहते थे
चोख चोख डिक्टेटर
बनते थे गदहे भी
लाइफ़-इण्टरप्रेटर
कानी भी कौड़ी को
जाँच नहीं जिनको थी
हीरे-कोयले की भी
माँप नहीं जिनको थी
तुमको हजारों

इल्ज़ाम दिये जाते थे
मोती औ' जवाहर -
बदनाम किये जाते थे।
लेकिन
तुम्हारी जब
आज साँस नहीं रही
हमसे निकम्मों की
कोई आस नहीं रही
तब हम चिल्लाते हैं
मातम मनाते हैं
हमारी भी खता नहीं
तुमने दी सज़ा नहीं
अब हम घबराये हैं
सचमुच घबराये हैं
और घबराये हुए
शान्ति-घाट आये हैं
अब हम गांधी को बात मानेंगे
किसी के कहे का बुरा नहीं मानेंगे
अब हम नेहरू जी ! तुम्हारी बात मानेंगे
अब हम किसी से कभी हार नहीं मानेंगे।

अनन्त के राही से

—ब्रजेश 'चंचल'

तुमने जो पथ लिया—
वहीं पर जला हुआ है दिया।
एक व्यक्तित्व तुम्हारा।
देह तुम्हारी बदल चुकी है,
और लोग !
इतिहास भूगोलों की भाषा में—
जीवन कहते !
करते करते पान क्रोध का—
अहं के प्यालों को जो—
अमृत की घूँटों से सहते।
तुमने अमृत और गरल में भेद गिना कब ?
तुमने सुख-समृद्धि भरे उपवन में खिलकर भी तो—
शूल-शूल को चुना।
ताकि किसी भी अप्रिय के तुम प्रियदर्शी बन—

प्रियता का विषय पढ़ सको !
कदम तुम्हारा बढ़ा एक मानवीय डगर पर।
हाथ तुम्हारे बढ़े पीड़ितों के अवलम्बन बनकर।
तुम्हीं अनाथों पर छाये थे एक छत्र-से।
तुमने जब यह डगर पाट ली ओर-छोर तक,
अब तुम उस अनन्त पथ पर हो—
जहाँ एक संसार दूसरा है विचित्र ही।
जहाँ चित्र के रंग-भेद करता विवेक है।
जहाँ सभी पथिकों का होता लक्ष्य एक है।

मेरा लाल लौटा दो

—तेजनारायण कुशवाहा

मेरा लाल लौटा दो !
आकाश की दूरस्थ नगरी के निवासी,
प्रेतराजा यम, मृतक-आवास निर्माता,
मेरा वैरियों के घेरने का जाल लौटा दो !
ओ देवताओं के पुरोहित बृहस्पति,
अमरत्व-अभिभावक, नियामक सलिल के,
ओ वरुण, ओ मृतक-वाहक अग्नि,
मेरा वांछनीय पदार्थ—नौका-पाल लौटा दो !
ओ द्यौस दिनकर,
उषस्; हिमकर; विष्णु, पूषन् दिव्य देवो,
लौटाओ मनुजता का पुजारी,
दलित देशों का सुदृढ़ आधार,
मांझी का पुरा पतवार,
विकच आशा-कुसुम की डाल लौटा दो !
ओ गन्धर्व, ऋभुओ, अप्सराओ, अपर देवो,
नदियो, पर्वतो, खलिहान-खेतो,

सीमा-मोर्चे पर रक्त की होली मनाने के लिए,
शत्रुओं पर विजय पाने के लिए
परशुरामी चाल, यौद्धिक ढाल लौटा दो !
मेरा लाल लौटा दो !

समय का इतिहास

—वंशीलाल 'पारस'

आज बाल-दिवस है,
चौदह नवम्बर भी !
समय-चक्र अपनी अबाध गति से चल रहा है।
एक सत्ताइस मई निकल गयी—
और एक आगे आ जायेगी !
ये तिथियाँ न हों तो
जन्म-मृत्यु का संकेत ही न मिले !
लगता है : महान् विभूतियों के जन्म-मरण
समय के हस्ताक्षर हैं;
अथवा
उसका स्वयं का इतिहास है !

नेहरू चाचा के लिए एक संदेश

—बिहारीलाल अग्रवाल

चाचा ! ओ युग मानव !!
आज तुम्हारा यह देश
जो तुम हमे सौंप गये थे
आस्तीन के साँपों से घिरा है
जिस गीदड़ को तुमने टुकड़े दिए

वही आज सीमा पर चिल्लाता है !
ओ स्वतंत्रता के प्रहरी ! !
तुम्हारे देश ने आज बन्दूकें उठा ली हैं
दुश्मन का मुँह तोड़ देंगे
जब तक हम हैं : दम में दम है
विश्राम नहीं लेंगे
काश्मीर इस देश का गुलाब है,
सुर्ख गुलाब—
इसे मुरझाने नहीं देंगे

राष्ट्र-चेतना की बाती

—सावित्री शुक्ल 'निशा'

आह जवाहर ! चले गये तुम !
आज तुम्हारे बिना देश का तन टूटा है,
मन भूखा है,
लगता जैसे आज हमारा भाग्य हमीं से खुद रूठा है !
जाने कैसी अशुभ घड़ी वह आई
भारत-नभ पर शोक-बदलियाँ बरबस आकर छाईं ।
विश्व-शान्ति का मूक पुजारी
आज शान्ति के देवालय में हुआ समर्पित,
जिसने अपनी कर्मठता से, मानवता को किया विनिर्मित !
वही शान्ति का दूत आज मिट गया काल के कर से,
जीवन-भर वह नहीं डिगा था—
सिद्धान्तों की सुदृढ़ डगर से !
राजमार्ग सूना दिल्ली का,
दिल्ली की गलियाँ सूनी हैं;
हर गुलशन के फूल रो रहे—
हर गुलाब-कलियाँ सूनी हैं !
जन-जन के अन्तर सूने हैं,
जन-जन की आँखें रोयी हैं;
भारत ने ही नहीं, विश्व ने—

एक कीमती निधि खोयी है !
वीर सिपाही आजादी के महायुद्ध के,
भारत-जननी के तेजस्वी पूत,
चिर निद्रा मे आह ! सो गया—
विश्व-शान्ति का दूत !
बापू की थाती थे तुम,
राष्ट्र-चेतना की बाती थे तुम !
खो गई आह ! थाती बापू की,
बुझ गई अचानक भारत के गौरव की बाती !
चलते थे तम जिस पर वह पथ अभिमानी था,
गर्वित अपने प्रवाह में यमुना का पानी था !
रोता है वह पथ अभिमानी,
रोता है यमुना का पानी;
कर न सका है कोई अब तक निठुर काल से रे मनमानी।
तुम ब्रह्मा की श्रेष्ठ कला थे,
तुम शंकर की महाशक्ति थे—
सिर्फ देश के नहीं, विश्व के श्रेष्ठ व्यक्ति थे।
कौन आज बेहाल नहीं है;
कौन शोक-सतप्त नहीं है;
आज नयन के दरवाजों पर किसकी पीड़ा व्यक्त नहीं है !!
आज़ादी के नव भारत के कर्णधार थे,
स्वयं तुम्हीं हर स्वागत के पुष्पहार थे !
अनायास ही मुख मोड़ा है कर्णधार ने,
बिखर-बिखर कर दी श्रद्धांजलि पुष्पहार ने !
शान्तिघाट पर अग्नि-शिखाएँ सुलग पड़ी हैं;
तुम्हें झुलसता देख—
न जाने कितनी साँसें बिलख पड़ी हैं !
पंचभूत में मिला तुम्हारा पार्थिव तन है,
सुवक पड़ा रे, शान्तिघाट का हर कण-कण है !
आज आख़िरी बार तुम्हें यह अभिवादन है,
दे रहा आखिरो पुष्प तुम्हें दिल्ली-कानन है !

तुमको सौ बार नमन है

—छबिलाल 'अशांत'

हे पंचशील के प्राण, भारती की गोदी की शोभा।
हे विश्व शांति के अग्रदूत, तुमको सौ बार नमन है।।
निज का तो जीवन संकट की काल रात्रि में बीता।
सारे वैभव का दान किया औ' रहा स्वयं ही रीता।।
मानव को तुमने मानव का सुखकर मार्ग दिखाया।
दानव के अभिशापों से बचने का मंत्र सिखाया।।
वाणी में थी अमित शक्ति, थी सिद्धान्तों में दृढ़ता
हे जीवन रथ के महारथी, तुमको शत-शत वन्दन है।।

जब किसी राष्ट्र पर विपदा के बादल मँडराने लगते।
तुम दौड़ साथ देते उनको, पल भर थे नही हिचकते।।
थी देख रही सारी दुनियाँ तुमको टकटकी लगाकर।
सबके मानस में बसा हुआ था केवल एक जवाहर।।
मानव के सच्चे शुभचिंतक, नवनिर्माणों के शिल्पी।
हे मोती-तनय तुम्हे मेरा सादर नव अभिनन्दन है।।

मानापमान के कितने ही विषघूँट पी रहे तुम थे।
फिर भी निज निंदक के भी तुम अति पावन परम-हितू थे।।
वसुधा को भयविमुक्त करने का था संकल्प तुम्हारा।
तुम चाह रहे थे आज तोड़ना मानव-मन की कारा।।
हे सत्य अहिंसा के पोषक, भारत के ज्योतिर्दीपक।
नीरव-निशीथ के प्रहरी, तुमको कोटि कोटि वंदन है।

तुम नही आज तो यह दुनियाँ फीकी लगती है।
चहुं ओर मौत की परछाईं मँडराती-सी दिखती है।।
निज हाथों तुमने जिस मानवता का शृङ्गार किया था।
वह किसी भिखारिन अबला जैसी दीन-हीन लगती है।।
हे विश्व-वेदना के सहचर, हे विश्व-बाग के माली।
हे विश्व एकता के प्रतीक, तुमको सहस्र वंदन है।।

महामात्य सो गए !

—श्रीप्रकाश लालदास 'प्रकाश'

पंखुड़ियाँ झड़ गईं लाल प्राणों के पाटल की;
हुआ मुक्त फिर सौरभ शेष अशेष दुखी भूतल पर !
टूट गई लो तंतु एक गत भंग शांति-वीणा की !
महामात्य सो गए जवाहर लाल शांतिवन भीतर !
अगरु-धूम की राशि उड़ी नव मेघों की माला-सी !
बिछ गया अस्थि-अवशेष-क्षार भारत के कण-कण पर !
गंगा, यमुना, सरस्वती की धार लगी उमड़ी-सी !
सोया देश जगाकर सोया, स्वयं सिंह ज्यों थककर !
युग-युग उसके मनस्तत्व की ऊर्जा भी जीवित-सी !
उसका शांति-क्रांति-उद्घोषण जीवित प्रतिध्वनि बनकर !
भारत माँ हित जब केवल थी बनी काल-कारा ही,
वह लाल कृष्ण-सा आया था, नव मुक्ति-मंत्र-सा लेकर !
वह अमरों का अनुज, लाल वह, आशा भारत माँ की !
गांधी की वर बाहु, दंडधर महामात्य-सा बनकर !
जब शोषित भारत में जन-हित नई चेतना आयी—
कोटि-कोटि का एक कंठ वह हुआ मौन सोने पर !

एक युग-पुरुष चला गया

—विनोद कुमार

एक और युग-पुरुष चला गया।
ओ ! धर्म और राजनीति का साथ न जोड़ने वाले—
अनावृत व्यक्तित्व !
सभी धर्मों की शहादतों को स्वीकारा तुमने।
नये विश्वासों की प्रतिमायें निर्मित कर
स्नेह उंडेला
मानवता का सूत्र जोड़ा।

तुमने सृजनशीलता का गीत लिखा,
तुमको विश्व सब एक दिखा !
एक असह्य खामोशी में गूँजतीं
बापू-बुद्ध-ईसा की अनेक आत्मायें,
आज भी तुम्हारे सपनों में हम आस्था की लौ जलाते हैं;
हर जगह तुम्हें पाते है ।

नमन करो उस महापुरुष को

—भगवतीप्रसाद सोनी 'गुंजन'

नमन करो उस महापुरुष को, जिसने किया देश निर्माण ॥

सुख में शैशव जिसका पलकर, हुआ किशोर युवक गम्भीर,
देख देश की पराधीनता, विप्लव से भर गया शरीर।
गोरे शासन की सत्ता पर, सफल बनाया निज अभियान !

श्रेष्ठ गुरु गांधी से लेकर संघर्षो का शुभ गुरु-मन्त्र,
सत्य, अहिंसा महामन्त्र से, जन्मभूमि को किया स्वतन्त्र ।
फिर काँटों का ताज पहिन कर किया देश का नवउत्थान !

भारत माँ के तपःपूत में था आकर्षण का भण्डार,
मित्र, अमित्र सभी देते थे उसको अपने उर का प्यार।
वह मधुरिम मुस्कान लुटा कर करता सबको हर्ष प्रदान !

जाति, धर्म के भेदभाव को दी सदैव उसने फटकार—
उन्नति करने का स्वदेश में, हर मनुष्य को है अधिकार।
अथक परिश्रम किया विश्व में, हो मानवता का कल्याण !

आलोकित कर दिया जगत को, पंचशील की जला मशाल,
कोटि कोटि कंठों से निकला, जय हो वीर जवाहरलाल ।
उस महान कर्मठ नेता पर भरत-भूमि करती अभिमान !

नव विकसित गुलाब की कलिका, जब तब भरती एक विषाद,
किया रोग ने अग्रदूत को सहसा इस जग में बर्बाद ॥
मनुज नहीं था वह भारत का था अमूल्य विधि का वरदान !

युग-स्रष्टा का यह निदेश है, अब समझो 'आराम हराम',
घर बाहर दोनों तुम देखो, और करो अब जुटकर काम।
अपने पैरों आप खड़े हो, पूरा तभी मिलेगा मान !

अमन का पुजारी

—बाबूराम राठौर 'राही'

भारत माँ का गलहार जवाहर जड़ा हुआ,
दमका करता था टूट गया अनजाने में।
उस नग की कीमत कैसे कौन चुकायेगा ?
जिसको हमने पाया था अति वीराने में।।

जब पाया था अनमोल रतन भारत माँ ने,
कितनी बेहद खुशियाँ सबके मन भायी थीं।
जो बसते थे वीराने के पोषक उलूक,
उनके मुखड़ों पर गम की बदली छाई थीं।।

वीराना श्रम-सीकर पाकर सरसब्ज बना,
वह चमन कि जिसका वृक्ष-वृक्ष रखवाला है।
विकसित गुलाब की कली-कली से फूट रहा—
मकरंद कि जिसका कंटक पहरे वाला है।।

वह माली जिसका हृदय-हाथ-मस्तिष्क मिला,
जिस पर गुलाब ने सुन्दर स्वप्न सँजोया था।
मनहूस मई सत्ताईस दुर्दिन ले आई,
उस दिन गुलाब कितना मन ही मन रोया था।।

लेकिन गुलाब तू अपने मन में फिक्र न कर,
हर एक पखुड़ी हेतु पहरुए सावधान।
जो इसकी ओर जरा भी आँख उठायेगा,
बे मौत उसी को देने होंगे स्वयं प्राण।।

गौतम गाधी के सत्य अहिंसा पथ पर चल,
उस अमन पुजारी ने जो हमें सिखाया है।

अन्यायी, हिंसक से लड़ने आगे बढ़कर,
भारत ने ही गीता का पाठ सिखाया है ॥

यह अमन चैन, जिसको भारत ने जन्म दिया,
इतिहास हमेशा देता आया है प्रमाण।
आबाल, वृद्ध, नर-नारी, कोई न विमुख रहे,
आज़ादी पर बलि जाना सबका स्वाभिमान ॥

ओ हीन विश्व

—रमेश वर्मा 'सरस'

ओ विश्व,
तूने अपनी महान्, महानतर और महानतम
सपूत की महानता का आनन्द खो दिया
तेरे खण्ड राष्ट्रों में जितने भी शब्द-कोप हैं—
उनसे विशेषता-सूचक शब्द निकाल कर
मणि एवं श्रेष्ठताबोधक पर्याय एकत्र कर
किसका निर्माण हुआ था !
ओ सर्वग्रासी, सर्वहारा काल
ओ क्रूर काल
दैव के विधान
तूने विश्व-नभ के रश्मित निशाकर को
अपने दुर्विपाक के काले मेघों में समेट लिया
ओ हीन विश्व !
तू काल से सदैव पराजित रहा
तेरा दम्भ व्यर्थ है।

दिव्य ज्योति का पुत्र !

—जयनारायण शर्मा 'व्याकुल'

दिव्य ज्योति का पुत्र, विश्व की आँखों का ध्रुव तारा,
कर्म-कुण्ड का अनल, पूज्य जनता का बना दुलारा।
काल डुलाता रहा चँवर औ' सिंधु चरण था धोता,
झुकता गगन उधर, उसका था जिधर इशारा होता ॥

वह वीर जवाहर लाल, देखने में नवनीत तरल था,
किन्तु कर्म में वह कठोर, लोहे से अधिक सबल था।
शुचि ललाट पर भारत के जिसने था तिलक लगाया,
विश्व व्याल को बजा बीन, जिसने निज चरण झुकाया ॥

आँधियाँ अनेकों उठीं और दामिनी दमकती आई,
उसकी पड़ी नजर, बस पल में जहाँ तहाँ छितराई।
इन्तजार में खड़ा ज़माना, जग कुछ चाह रहा था,
भारत अपना शौर्य स्वयं पग तल में थाह रहा था ॥

उसी बीच विधि हुआ वाम, औ' वज्र धरा पर छूटा,
उठ गया जवाहर लाल, हिमाद्रि का धवल कलेजा टूटा।
सरिता रोई दुःख से विह्वल, उद्विग्न सिंधु अकुलाया,
काँपा निसर्ग, डोले दिग्गज, पर लौट नहीं वह आया ॥

गया जवाहर, किन्तु उसे जग भुला नहीं पायेगा,
इतिहास-पृष्ठ पर स्वर्णाक्षर में उसका नाम रहेगा।
उसका विमल कीर्ति-ध्वज अम्बर में निशि-दिन फहराये,
जब तक सूर्य-सोम सुरसरि यमुना की धारा गाये।

शांति का अध्याय

—अमरलाल सोनी

एक ग्रन्थ था खुला,
महाप्राण ने लिखा;

दादी ने अगरबत्ती जलाई,
और बच्चों को पढ़ पढ़ कर लगी सुनाने—
दीपक के मध्यम प्रकाश में।
शांति का सोपान आया :
उसके हर शब्द में ध्वनित हो रहा था
अमर नाम—
जवाहरलाल का,
हर वर्ण के हर कोण से
रह रह कर स्वयं वही झाँक रहा था !
भाव-विभोर दादी ने
आँखें बन्द कर हाथ जोड़े
तभी हवा के एक झोंके से
दीपक बुझ गया—
और पलट गये कई पन्ने एक साथ !

सर्वत्र तुम्हीं जन्मो, जागो

—शंकर 'क्रन्दन'

तुम जीवन के जाग्रत स्वरूप, तुम नवयौवन के महायोग।
तुम महामुक्ति के मंजु बोध, तुम इस वसुधा के पुण्य भोग॥
तुम पौरुष के पावन विकास, तुम अक्षय रस के सुख सुयोग।
तुमने आगे बढ़ पहचाना इस मानवता का मलिन रोग॥
तुम विश्ववद्य, तुम महाराध्य, तुम वीर व्रती, तुम यशोधाम !
हम कोटि-कोटि स्वतंत्र पुरुष करते तुमको सादर प्रणाम॥

तुम आज़ादी के दिव्य दूत, स्वाधीन देश के शान्ति-घोष ?
तुम समर शक्ति के चारु स्वप्न, चालीस कोटि के महारोष॥
तुम रस के निर्झर महाप्राण, भारत माता के परम तोष।
तुम ममता के मंजुल प्रकाश, तुम मधुरामृत के सरस कोष॥
हम आज तुम्हारे देश-बन्धु, हम दीन, दुःखी, दुर्बल, अनाथ।
अपने ये निर्बल हाथ जोड़, कर रहे तुम्हें सादर प्रणाम॥

जिस दिन तुमने था बजा दिया वह स्वतन्त्रता का दिव्य शङ्ख।
भारत के आहत जीवन में उस दिन सहसा लग गये पङ्ख॥
थे जाग पड़े सुख के साधन, मिट गये भाग्य के दुष्ट अङ्क।
दासत्व गिरा खाकर पछाड़, वह देख तुम्हारी दृष्टि वङ्क॥
तुम अपनी माँ के वरद पुत्र, तुम त्याग-मूर्ति, योगी अकाम!
हम आज खड़े सब हाथ जोड़, स्वीकार करो सादर प्रणाम॥

ले आज करोड़ों की ज्वाला, ले आज करोड़ों की पुकार।
ले आज करोड़ों की आशा, ले आज करोड़ों के विचार॥
उमड़े तुम बल-बलिदान लिये, जागा जागृति का सुप्रसार।
यह भाग्य भरा पथ प्रगतिशील बन गया मनोरम निर्विकार॥
सर्वत्र तुम्हीं जन्मो, जागो, हे मानवेन्द्र, हे मुक्तकाम!
हम कोटि-कोटि स्वतंत्र पुरुप करते तुमको सादर प्रणाम॥

शांति का चाँद

—आजाद उम्रवी

शांति का चांद गल गया!
मेरी धरती का सूरज ढल गया!
सब ओर निपट अँधेरा है—
अब बारूदी गंध उड़ेगी।
चन्दन सुगन्ध नहीं मिलेगी।
रुक गया प्रगति का रथ—
सारथि रूठ गया है!
इतिहास-लेखक का क़लम अधूरे में ही टूट गया है!
तुम होते : युग भी जीवित रहता।
तुम कम के अध्याय थे!
गौरव के समुदाय थे!!
और भी सब कुछ—!

कितने ही मूक प्रश्न उभर कर आते हैं !
पर उत्तर में आँसू पाते हैं ! !

चुनौती

—देवेन्द्र कुमार शरण

एक के बाद एक……
फिर एक सूर्य का अस्त ।
कैसी यह अस्तता !
दिशाओं की व्यस्तता !
आँसुओं का प्लावन,
हरेक दिल का रह-रह कर फट जाना ।
गुलाब का मुर्झाना
गंगा की लहरों का घट जाना !
दुनियाँ का सारा अँधेरा—
इसी झोंपड़ी में सिमट आयेगा !
रे काल, बली ! बता—
पूर्व के सूर्योदय के बाद
भारत के कितने कालजयी सूर्यों को खायेगा ?

सूरज डूब गया

—लक्ष्मीनारायण 'शोभन'

यकीं नहीं होता है सच यह मेरे कानों को,
कैसे समझाऊँ मैं अपने पागल प्राणों को ?
कौन कह रहा, भरी दुपहरी सूरज डूब गया,
शायद कोई हिया तपन से ज्यादा ऊब गया !
कौन कह रहा—'अनहोनी भी होनी होती है' ?

और टूट गया माला का ही सुन्दर
कौन कह रहा—'गंगा-जमुना आज वि
सावन में भी प्यासी कोई कली चट
खिलने से पहिले ही कैसे पाटल मु
कौन साँस के बचपन में हो पतझर ले
मैं पतझर से कैसे मधु-ऋतु का शृंगा
कैसे मैं अपने अधरों पर ये अंगार
कोई ऐसा दर्द भला सह कैसे जी
अपने हाथों कोई कैसे विषघट पी

रो मत मेरे देश !

—अशोक जैन 'रश्मि'

रो मत मेरे देश, रहेगा अमर
लहराये जब तक कल-कल कर गंगा औ' य
परिलक्षित हो इस देश में स्वतन्त्रता की
भारत की नौका पर जब तक तना शा
रो मत मेरे देश, रहेगा अमर
जब तक हँसता रहे सलोना शशि-मुख
स्वतन्त्रता की महके सुरभि नित्यप्रति
जब तक भार
रो मत

विश्व भ
नयनों क

और टूट गया माला का ही सुन्दर मोती है !
कौन कह रहा—'गंगा-जमुना आज बिलखती हैं' ?
सावन में भी प्यासी कोई कली चटखती है !
खिलने से पहिले ही कैसे पाटल मुरझाया ?
कौन साँस के बचपन में हो पतझर ले आया ?
मैं पतझर से कैसे मधु-ऋतु का शृंगार करूँ ?
कैसे मैं अपने अधरों पर ये अंगार धरूँ ?
कोई ऐसा दर्द भला सह कैसे जी लेगा ?
अपने हाथों कोई कैसे विषघट पी लेगा ?

रो मत मेरे देश !

—अशोक जैन 'रश्मि'

रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल।
लहराये जब तक कल-कल कर गंगा औ' यमुना का पानी।
परिलक्षित हो इस देश में स्वतन्त्रता की अमर निशानी।।
भारत की नौका पर जब तक तना शान्ति का पाल।
रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल।।
जब तक हँसता रहे सलौना शशि-मुख नील गगन में।
स्वतन्त्रता की महके सुरभि नित्यप्रति मस्त पवन में।।
जब तक भारत का रहेगा शस्त्र अहिंसा ढाल।
रो मत मेरे देश, रहेगा अमर जवाहरलाल।।

वीर जवाहर

—शिवनारायण भटनागर 'साक़ी'

विश्व मन हरता
नयनों का तारा

पथ-प्रदर्शक
प्रिय जन-जन का

सिसकी भरती मातृ-भूमि
पंछी उड़ चला नीड़ से !
हिमालय रह गया अवाक्
देख कालिमा मन में !
कल-कल करती नदियाँ स्तब्ध
श्रवण कर

"छोड़ चला धरती को
भारत का वीर जवाहर"
कौन जाने
कब हों दर्शन
ऐसे महामानव के

कठिन साधना से

—सतीशकुमार अवस्थी

जब वर्षा के जौहर हृदय हिला देते हैं
भीम, भयावह गर्जन प्रलय बुला लेते हैं
व्याकुल अम्बर का उर पूर्ण शांति पाने को—
आकुल हो उठता, मधुर कांति पाने को
तब फिर तम की सीमाओं का स्वत्व मिटाकर
स्वर्ण-छटा से तिमिर-आवरित तत्व हटाकर
सतरंगी पलकों से चाप निहारा करता
जो कि गगन में सुन्दर रूप निखारा करता
शांतिपरक प्रिय इन्द्र-धनुष जब जब उगता है
सुमधुर, सरस, नवल सौंदर्य तभी जगता है
लगता है सुषमा आरती उतार रही हो
और अभ्र के उलझे केश सँवार रही हो
शांति-सुन्दरी आत्म-तुष्टि का प्रथम चरण है
आत्म-तोष का क्षण ही एक प्रबलतम क्षण है

यों ही वसुधा पर जब ज्वार जगा करते हैं
उर दहलाने को अंगार जगा करते हैं
इन्द्र-धनुष की प्रत्यंचा को तभी चढ़ाने
तथा शिवम् के आराधन हित कदम बढ़ाने
कोटि युग-पुरुष भू पर जन्म लिया करते हैं

सदा मनुजता को जो धन्य किया करते हैं
पर शांति-शिखर पर घी के दीप जला सकता जो
रोने की वेला में प्रति पल मुस्काता जो
मिल पाता है तीव्र कामना से वह अजर अमर
कठिन साधना से मिलता है एक जवाहर

त्यागमूर्ति वह जिन्दा है

—महेशचन्द्र मिश्र 'विधु'

खेतों में, खलिहानों में, बाग-बगीचे-लॉनों में,
नगर-नगर की डगर-डगर में, गाँव-गाँव में, हर गिरि वन में,
छाँव-छाँव में, दाँव-दाँव में, हर घर के कोने-कोने में,
श्रम-साहस में, क्रांति-शांति में, राष्ट्र-देवता के मंदिर में,
त्याग-मूर्ति वह जिन्दा हैं।

अमन-चमन में, महल-कुटी में, धरती-अम्बर दूर क्षितिज में
सूरज-चंदा औ' तारों में, गंगा-यमुना-सिंधु-ब्रह्म में,
प्रकृति-प्रिया कमला अलकों में, जन-गण-मंगल नत पलकों में,
विश्व-शांति के प्रहरी नेहरू! नन्हें-मुन्ने इन शिशुओं में,
युग-युग धरती पर जिन्दा हैं।

इस माटी के कण-कण में, सत्य-शांति के क्षण-क्षण में,
सभी दिशाओं के कोनों में, ऊसर-बंजर-मैदानों में,
नदियों-घाटी औ' झरनों में, इन गुलाब की पंखुड़ियों में,
पात-पात में, डाल-डाल में, सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् नेहरू
हर पल हर क्षण जिन्दा हैं।

देश-देश में, वेश-वेश में, रस्म-रीति में, प्रीति-प्रीति में,
ज्ञान-ध्यान में, साम गान में, वेद-बाइबिल औ' कुरान में,
मंदिर-मस्जिद औ' गिरजे में, जाति-पांति में, भेद-भाव में,
ऐक्य-संगठन की धारा में, सतत कर्म की पुण्य धरा पर,
भारत माँ में लाल जवाहर जिन्दा है।

राष्ट्र-संघ में, पंचशील में, युग-सृष्टा, दृष्टा युग-युग में,
विजललक्ष्मी की राखी में, प्रणय-मनुजता की साखी में,
हर फागुन में, हर सावन में, पुण्य-क्षेत्र संगम पावन में,
इसी त्रिवेणी की धारा में, युग-प्रमूर्ति युग की वाणी में,
अमर शाश्वत युग के प्रहरी मरकर भी सचमुच जिन्दा हैं
युग-युग धरती पर जिन्दा हैं।

जन-गण-मन-अधिनायक

—हिरण्यमय अमित

स्वप्न और समय के बीच
ईर्ष्यालु ईश्वर
अपनी आदत के बीज बो गया !
मई की निर्लज्ज दुपहरी
ज़माने की डायरी मे छुरी-सी घुसी
कुतुबमीनार की बूढ़ी आँखों पर खिंच गये कुहरे के पर्दे
कुहरे के पर्दों के इधर
खामोश हो गए महाघोष निर्झर के तट
निर्झर के तट पर लेते करवट
उठते-उगते आर्यावर्त के सूरज सुनते हैं
कल की तरह ही आज भी
महाघोष निर्झर के चिर-परिचित स्वर
स्वरों के शिविर में हर दिशा ज्योतिर्दिशा
न रहेगा तिमिर का नामोनिशाँ
घोषणा करता ज्योतिर्दिशा में पलता हर प्रहर
हर प्रहर कृतज्ञ तुम्हारा
जन-गण-मन-अधिनायक जय हे।

दीप निर्मम बुझ गया है

—अशोक रंजन सक्सेना

तुम निराशा की पटी पर लिख रहे थे,
गीत सुन्दर रागिनी मधु प्यार के।
तुम तिमिर की कालिमा से कह रहे थे,
मत करो मजबूर पथ लाचार के॥
अब डगर पर तुम न दोगे रोशनी, हूँ बे सहारा,
रास्तों का पथ-प्रदर्शक दीप निर्मम बुझ गया है !

तुम उठे औ' रात में चन्दा जगाया,
तुम चले पथ पर सूरज उतर आया।
किन्तु ऐसे चल दिये हो आज साथी,
शमशान-सी लगती गहन छाया॥
आज अपने ही गगन से टूटता है एक तारा,
नियति की निष्ठुर मृषा का एक संगम बन गया है !

तुम नहीं सोये, मूर्च्छना ही सो गयी है,
कल्पना थक कर अधर पर खो गयी है।
तुम न होते नाव शायद डूब जाती,
नयन क्या अब लेखनी भी रो रही है॥
एक गंगा ही नहीं, अब बह चली है अश्रुधारा,
आज उन्नति का शिखर फिर दूर दुर्गम हो गया है !

तुमको मेरा शत बार नमन

—गणेश 'चंचल'

तुमको मेरा शत बार नमन !
शान्त समाधि पर करता हूँ अर्पित भावों का शुभ्र सुमन !

तुम आये थे तूफान लिये, नवयुग का नव निर्माण लिये।
चालीस कोटि पुतलों का तुम अधिकार और सम्मान लिये॥

तुम चले गये, पर छले गये, कर राजनीति का तेजहरण !

भय-त्रस्त आज युग बार-बार, कर रहा पुनः व्याकुल पुकार ।
मर्यादाओं के अम्बर में फिर घिरता आता अन्धकार ।।
है विकल अबुध-सा पंचशील, संहारों का हो रहा सृजन !

तन रहा समस्या का वितान, उठ रहे प्रश्न हैं घमासान ।
जनता व्याकुल-सी खोज रही बढ़ती शंका का समाधान ।।
युग-पुरुष ! व्यथित कवि का अंतर कर उठता फिर फिर आवाहन!

आसमाँ रो रहा है

—प्रकाश डबराल

तेरी अर्थी उठी इस धरा से—
क्षितिज पर झुका आसमाँ रो रहा है !

तेरे दो चरण जब धरा पर खड़े थे !
करोड़ों चरण उस चरण तक चले थे !
कि युगचिन्ह जिनके बने आज तक—
वही दो चरण अब चले जा रहे हैं !!

करोड़ों की छाती में इक भार-सा है,
करोड़ों के मन में उठा ज्वार-सा है।
ये धरती सिसकते-सिसकते थकी है,
ये गंगा ये यमुना भी रोते थकी हैं ।।

तू उठ गया, ये माँ रो रही है,
ये बूढ़े, ये युवा, दुल्हन रो रही है।
बच्चों की छाती फटी जा रही है,
कि चाचा की अर्थी कहाँ जा रही है !!

दो संवेदना-चित्र

—अभिमन्यु त्रिवेदी

(१)

तुम केवल फातिहा मत पढ़ो
केवल रामधुन मत करो
अभी तो अधूरा चित्र बाकी है।
उठो, नयी तूलिका लो
उनके अधूरे चित्र को
(यदि तुम 'उनका' कहाने का अधिकार रखते हो—)
पूरा करो,
केवल आँसू मत बहाओ !

(२)

चौदह नवम्बर की फीकी सुबह
हमें सपरेटे के दूध-सी फीकी लगी
तुम्हारे बिना, ओ ! युग के प्रियदर्शी
अनगिनती नयन गुलाबों के तुम्हें खोजने लगे।
संकट के परिप्रेक्ष्य में याद हरी हो गई फिर
ओ ! सुराज के सृजेता।
शांति का कपोत
उस सुबह नीलाकाश में खोजने चला।
और लौट आया उदास
साँझ ढले, नीड़ पर !

कर में रह गई डोर कटी कनकैया !

—नन्दलाल दया 'अपूर्ण'

स्तब्ध रह गये पाँव धरा पर अनगिन प्राणों के,
दिल टूट पड़ा आजादी तरुवर का अकस्मात्।

दहल गया गंगा-यमुना का पानी अकुलाया,
फूट-फूट कर रोया अडिग हिमालय, जले गात ॥
कौन जानता पलक मिलाते, दीप बुझेगा।
ढल जाएगा रवि मही का, विश्वासन तक हिल जाएगा!

सुना जब आँखों देखा हाल, तड़फ कर मर गये,
बेहोश हो गये कितने ही, वसुधा थर्राई।
अंधड़ उठ दौड़ा व्याकुल हो, शोकाकुल अम्बर,
ढुलकाए आँसू धरती पर, अर्थी दुलराई ॥
कौन जानता आँख-मिचौनी खेल भगेगा
ढल जाएगा रवि मही का,विश्वासन तक हिल जाएगा!

बह गये वज्र-से हृदय पिघल, कब तार जुड़ेंगे,
दशों दिशाएँ झुकीं विश्व की, लुटा गले का हार!
अवरुद्ध कण्ठ खग-वन्दों के, कलियाँ मुरझाईं,
बालक, बूढ़ों, तरुणों तक ने प्राण दिये उपहार।
कौन जानता ! लाल जवाहर दुःख दे देगा,
ढल जाएगा रवि मही का,विश्वासन तक हिल जाएगा।

कर में रह गई डोर, कटी कनकैया !
कुछ भी बन नहीं पाया, रह गये हाथ मसलते।
निस्तेज हो गया अमलताश ! घर भर का आंगन,
नेहरू बिन, पल-पल परछाईं भाव छलकते।
कौन जानता तस्वीरों में रह जाएगा,
ढल जाएगा रवि मही का,विश्वासन तक हिल जाएगा !

निष्प्राण लगेंगे जब मेले अब शांतिघाट पर,
आये दिन रोएँगी लालकिले की दीवारें !
संसद का सूना राज-भवन संकेत करेगा,
प्रेरक बन, गर्वित हो गूँज उठेंगी मीनारें।
कौन जानता इतिहासों में अमर बनेगा,
ढल जाएगा रवि मही का,विश्वासन तक हिल जाएगा !

मोती के खजाने का जवाहर

—विष्णुराम सनावद्या 'सुमनाकर'

क्या लाल मोती के खजाने का जवाहर चल बसा ?
विश्वास नहीं होता कि दुनिया से जवाहर चल बसा !

जो पला वैभव की गोदी में निराली शान से।
पत्नी के मरने बाद भी जीवन बिताया ध्यान से।
काम करता ही रहा निशिदिन धरा पर शान से।
सभी देशों ने निहारा था उसे नित मान से ॥
उसकी विदाई देखकर ही हिल गई अचला रसा !

गरीबी को काटने की जो बड़ी तलवार था।
दीन दुखियों ने किया जिससे सदा ही प्यार था ॥
शान्ति की सरिता बहाने में बड़ा दिलदार था।
बाल-बच्चों की मोहब्बत का सदा सरदार था ॥
कष्ट को भी झेलकर अन्तिम समय तक जो हँसा !

प्यारा पिता वह इन्दिरा का, विश्व का प्यारा बना।
प्रेम बरसाता रहा, अब प्रेम की धारा बना ॥
संजय का सहारा सदा, अब विश्व सहारा बना।
'सुमनाकर' वह मार्ग-दर्शन में अब ध्रुवतारा बना ॥
हिन्द सारा रो रहा है, क्या कहें उसकी दशा ?

पं० नेहरू के प्रति

—अलकेश मिश्र 'कमल'

अभी अभी तो भारत माँ की शान में,
बात कर रहे थे पूरे अभिमान में।
क्षण पहले ही कहा—मरूँगा नहीं अभी,
शेष रहा है कुछ मेरे बलिदान में ॥

सब स्पष्टीकरण समझ से दूर हैं—
क्योंकि मौत के आगे हम मजबूर हैं ।।

वैसे मरना होता हर इन्सान को,
नहीं अमर कर पाया कोई जान को।
दस्तक भी तो नही मौत की हुई कहीं,
वरना रुकवा लेते हम मेहमान को ।।
इसीलिए दुःख के सागर भरपूर हैं,
आज मौत के हाथों हम मजबूर हैं ।।

आज घुटन-सी फैली हुई जहान में,
ताले लगे हुए हर एक जुबान में।
कैसे व्यक्त हो सके करुणा आज जब—
दुःख ही दुःख हो भरा हुआ इन्सान में ।।
दुःखद सूचना से दिल सबके चूर हैं—
और मौत के आगे हम मजबूर हैं ।।

बहुत रत्न हैं भारत माँ के गर्भ में,
एक बात कहनी है इस सन्दर्भ में।
नहीं जवाहर-सा कोई भी रत्न कहीं—
केवल भारत क्या, पूरे भूगर्भ में ।।
मात तुम्हारे आगे सब के नूर हैं,
किंतु मौत के आगे हम मजबूर हैं ।।

मकतल से चल दिए निराली शान से,
इतना तो कह देना तुम भगवान से।
जब धरती के लोग तुम्हें आवाज दें—
हँसते गाते आना नील वितान से ।।
वैसे नियति नटी के करतब क्रूर हैं—
तभी मौत के आगे हम मजबूर हैं ।।

दीप निर्वापित हुआ है

—अंशुमान शर्मा

दीप निर्वापित मनुजता का हुआ है
पंचशील, पुनीत पावन लोकतंत्री,
की उठी अर्थी, हिमालय रो रहा है।
कांपती धरती, गगन निष्प्राण-सा है,
राष्ट्र के झंडे झुके, दिनकर रुका है।
क्या गिरा है वज्र या अणुबम फटा है।
यह प्रलय प्लावन चला अम्बर घिरा है,
रो रहा है मेघ, तारे टूटते हैं।
कामना सौदामिनी-सी गल रही है,
हो मलय मारुत प्रभंजन बह रहा है।
अस्त भारत का भुवन भास्कर रुका है
यह न अर्थी नेहरू की, विश्व मैत्री की सजी है—
दीप निर्वापित न भारत का, मनुजता का हुआ है।

वज्रपात हो गया अचानक

—लक्ष्मीनारायण तिवारी 'अज्ञात'

अरे दैव, तूने जन-हृद पर, कहो किया क्यों यही प्रहार;
एक यशस्वी गया जगत से, नौका को छोड़ा मँझधार।
वज्रपात हो गया अचानक, दुःख का सागर लहराया;
राष्ट्र-खिवैया चला गया अब, उसको नया लोक भाया।
नहीं विदित था कर्णधार ही जगती से हट जायेगा;
स्वयं देश से मोह छोड़ कर, अन्य लोक ही भायेगा।
गया यशस्वी, पर जगती में चरण-चिह्न छोड़े अपने;
उन पर ही हम चल पायेंगे, ऐसे देख रहे सपने।
कर निर्माण देश का हम सब, कुछ उन्नति कर जायेंगे;
यशस्वी के हृदय-भाव ही, हर मानव को भायेंगे।

वह आदर्शवाद ही उसका यदि पूरा हो जायेगा;
राष्ट्र तभी उन्नति की चोटी पर ही तो चढ़ पायेगा।

शोक

—सोम रजनीश

शोक शोक हा! महाशोक, विधि का विधान न सके रोक।

उजड़ा सब प्यार दुलारों का, मर गया गुलाब बहारों का।
बच्चों का चाचा चला गया, वह भाग्य-विधाता चला गया॥
लुट गया नूर इन आँखों का, हम नेहरू को न सके रोक।

चलते चलते गतिहीन हुए, है बुद्धि किन्तु मतिहीन हुए।
कल का भविष्य अब क्या होगा, भारत की गति का अब क्या होगा!!
निर्माण रुका उत्थान रुका, सर्वत्र व्याप्त है महाशोक।

अन्धे की लकड़ी टूट गई, वीरों की हिम्मत छूट गई।
दीनों का पालक चला गया, किश्ती का चालक चला गया॥
हर लिया 'जवाहर' भारत का, यम की हस्ती न सके रोक।

नेहरू के प्रति प्यार रहेगा

—अमरनाथ मेहता 'नाज'

जब तक यह संसार रहेगा, शान्ति के संग प्यार रहेगा;
तब तक जन-जन के मानस में, नेहरू के प्रति प्यार रहेगा।

वह शान्ति-दूत बन गया अमर, जब भारत भू पर जन्म लिया।
वह स्वयं देव, खुद मानव बन, मानवता का उद्धार किया॥
वह पंचशील-निर्माता था, वह भारत-भाग्य-विधाता था।
बच्चे भी चाचा कहते थे, जब सच्चा उनसे नाता था॥

जब तक यही विचार रहेगा, मानव को अधिकार रहेगा—
तब तक जन-जन के मानस में, नेहरू के प्रति प्यार रहेगा ।।

जवाहर की शान निराली थी, दुनियाँ उसकी मतवाली थी ।
सब पूजा उसकी करते थे, इंगित पर उसके मरते थे ।।
जब तक यह आकार रहेगा, पृथ्वी का कुछ भार रहेगा—
तब तक जन-जन के मानस में, नेहरू के प्रति प्यार रहेगा ।।

आज हमारा भारत जो है, नेहरू का वरदान ।
आज विदेशी भी करते हैं, नेहरू का सम्मान ।।
नासिर टीटो और एंक्रूमा, नेहरू के थे मित्र ।
याद कभी आ जाते हैं वे भूले-बिसरे चित्र ।।

नेहरू का तो इस भारत पर सदा-सदा उपकार रहेगा ।
युग-युग तक जन के मानस में नेहरू के प्रति प्यार रहेगा ।।

श्रद्धांजलि के फूल

—रजनीप्रकाश लायद्र 'नीरज'

नीरवता छा गई, सुना जब दुःखद मृत्यु सन्देश ।
अब अनाथ-सा हो गया, मेरा भारत देश ।।

सौम्य, सरल, सुन्दर, सुखद, आकर्षक व्यवहार ।
कुशल प्रशासक राजनीति के, सफल, सरल आकार ।।

नीति विशारद, ज्ञान की सत्ता अमित अपार ।
कठिन कुटिल कटु कर्म पर ममता-रहित विचार ।।

महायोगि जिनके निकट हर पल ही सतरंग ।
हिंसक भावों का चढ़ा जिन पर लेश न रंग ।।

महापुरुष आजन्म ले साधन, साध्य-असाध्य ।
मानवता के मोल में हर क्षण केवल बाध्य ।।

सजग जिए आजन्म जो, नित नूतन ले ज्ञान ।
चरण-चिह्न पर चल रहा जिनके सकल जहान ।।

शांति-प्रेमी, नेमी, व्रती, योगी, करुणा-मूर्त्ति ।
आकस्मिक इस निधन की, होगी कैसे पूर्त्ति ।।
धारण करने योग्य है जिनके पद की धूल ।
अर्पित हैं उस देव को, श्रद्धांजलि के फूल ।।

जन्म लें इस भरत-भू पर फिर जवाहर

—रमेशचन्द्र त्रिवेदी 'पुष्प'

जन्म लें इस भरत-भू पर फिर जवाहर !

हे तपस्वी, त्यागमय जीवन तुम्हारा,
पूज्य बापू का मिला तुमको सहारा ।
बढ़ रहे थे राष्ट्र की नौका सम्हाले,
शान्ति के चिर दूत, दृढ़ कर्त्तव्य वाले ।।
धन्य है यह देश तुम-सा पुत्र पाकर ।

वार झंझावात के होते करारे,
किन्तु तुम थे राष्ट्र के दीपक हमारे ।
कर असम्भव को सदा सम्भव दिखाया,
औ' अडिग पग लक्ष्य-पथ पर था बढ़ाया ।।
वह जवाहर, वास्तव में था जवाहर ।

तुम गए कहाँ ?

—कमर मेवाड़ी

ओ राष्ट्र देवता !
तुम गए कहाँ ?
विश्व से नाता तोड़
भारत के जन-जन को
बीच राह में रोता छोड़ ।
किसे पता था
काल चक्र की कुटिल चाल का
अकस्मात् यह
कैसा प्रलयंकर तूफ़ान उठा
पाषाण शिलाएँ हिम को
जिसके क्रूर थपेड़ों से
टूट-टूट
आ गिरीं धरा पर !
दसों दिगंचल काँप उठे

क्योंकि   दुःख में—सुख में साथी सबके
तुम्हीं एक थे
अब कौन सुनेगा उनके दुःख की गाथा—
जिन्हें तुम्हारा स्नेह दुलार सदैव मिला था।

युग रीत गया

गोपालकृष्ण गौड़ 'सुधाकर'

मेरे जीवन, मेरी मनुहारों के रक्षक,
विश्वास नहीं होता
तेरे जाने पर बादल बरसा, बिजली चमकी !
बालक रोया, वृद्धा बिलखी !
युवकों की टोली भी सिसक पड़ी !
युगपुरुष ! शान्ति स्रष्टा !
तेरे जाने से युग रीता,
आलोक गया, तम छाया !
ओ शान्ति दूत !
कपोती सिर धर सिसक रही,
गुलाब में पीलापन आया है।
ओ अमृत्य ! माँ के सपूत !!
तुझको कैसी श्रद्धांजलि दूँ—
विचार पिरोयी भावांजलि दूँ,
या मुर्झाये गुलाब की पुष्पांजलि दूँ !

युग-युग अमर जवाहरलाल !

—भोलाप्रसाद सिंह 'अशान्त'

जीवन था मौत के घेरे में, था फर्क न साँझ-सवेरे में।
तब चमके गहन अँधेरे में, तुम जीवन को बना मशाल !

राज-पाट और राजमहल, रंग-रूप का ताजमहल।
त्यागे सब सुख चहल-पहल, तुम दीन-हीन दुखियों के लाल !

संगीनों-तलवारों से, न डरे कभी अंगारों से।
ऊँचे चाँद-सितारों से, तुम भारत के भाल विशाल !

गिरजा औ' गुरुद्वारों के, मंदिर-मस्जिद मीनारों के।
करोड़ों और हजारों के, तुम बनकर आये थे ढ़ाल !
युग-युग अमर जवाहरलाल ! !

धरती के सूरज की अर्थी

—रमेशचन्द्र शुक्ल

धरती के सूरज की अर्थी निकली थी जब पास से।
चन्दा रोया तारे रोये रह-रह तब आकाश से ।।

राम राज्य के सारे सपने बिखर गये,
देश हमारा तूफ़ानों से ग्रस्त हुआ।
पंचशील के रथ का पहिया आज धँस गया धरती में,
आज कुतुबमीनार हमारा ध्वस्त हुआ।
आज लड़खड़ा पड़ा हमारा ताजमहल
आज देश का सूरज दिन में अस्त हुआ ।।
आज एक युग खत्म हो गया है अपने इतिहास से !

अभी हमारी आजादी खतरे में है
कहाँ चले तुम स्वतत्रता के सेनानी।
सिसक रहीं घायल स्वदेश की सीमायें,
अभी हिमालय की आँखों से बहता है अविरल पानी।
आज युद्ध के काले बादल अभी क्षितिज पर छाये हैं,
अभी चाहिए हमें तुम्हारा त्याग, तुम्हारी कुरबानी ।।
अपनी फिर हुंकार सुना दो राष्ट्र को—
लालकिले की सहमी सहमी साँस से !

गंगा यमुना तुम्हें बुलातीं, संगम तुम्हें पुकार रहा,
देश आज खतरे में जिससे तुम्हे हमेशा प्यार रहा।
बिखरी पड़ीं तुम्हारी देखो हैं गुलाब की पंखुड़ियाँ,
काश्मीर को आज छीनने शत्रु हमें ललकार रहा ॥
आज हमारी बगिया को पतझड़ ने आकर घेर लिया—
लगते हैं हर फूल यहाँ के दुखिया और उदास से !

लौटो लौटो, तुम्हें मृत्यु का वरण नहीं करने देंगे,
यह देश जब तलक जिन्दा है हम तुम्हें नहीं मरने देंगे।
लौटा दो आकर तुम हमको गौतम-गान्धी-परम्परा,
तुमको खोकर हो गई आज सचमुच निर्धन यह वसुन्धरा ॥
फिर वापिस तुम्हें बुलाते हैं हम स्नेह और विश्वास से !

हर दिल का बादशाह

—वीरेन्द्रकुमार शर्मा

पिघला है दर्द दिल का इन काले अक्षरों में,
अक्षर की चमक को कहीं स्याही न समझना !
इस चमक में छिपे हैं आँसू ग़रीब के !!

ख्याली महल में बैठ मैं कुछ सोच रहा था
मदहोश व बेहोश ख्यालों में कोई आया।
मदहोशी में ही बढ़ गईं बेचैनियाँ मगर,
मजबूर हो उठना ही पड़ा नींद तोड़कर ॥

सुनते ही मन्द हो गईं इस दिल की धड़कनें,
जब ये सुना कि अब नहीं नेहरू रहा इधर।
माली न देखकर मैं चमन छोड़ने को था,
कुछ समझ नहीं आया वो मिलेगा अब किधर ॥

यह करने वाले के खिलाफ़ करते भी क्या हम,
शिकवा था सबको उससे जिसने ये ग़म दिया।
इस बात से जहाँ के सब लोग वाकिफ़ थे,
यह करने वाले ने बहुत ही जुल्म है किया ॥

चेहरों की रंगत छीनकर तुझको क्या मिल गया,
इस महकते चमन की महक जलाने वाले।
हमको नहीं मंजूर हैं ये चार दिन की खुशियाँ,
फिर भेजता ही क्यों है, वापिस बुलाने वाले ।।

जख्मों का धूँआ आसमाँ को कोस रहा था,
कि क्या किया ए मालिक बरबाद करने वाले।
वाकिफ़ तो नहीं थे तेरी बेरहमियों से हम,
कुछ तो रहम कर शाद से नाशाद करने वाले ।।

वो दिन भी आ गया जब जिस्म राख हो गया,
मालिक दिलों का जब जहाँ से दूर खो गया।
पर दिल के मंदिर का अभी तक वो ही मालिक है,
हमको जगाकर जो सदा की नींद सो गया ।।

जब जा रही थीं अस्थियाँ महबूब की मेरे,
गगा बनी थी बस्तियाँ महबूब की मेरे।
वो गंगा आँसुओं की थी धीमी रुकी हुई,
हर गाल पे आँसू थे नजरें थीं झुकी हुई ।।

राहों में गिर सितारे कद कद बिखर रहे थे,
मुरझा गये वो चेहरे जो निखर रहे थे।
महबूब मेरा नेहरू पडित जवाहरलाल था,
हर दिल का बादशाह, वो सुर्खी गुलाल था ।।

दीप-निर्वाण

—विजेन्द्रलाल 'अनिल'

दिल में है दर्द भरा, आँखों में पानी
बेमौसम ही नभ में बिजली कौंध गई,
जाकर मँझधारा में नौका औंध गई।
दिन के उजियाले में आँखों में धूल डाल,
छीन लिया विधना ने वह अनमोल लाल ।।

क्षण भर में आँखों से ओझल हो गया,
शान्ति-सहअस्तित्व का अद्भुत अभिमानी !
लगता है बदली में चन्दा हो खोया,
लगता दोपहरी में सूरज ज्यों सोया।
अलवेली बगिया का अलवेला बुलबुल,
व्याधा की गलती से घायल हो रोया ॥
झंझा के झोंकों ने अनजाने लूट लिया,
मानवता - मंगल का दीपक वरदानी !
पाटल की पंखुड़ियों में वह मुस्कान कहाँ ?
भौंरों के गुंजन में अब वह गान कहाँ ?
संगम की सतरंगी लहरों के नर्तन में—
पीड़ा है, ज्वाला है, अब वह आह्वान कहाँ ?
शोकाकुल अन्तर है धरती औ' अम्बर का,
रोती है जनता, क्या मूरख क्या ज्ञानी !

नेहरू जी के प्रति

—रामचन्द्र वर्मा

बादलों से ढँकी
यह ऊँची गिरि-चोटी
मुझे तुम्हारी याद दिला देती है
तुम—जो सघन संकटों में
गहरी पीड़ाओं में
कभी झुके नहीं, कहीं रुके नहीं।
संघर्षों ने तुम्हें दीनता नहीं दी
तुम्हारा अन्तर्मन
कभी धुंधुआया नहीं,
विकारों की म्लान कज्जल रेखा
कभी पड़ी नहीं
तुम्हारे वैभव की छाँह,
सबको उन्मुक्त दान करती रही
रस सिक्त होकर
भींगती रही मही।
ऐसे थे तुम।
इस निर्जन में
यह टेढ़ी-मेढ़ी बहती सरिता
सामने शस्य श्यामल कांतार का
फैला हुआ अंचल
और इन सबसे दूर
अपने अस्तित्व से

इन्हें घेरने वाला
वह उच्च शिखर।
मेघ-खंडों ने उसे
कुछ और सौन्दर्य दे डाला है,
बार बार दृष्टि
उससे ही जा टकराती है

और रह-रह कर तुम्हारी याद
आ जाती है।
सचमुच
तुम अपनी पूर्णता में
इस गिरि-शृङ्ग-से
उच्च और महान् थे।

पूजा का थाल खो गया !

— शिवशरण अवस्थी 'पंगु'

भारत माता की गोदी का वीर जवाहरलाल खो गया।
आराधना करूँ तो कैसे, जब पूजा का थाल खो गया।
सत्ताइस भारत मंत्री-पद मई दे गई करुणा जल।
दिल्ली राजघाट यमुना तट चिता जल उठी मचल-मचल।
रोने लगा किनारा गुमसुम, कल-कल करती धार अमल।
फिर न कभी लौटेगा जाने वाला छलकर गया निकल।
जग रो उठा शान्ति यात्रा में जैसे सारा माल खो गया !···
राजनीति का पंडित नेहरू तटस्थता का बन कायल।
छोड़ गया आदर्श अनूठे, शान्ति नीति से कर घायल।
जिनकी हृदतंत्री पर गूँजी सदा अहिंसा की पायल।
सह अस्तित्व नीति से जिनकी मान्य विश्व में इज़राइल।
शान्ति-कपोत उड़ाने वाले बहेलिये का जाल खो गया !
हे युग पुरुष ! तुम्हारी स्मृति इतिहासों से ऊँची है।
दूरदर्शिता भरी जिन्दगी विश्वासों से ऊँची है।
शान्ति उपासक ! तेरी रचना आकाशों से ऊँची है।
जननायक ! साधना तुम्हारी उपवासों से ऊँची है।
अख़बारों के पृष्ठ ढूँढ़ते, टोपी वाला भाल खो गया !

हे भारत के प्रारब्ध पुरुष

जनार्दन पांडेय 'विप्र'

हे भारत के प्रारब्ध पुरुष
थे युग-द्रष्टा, अभिनव पंथों के स्रष्टा
गरिमामय भारत-भूमि के पीन, पुरुष पुंगव
शत बार नमन तुमको।
थे धैर्य, तेज, साहस, शक्ति के अधिकारी,
मानवता के परम पुजारी
प्राणवन्त चिन्तक
अभाव, दैन्य, वैषम्य, ग़रीबी के उन्मूलनरत साधक
सनातन शान्ति के थे अग्रदूत,
लिप्सा, ईर्ष्या से रह अछूत
युग चला तुम्हारे वचनों पर, नत हुई तुम्हीं से दानवता,
जग कटुता के थे उत्कीर्णक
देश-सेवा में सर्वोपरि,
मोती से बढ़कर लाल हुए!
जन-जन के मन, नव-जीवन के उद्गाता
तुम थे भारत-भाग्य-विधाता ;

कौन कहता है जवाहर है नहीं

—जगदीशशरण 'मधुप'

कौन कहता है धरा पर अब जवाहर है नहीं ?
कौन-सा ऐसा जहाँ, जिसमें जवाहर है नहीं ?
हर दिशा उस दूत की है शांति का दर्पण बनी—
हर सुनहरी रात उसकी अर्चना-अर्पण बनी ॥
व्योम में उसकी प्रभा अब सूर्य से जा मिल रही।
वायु में वह प्राण वायु आज सहसा घुल रही ॥
हर उदधि में नीर बनकर वह समाया।
इस धरा का कण उसी की है सुकाया ॥

पृष्ठ गीता का बना वह कर्मयोगी।
इन्दिरा है देश की अब भी वियोगी!
हर सुमन है गंध उसकी, हर 'मधुप' मृदुतार है।
हर नयन उसका गुलाबी, आत्मा साकार है!!

हे युग के श्रेष्ठ अमर नेता

—श्रीनिवास प्रसाद

तुम भारत माँ के दिव्य भाल, मोती के लाल जवाहर थे।
तुम रहे स्वरूपा-प्राण रूप, जनता के हित नर-नाहर थे॥
है खोज रहा जग आज तुम्हें, व्याकुल भयार्त्त उर पीर लिये।
माँ धरती तुमको खोज रही, आँखों में अश्रु नीर लिये॥
इस पीढ़ी के महान् मानव, जग-स्वतंत्रता के पोपक थे।
मानवता के द्रष्टा-स्रष्टा, शोषित-शासित के तोषक थे॥
अधिकारों के जाग्रत प्रहरी, निज मूक देश की भाषा थे।
जग के संघर्षावर्त्तों की तुम उज्ज्वलतर ध्रुव आशा थे॥
श्रद्धाञ्जलि तुमको अर्पित है, जन-नेता अंगीकार करो।
हे युग के श्रेष्ठ अमर नेता, सबका प्रणाम स्वीकार करो॥

नेहरू जी की कामना-कली

—रामसेवक 'विकल'

थी कली गुलाब की, हसीं थी, बेहतरीन थी।
किसी की याद में पली, किसी के प्यार की कली!
थी कण्टकों पै झूमती, थी टहनियों को चूमती।
किसी के इन्तजार में, भविष्य की बहार में।
मचल रही, लचक रहीं, चमन में नाज़ कर रही!

भ्रमर भी था ललच रहा, वहार हित मचल रहा।
थीं तितलियाँ भी नाचतीं, औ' चूमकर सँवारतीं।
खुशी का दिन जो आयेगा, तो निखार लायेगा।
मगर जो बाग़वाँ था एक, चला गया, रहा नहीं।
चला गया, मगर कली की कामना बिखर गई है देश में!
वतन के कोर-कोर में, दिशा के छोर-छोर में—
है गूँजती आवाज़ यह, कामना दवी नहीं।
खिलेगी ले सुगन्ध वह, जहाँ को गमगमायेगी।

जनता के हृदय-सम्राट्

—सनत्कुमार मीतल 'संत'

वस्त्र पुराने तजकर ज्यों नर नूतन धारण करता है।
त्यों हो कर शरीर परिवर्तन, आत्मा कभी न मरता है॥
जीवित नहीं जवाहर तो भी दिव्य-ज्योति वन रहते हैं।
नाम अमर कर गए सदा को, सभी लोग यह कहते हैं॥
थे वे महाविभूति विश्व की, सदा सत्यव्रत को धारे।
जन-समाज के हृदय-विजेता, बच्चों के चाचा प्यारे॥
सदा राष्ट्र के हेतु जिए वे, प्राणों का वलिदान किया।
तजकर निज सुख-स्वार्थ उन्होंने भारत का उत्थान किया॥
राष्ट्र-एकता दृढ़ करने का उनने अथक प्रयास किया।
भारत को समृद्ध करने में अपना सब कुछ वार दिया॥
देश देश में जाकर उनने भारत-मान वढ़ाया था।
दया अहिंसा सत्य धर्म का अनुपम पाठ पढ़ाया था॥
पंचशील के उस साधक के जगती गुण-गण गाती है।
उनके दुसह वियोग-दुःख में जनता अश्रु बहाती है॥
उन नेहरू के चरण युगल पर श्रद्धा-पुष्प चढ़ायें हम।
उनके आदर्शों पर चलकर राष्ट्र-भविष्य बनायें हम॥

वीर जवाहरलाल

—तुलसीराम शर्मा 'दिनेश'

अस्तोदय तक है बिछा, जिसका जाल कराल।
ली उससे मुठभेड़, तू धन्य जवाहरलाल!!
उसकी तोपें उगलतीं, लपटें विषम कराल।
तेरी वाणी बरसती सुधा, जवाहरलाल!!
वह दुर्गों में बैठकर, है चिन्तित भयभीत।
तूने जनता के दुर्ग बस, किया उसे अभीत॥
तेरे जीवन-पल हुए उसको उपल-समान।
हमको उत्पल हो गये, वीर जवाहरलाल!!
सुनकर तेरी गर्जना, थर्राया गजराज!
काल भासता था उसे, तेरा हर अन्दाज!!
तेरा स्वाभाविक गमन, वीर जवाहरलाल!
उस मदगल मातंग को, कम्पाता प्रति काल॥
तूने रौंदा विपिन यह, सूना समझ नितांत।
गज, टुक टिक, अँगड़ा रहा जवाहर कानन-कांत!!

नेहरू की पाती : बच्चों के नाम

—रमेश 'हुड़दंग'

प्राण प्रिय बालको, भावी भारत के संचालको!
लगभग हो गए दो वर्ष जब मैं विदेह हुआ,
किन्तु याद आता है वह दिन—
जब मैं चाचा कहलाता था!
किन्तु सुनकर यह बहुत दुःख हुआ मुझे
कि पावन शान्ति पर किसी ने मैली नज़र गिराई है
पंचशील को विछिन्न करने शत्रु-दृष्टि ललचाई है
तरुवर-सी बढ़ रही मँहगाई है

पतझड़-सी झड़ रही तरुणाई है !
लचक गई कड़ी एकता की,
समता में विषमता छाई है।
चहुंदिशि से विपदा के बादल घिर आये हैं
फूल-सी कोमल जवानी पर परदेशो ललचाये हैं।
ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य पर कोहरा छाया है।
ज्ञान, विज्ञान, शील, पंचशील, शक्ति, विश्वास
प्रेम और विकास का जर्रा जर्रा घबराया है।
अतः हे बालको, सत्य अहिंसा पालको !
इससे न होना भयभीत
संघर्ष ही जीवन है, पौरुष इसका मीत !
दिखा दो तुम विश्व को—
मुख शेरों के किसने धोये हैं !
संकल्प अटल लेकर बढ़े चलो
निर्माण पथ पर, प्रगति शिखर पर– डरो नहीं, बढ़े चलो !
समय परीक्षा का है,
जो उत्तरदायित्व तुम्हें सौंपा है—
उसकी आग में कहाँ तक तुम खरा सोना हो !
तुम फलो-फूलो,
राष्ट्र-हित मौत से गले मिलो
यही मेरी मंगल-कामना है !

विश्व-नाहर सो गया

—नन्दकिशोर वर्मा

अपने युग का अन्त कर विश्व-नाहर सो गया !
ओ अभागे हिन्द, तुझसे जवाहर खो गया !!
हँसते फूल मुरझाये, पत्थर द्रवित हुए !
महाप्रयाण देखते जनगण रुदित हुए ।।

आंधियाँ उमड़ पड़ीं, शेष कंपित हो गया।
शोकाकुल पर्वतराज हिमनद से रो गया॥
राहु-सा ग्रसित सूर्य तेजहीन हो गया!

जननायक गये कहाँ, धरती व्यथा पुकार उठी!
विजय पा बर्बरता पर कालगति से हुई हार!!
ज्वार सिंधु में उठ रहे, नाव छोड़ चला गया।
मुक्ति पाया पंछी-सा कहाँ उड़ चला गया!!
वरद हस्त अपना हटा, शांति-मन्त्र दे गया।

अवलंबन निर्बलों का था, शोषितों का रक्षक।
पंचशील स्थापित कर शांति रखी अंत तक॥
भार सम्हाल प्रजातन्त्र, नव पथ चलाने वाला।
पान कर विष, जाति-भेद-द्वेष मिटाने वाला॥
पथ-आलोक अनुपम दे, नेत्र-ज्योति ले गया!

जीवन पर बिजली टूट पड़ी

—मलय रंजन गोयल

चाचा जीवन के गायक थे, हंसते वसन्त के नायक थे।
विपदाओं में हँसे बढ़े थे, जन जन के भाग्य विधायक थे॥
सहसा क्रूर काल ने उनको जब हमसे चुपके छीन लिया।
डूब गया सूरज भारत का, हर बालक हाय अनाथ हुआ॥
जीवन पर बिजली टूट पड़ी, वह प्रकाश-पुंज था अस्त हुआ।
दुर्दिन में भगवन कैसा यह वज्रपात अन्धकार हुआ॥
उनके जीवन की पुस्तक अब हमको धैर्य बँधाती है।
हर क्षण बस श्रमरत रहने का, नित नूतन पाठ पढ़ाती है॥

भारत की यह तसवीर नई, उनके सपनों का भारत है।
बालक बूढ़े युवक सभी जन, जड़-चेतन श्रद्धा-नत है॥
इस बेला में हम बालकगण, सचमुच में दुःख से पूरित हैं।
नन्हें कन्धों पर देश-भार को सह सकने में न समर्थ हैं॥
चाचा जाओ पर कभी न हम तुमको अब विसरा पायेंगे।
अपने श्रम बल से भारत में घर घर को स्वर्ग बनायेंगे॥

स्वर्ग लोक से चाचा लिखना हमको बढ़िया-बढ़िया पाती।
हम सब प्रकाश बिखेर रहे हैं, जलकर ज्यों दीपक की बाती॥

भ्रमित मन

—सुरेन्द्रनाथ तिवारी 'मधुर'

आज प्रकृति की प्रथम मुस्कान संग
सूर्य की प्रथम रश्मि ने गृह में प्रवेश किया
मेरे अंगों को स्पर्श किया,
घूंघट की ओट से जब प्रकृति मुस्काई थी
तब सहसा एक स्मृति से मेरा मन आलोड़ित हो गया
लगा कि उषा के संग-संग बादल की ओट से
नेहरू—तुम मुस्काये थे
और अब लगता है सत्य,
सिर्फ तुम हो !
यह उषा, प्रकृति, दुपहरी का तपता सूर्य
सब मिथ्या है—भ्रम है !
पर तुम—हाँ तुमने
संध्या की अंतिम झांकी-सी मेरे हिय-प्रदेश को
सुरभित—प्रफुल्लित कर
विदा ले ली सदा के लिए इस धरा से औ' मुझसे !
पर स्मृति बादलों के उस पार
अनजाने पहुंच जाती है
शेष रहता यहाँ यह घना अँधेरा औ' जड़ प्रकृति।
पर प्रथम रश्मि के बाद लगता है सब सच है
यह धरा, प्रकृति और गगन !
मिथ्या और भ्रम—
तुम, सिर्फ तुम हो !

जय युग-पुरुष जवाहर

—सियाराम सिन्हा

पीड़ित मनुजता का नेता जवाहर तू था,
गांडीव-पार्थ-धनु का भीषण टंकार तू था।
अघ-अनल में दहकता संसार तप्त होकर—
तब नवल मेघ बन कर देता फुहार तू था॥
जब क्षुधित-त्रसित जनता मन में बिलख रही थी,
बन विप्लवी जगत में भरता फुंकार तू था।
अन्यायियों ने चन्दन को खूब ज़ोर रगड़ा,
तब लाल लपट प्रकटी, जलता अंगार तू था॥
स्वतन्त्रता समर का सेनानी सफल बन कर,
सत-पथ बताने वाला सिपहसालार तू था।
सदियों की दासता की जंजीर तोड़ फेंकी,
भारत-स्वराष्ट्र नैया का कर्णधार तू था॥
तेरे अथक परिश्रम से हिन्द बढ़ रहा है,
वसुधा कुटुम्ब औषधि करता व्यवहार तू था।
मानव ही दानवों का जब रूप ले रहे थे,
तब सत्य-अहिंसा का करता प्रचार तू था॥
तू प्रेम-सुधा सारी दुनिया को पिला करके,
देता था प्यार जग को, भूतल का प्यार तू था॥
निर्माण योजनाएँ करके नई नई नित्य,
रथ-राष्ट्र-प्रगति-पथ का बस सूत्रधार तू था।
लोहा विदेश नीति का ये विश्व मानता है,
विज्ञान-कला-प्रेमी जग का जवाहर तू था।
सारे जगत को शीतल संदेश देने वाला,
बापू के शान्ति पथ का सच्चा मुसाफिर तू था॥
मानव महान, तुझको कवि नमस्कार करता,
जय युग-पुरुष जवाहर करुणावतार तू था!

चल पड़ा इतिहास तेरे साथ

—विजयवीर त्यागी

ओ विदेही लोक-नायक, आज तेरे साथ,
चल पड़ा इतिहास श्रद्धा से झुका कर माथ।
प्रेरणा तेरी नये संकल्प गढ़ती जायेगी,
हर सदी के साथ तेरी आयु बढ़ती जायेगी ॥

तोड़कर सारी शरीरी शृंखलाएँ,
देश की रज में विसर्जित हो गए हो।
जन्म कोटिश रूप में लो, इसलिए ही,
आज कण-कण को समर्पित हो गए हो ॥
'फूल' संगम में प्रवाहित हो गए पर,
गंध जन जन में समाहित हो गई है।
ओ जवाहर लाल तेरी तेज राशि,
आगता युग तक प्रवाहित हो गई है ॥
भारती का भाल ऊंचा है तुम्हीं से,
और श्रद्धा का विनत उपमान हो तुम।
साक्षी है भाखड़ा, नाँगल, भिलाई,
जो कहानी लिख गए निर्माण की तुम।

वह सृजन का इक नया इतिहास गढ़ती जायेगी।
हर सदी के साथ तेरी आयु बढ़ती जायेगी ॥

सूरज डूब गया है !

—हीरालाल जायसवाल 'हीरा'

सूरज डब गया है !
भरी दोपहरी में साँझ घिर आई है !
अँधेरा गहरा होता जा रहा है
हमारा कारवाँ अपने गन्तव्य से भटक गया है
समस्याओं की गहरी गहरी खाइयाँ
उलझनों की ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ
संकटों के कटीले वन—सभी कुछ सामने है

उलझनों की गाँठें सुलझी नहीं
और भी उलझती जा रही हैं
हम सभी अपनी-अपनी मशालें लेकर पथ खोज रहे हैं
इस भयानक अँधेरे में हमारा ये कारवाँ
स्वार्थ, भ्रष्टाचार के महारोग से पीड़ित है ! बीमार है !
हम सभी बँट गये हैं वर्गों में
वर्गों में नये वर्ग जन्म ले रहे हैं
एकता दम तोड़ रही है
राष्ट्रीयता का टिमटिमाता दिया
प्रकाशहीन होता जा रहा है
किन्तु सूरज के पद्-चिह्न अब भी शेष हैं
यदि हम अपनी-अपनी मशालों को एकता में बाँध लें
एक विशाल प्रकाश पुंज बना लें
तभी हम अपने सूरज के पद्चिह्नों को देख सकेंगे
अपनी मंजिल तय कर सकेंगे
नये सूरज के जन्म लेने तक
यही तो हमारा कर्त्तव्य है !

———

जवाहर-पुष्प

—डॉ० हरसेवक पाण्डेय 'कमल'

गुलाब के फूलों को तुमने जवाहर-पुष्प की संज्ञा दी है !
गुलाब के फूल ने काँटों-सी चुभन, याद को गंगा दी है !!
जवाहर की अचकन में गुलाब के फूल की क्या शोभा थी !
चाँदी-से दिन तो सोने-सी रातें, गुलाब के फूल ने देखी-सुनी हैं।
अमेरिका, ब्रिटेन, चीन, जापान, रूस की,
गुलाब के फूल ने यात्रायें की हैं ॥
चीन और पाक के मसलों पर,
रात-रात भर शान्ति के पुजारी ने समस्याओं का हल ढूँढ़ा था।
गुलाब की कलियों की तरह खिलने वाले शान्ति के मसीहा ने,
'आराम हराम है' का नारा ढूँढ़ा था !
बीस घंटे का दिन और चार घंटे की जिसने रातें जानीं,

देश की समस्याओं के लिये, अंतिम समय तक लड़ता रहा।
वीर जवाहर गजब का सेनानी!
शान्तिघाट पर आज उसकी समाधि से
जैसे विश्वास नया मिलता है।
ऐसा लगता है—आशा निराशा के बादल छटेंगे।
जवाहर-ज्योति जो हमने जलाई है
उसे हमने मुहब्बत, नेह की संज्ञा दी है।
गुलाब के फूल ने कांटों-सी चुभन, याद की गंगा दी है!!

लौटो इस धरती पर फिर से

—हरीकृष्ण दुबे

माना तुमने भारत माँ के जकड़े बन्धन काट दिये,
ऊँच-नीच औ' भेद भाव के खाई-खंदक पाट दिये।
निवटा कर गोआ का मसला, अन्तिम गोरे छांट दिये,
खारी सागर पीकर तुमने, सुख के मोती बाँट दिये॥
किन्तु, समस्या काश्मीर की अभी तुम्हें निवटानी है,
उत्तर को सरहद तिब्बत तक आकर तुम्हें बढ़ानी है।
वह चाणक्यी दाँव जवाहर, आकर तुम्हें चलाना है;
गोरों की करतूत—पाक को, आकर तुम्हें मिटाना है!!
अभी पड़ा इतिहास अधूरा गांधी के अरमानों का,
अभी पड़ा इतिहास अधूरा, स्वतन्त्रता दीवानों का।
अभी पड़ा इतिहास अधूरा, नवयुग के निर्माणों का,
अभी पड़ा इतिहास अधूरा, मानवता के प्राणों का॥

ओ दिव्य पुरुष शतशः प्रणाम

—केशवदेव शास्त्री 'केशव'

प्रतिभा-मानव, हे शान्तिदूत, नर-नायक नेहरू ज्योति-धाम।
ओ दिव्य पुरुष शतशः प्रणाम॥

तुम प्रभा-पुंज नेता नायक, अवतारी वीर बहादुर थे।
तुम 'मोती' के माणिक्य मणि, जाज्वल्यमान नर-नाहर थे॥

तुम सत्य 'स्वरूपा' के सपूत, 'कमला' सहचरी तुम्हारी थी।
'विजया-कृष्णा' भी सहोदरा, 'इन्दिरा' आत्मजा प्यारी थी।।
आनन्द-भवन के दिव्य दीप, संगम थल के सुखवर ललाम!

तुम मेधावी, युग महापुरुष, जन-सेवक भारत-निर्माता।
तुम-सत्य अहिंसा प्रतिपादक, बापू की शांति-क्रान्ति दाता।।
बढ़ रहा युद्ध का दावानल, तुमने ही देव! दबाया था।
पूरब पश्चिम का कठिन मिलन, प्रतिभा से ही हो पाया था।।
तुम पूर्ण समाजवाद-स्रष्टा, उसके हित तुमने किया काम।

जब गये दूर, हिल उठी धरा, विद्युत फड़की, नभ डोल उठा।
तूफ़ानी गति ले वायु चली, रिमझिम वर्षा का जोर उठा।।
व्याकुल दुनियाँ के सकल जीव, वह विश्व-सितारा चला गया।
बुझ गया दीप प्राची दिशि में, तारक आया वह चला गया।।
जीवन की ज्योति विमल छिटकी, तुम नहीं रहे पर अमर नाम।

ओ महापुरुष! तेरा संदेश, जागृति नूतन जग लाता है।
"जीवन उसका ही सत्य जगत, जनहित में प्राण लुटाता है।।
युग में आई आजादी नव, उसका वैभव दिखलाना है।
सुख, शान्ति, समृद्धि घर घर में लाकर यह देश उठाना है।।"
तुम लक्ष्य हेतु नित निरत रहे, ओ महापुरुष, हे प्रभा-धाम।

शान्ति का पुजारी

—भैरवनाथ ओझा

लाल भारत का जवाहर आज जग से चल बसा।
हिन्द की नौका पड़ी मँझधार, माँझी चल बसा।।
था किया एलान घर-घर घूम सारे देश में।
ब्रिटिश-शासन दूर कर, लाओ स्वराज्य स्वदेश में।।
उपनिवेश विदेश का यह हिन्द रह सकता नहीं।
टिक सकेगा पोर्तुगाल न फ्रांस का स्वामित्व ही।।
दूर फेंक दरिद्रता, सामन्तशाही नाश कर।
राज्य सब देशी मिला, सम्पूर्ण भारत एक कर।।
दुष्ट पूँजीवादियों की थी मिटा दी दुष्टता।
धर्म-भाषा-प्रान्त-वर्णों की मिटी विभिन्नता।।

सर्वधर्मी विश्व के हैं एक, नेहरू ने कहा।
किन्तु असमय हाय ! जग से आज वह जाता रहा ।।
शांति का अनुपम पुजारी आज जग से दूर है।
विश्व-राष्ट्रों की सभा चिन्तित दुःखी भरपूर है ।।
लाल तेरी लालिमा में हिन्द बढ़ता जायेगा।
याद में तेरी सदा कवि-दल अमर गुण गायेगा ।।
सूर्य-शशि-उड़ुगण गगन में, भूमि पर हिमवान है।
विश्व में तब तक जवाहर का सदा गुणगान है ।।

जन जन करता तुम्हें नमन

—प्रभुदयाल भटनागर 'अंगारे'

हे युग द्रष्टा वीर जवाहर, जन जन करता तुम्हें नमन।
तुम्हें ढूँढ़कर थक गई आँखें, जाने देव कहाँ तुम खो गये।
छोड़ जिन्दगी के आँचल को, मीत मौत के तुम क्यों हो गये ?
आँसू की श्रद्धांजलि देने भीग उठे हैं नयन-नयन।

व्याकुल है सुर-सरि कालिंदी, सूना-सूना वृन्दावन।
आहें भरती फिरे हवायें, कण-कण करता आज रुदन।
बोझिल हैं रजनी की आँखें, भारी-भारी-सा हर मन !

सूर्य-किरण के रथ पर चढ़ कर, आओ जग के मीत जवाहर।
फिर से लो अवतार धरा पर, मौन-मौनता को दे दो स्वर !
जीवन-दान हमें दो आकर—कहाँ छिपे जग-जीवन-धन !

पुरुषार्थी वीर जवाहर

— उत्सा रानी पालित

पुरुषार्थी था वीर जवाहर, पौरुष में बलवान था।
महाप्रतापी वीर यशस्वी, भारत का अभिमान था ।।
शान्ति-दूत देवर्षि-पुत्र, जन-गौरवपूर्ण महान था।
भारत-माता की गोदी में जगमग दीप समान था ।।
विश्व विजन में गर्जन करता, अभिनव सिंह समान था।
भारत के गौरव के हित वह दुश्मन पर पवमान था ।।

स्वर्गलोक का देव, विश्व में भारत का सम्मान था।
जननी जन्मभूमि का प्यारा, सम्पत्ति और निधान था॥
बच्चों का चाचा नेहरू, जन-सेवा का वरदान था।
भारत का था भाग्यविधाता, जनता का कल्याण था॥
जिन्दा रहा जगत में सबकी आँखों का तारा बनकर।
चला गया पर अमर हो गया विश्व-विजय-नारा बनकर॥

युग पुरुष का युग-दान

—सुरेन्द्रनाथ

छोटे से बड़ा होना कुछ तो आसान होता है
पर बड़े होते हुए भी,
छोटा होना, नम्र होना
बड़ा कठिन काम होता है
जो जितना नवता है : वह उतना ही उठता है
नेहरू ने यह सहज कर बताया है
उसके व्यक्तित्व ने हमें यह सिखाया है
वह फिर ईसा को, गौतम को, राम को
सामने हमारे लाया है
ऐसे ही नम्र युगपुरुषों के बल पर
बहती हैं खूब नहर : सत्य की, अहिंसा की,
बनते है खूब बाँध : श्रद्धा के, प्रेमपूर्ण इच्छा के,
कल-कारखाने खूब चलते हैं : पनपती है शान्ति भी
प्रेरणा पाती है मानवता
उठती है सत्यपूर्ण क्रान्ति भी
और जवान डटे रहते है राष्ट्र-रक्षा के लिए
स्मरण कर उनका सिंहनाद।
और हम उनकी स्मृतियों के गुलाबों को
साँसों की डोर में पिरोते है
और किसान राष्ट्र की क्षुधा शान्त करने को
खेतों में अधिक अन्न बोते हैं
ऐसे युग-पुरुष महान् होते है

और वे किसी एक देश के नहीं, सम्पूर्ण विश्व के होते हैं
इनकी बदौलत ही शराफत हर दिल पर राज करती है,
ऐसे इन्सान पर इन्सानियत भी नाज़ करती है !

पग-पग दीप धरे

—जगदीश सक्सेना

गुलाब की पंखुरियाँ खिड़की से झाँकीं।
मन ने कहा—"तुम हो;
मानव-देवता के शीश चढ़ा एक फूल गुलाब का।"
जीवन के स्याह-सफेद साए, तुमने अपनाये।
बाहर से आया जो, भीतर तक छाया जो,
अंधियारे युग में फिर एक उजल आया जो !!
कुण्ठा-विषपायी बन, जगती को, धरित्री को,
सोने के स्वप्नों की झोली भर लाये।
ले आये शबनम की कश्ती पर फूलों के गाँव में;
शांति, मुक्ति-कूलों की ठंडी-सी छाँव में !!
तेरे निर्देशन पर, राही जिस पथ के हम;
पग-पग पर दीप धरे, तेरी यादों के हम;
मंजिल तक जाने की आज शपथ धारे हैं।
उजाले में बदलेंगे—
जगती पर जितने भी काले अंधियारे हैं !!

शान्ति का पुजारी

—रामलोटन शर्मा 'सुधाधर'

भारत का प्यारा भूरि भारी उत्साह भरा;
सौम्यता स्वतन्त्रता का मित्र वर जाहिर;
उन्नति का मारग-प्रदर्शक त्यों ओजवान;
अमित अनंत गुण राशि गुण माहिर था।
शान्ति का पुजारी सहकारिता सुधारी;
राष्ट्र तरणा का कमनीय पतवारि था !

मोती का लाल, लाल हर देश-देशन का;
अगुवा 'सुधाधर' जू सबका जवाहिर था!!
छाई जगती में चाँदनी-सी कीर्ति जाकी आज;
मारग प्रदर्शकों पै पियूष बरसाती है।
करती निहाल हाल हाल सुख सौरभ है,
गौरवता झाँकी की सुछवि प्रकटाती है।।
ऐसी है सु सीख सुख सागर अपार भरी;
उपमा न जाकी सुधाधर दिखलाती है।
स्वर्ग सुख रास कहे, या कि और खास कहें;
जैसी यह मंजिल अनूप रंग लाती है!

अनंत युगी भस्मी

— देवीशरण सिंह 'ग्रामीण'

वीर जवाहर की भस्मी हूं, कण कण में मिल जाने वाली!
ऐसा मैं कुछ सार लिये हूं, अपने ही उद्गार लिये हूं,
मानव का क्या, महि मण्डल का सारा सारा प्यार लिये हूं।
जलकर बुझकर तुल जाऊँगी, उड़कर घुलकर मिल जाऊँगी,
मिल जाऊँगी, मिल जाऊँगी—जहाँ मिला है जन्म, मनोरथ !
शान्ति वहीं मैं पा जाऊँगी, शान्ति शान्ति रट लाने वाली!
वीर जवाहर की भस्मी हूं, कण कण में मिल जाने वाली!!

मेरा है सब कोई अपना, सब हैं सच औ' सब है सपना,
ये है क्या औ' वे हैं क्या, यह कहना जग की मात्र कल्पना!
जलो किन्तु मैं मूल रूप हूं, कहने को तो फूल रूप हूं,
तर्क-तहों से मुझे न ढाँको, मैं भस्मी निर्मल स्वरूप हूं।।
नहीं छुपूँगी, नहीं लुकूँगी, आडम्बर से नहीं ढकूँगी……
वीर जवाहर की भस्मी हूं, कण कण में मिल जाने वाली!!

ममता से मुझको मत मोड़ो, यह अटूट नाता मत तोड़ो,
गंगा जमुना का संगम औ' श्रम जल-कण मेरे कण जोड़ो!!
बिखरा देना मुक्त गगन में, कृषकों के श्रम के प्रांगन में।
अंश भेजना संगम को कुछ, इस तन मन के मौलिक ऋण में!!

देश-प्रेम वन्धुत्व, विश्व मर्यादाओं में बँधी रहूंगी,
बँधी रहूंगी, बँधी रहूंगी, युग स्वच्छन्द बनाने वाली !
वीर जवाहर की भस्मी हूं, कण कण में मिल जाने वाली !!

शांति-दूत तुम वीर जवाहर

—सुधा पाण्डेय 'शवनम'

नेहरू
युग मानव नेहरू
सच्चे अर्थों में तुम,
भारत के असली स्रष्टा थे।
चीन-पाक के मसलों पर
तुमने सोचा था,
शान्तिदूत तुम वीर जवाहर
युग के साथ चले चलते थे
वीर भूमि के युग दृष्टा थे ।।
भारत खूब सजा-सँवरा जो,
तुमने उस पर मेहनत की थी।
संकट की हर अग्नि-परीक्षा में,
मन की आहुति दी थी ।।
सत्रह वर्षों तक कांटों की सेज,
फूल-खुशबू में विचरे।
चीन-पाक की हर ओछी,
हरकत पर तुम थे कितने गहरे !
नेहरू जी थे स्रोत प्रेरणा के
अच्छे-खासे वक्ता थे।
शान्ति दूत तुम वीर जवाहर,
वीर भूमि के युगदृष्टा थे ।।

सत्ताईस मई चौंसठ की शाम

—गजानन्द शर्मा

सूरज गतिहीन है किसके लिए ?
किसके लिए बादलों ने आंसू बहाया ?
किसके लिए हाल पूछने स्वय भूकम्प आया ?
खामोश क्यों है हर दिशा ?
अरे ! यहाँ हर बाग रोता है—
कहता है :
कोई 'लाल गुलाब' तोड़ ले गया !

मोती का जवाहर लाल अमर है !

—शिवप्रसाद पाण्डेय 'शिव'

मोहन मय जीवन था जिनका, मोह नहीं निज जीवन का।
तीव्र तपस्या तपकर फेरी स्वतंत्रता की मन मनका ॥
काव्य कल्पना ज्योति यही या श्री की प्रभा चमकती थी।
जलती दीनों की आह-अग्नि या चिता-चिता धधकती थी ॥
वाचस्पति धर देह बना नित संन्यासी मधु जीवन का।
हवन किया नित देश-यज्ञ में जिसने सुख तन मन धन का ॥
रहा न क्या आनन्द उसे आनन्द-भवन उपकक्षों में !
लागी लगन राष्ट्र के पावन कृष्ण भवन के कक्षों में !!
लखो साधु का वेष पूर्ण, धारे केसरिया बाना था।
अवनी तल के जलधि कुण्ड से प्रगटा मोती दाना था ॥
महामान्य सम्पूर्ण विश्व के, शांति-यज्ञ साधक योगी।
रसा रसातल व्योम व्योम पर बने तुम्हारे सहयोगी ॥
है अमर तुम्हारी कीर्ति कलित भारत के उर-प्रांगण में।
बजे दुंदुभी सुरपुर में नित, विचरो तुम नील गगन में !!

मेरे जवाहर

—कमलेश मलिक

'मेरे जवाहर' बुदबुदा कर, सोती धरा भी कुलमुलाती।
फिर स्वप्न का आभास पाकर, नम आँख बरबस छलछलाती ॥
तब प्रश्न कर उठती दिशायें, क्यों तू बिलखती चेतना में ?
बिछुड़ा कहाँ वह, अति निकट है, जो छा रहा अवचेतना में ॥
तव वक्ष पर उसके हृदय का मृदु नीर बहता है हिमानी।
तेरे करोड़ों अंकुरों में, है उग रही आशा सुहानी ॥
सब कुछ लुटाकर माँगता है, उस प्यार का प्रतिदान दे दे।
गणना न कर तू उड्गनों की, हर मनुज को नव प्राण दे दे ॥
ओ युग पुरुष ! वीणा तुम्हारी, आसावरी गाती रहेगी।
उस स्वर्ग से वाणी तुम्हारी, आशीष बरसाती रहेगी ॥

तुम आए

—छबीलदास

था मूक, शान्त, निःशब्द महासमुद्र।
लाखों यातनाएँ, असंख्य पीड़ाएँ
पराधीनता के अपमान की चोटें—
अपने अन्तर में समेटे तुम आए
साथ एक तूफ़ान लाए
मूक समुद्र को उफना गए
सोये सिंहो को जगा गए
कोमल हृदयों को झकझोर गए
किसी को कुछ बिना बताए चुपचाप चले गए !
पर अपना तूफ़ान करोड़ों भारतीयों को उपहार में दे गए।

———

युग पुरुष ! तुम लो प्रणाम

—रवीन्द्रप्रकाश कुलश्रेष्ठ

हे मानवता के अमर मसीहा, जन-जन के भारत-रत्न ललाम।
युग-पुरुष ! तुम लो प्रणाम ॥
स्वातंत्र्य-समर के तुम सेनानी, नेतृत्व का ही वरदान तुम्हें।
तुम जन्मजात भारत-हृदय, जन-सेवा का अरमान तुम्हें ॥
तुम्हारा रक्त, देह और अंश, आ रहा सभी देश के काम !

तूफानी तिमिर अमाओं में, तुम बने रहे स्थिर उज्ज्वल नक्षत्र।
प्रत्येक कुहासे का हृदय चीर, ज्योति पुंज बने रहे तुम सर्वत्र ॥
तुम्हारी बाती रही अकम्पित, तुम्हारा नेह बना रहा अविराम।

तुम रहे भारत-जन आराध्य, विश्व के एक चहेते व्यक्ति।
तुमको पाकर था भरा भरा, तुमको खोकर हो गया रिक्त ॥
प्रेरणा एक सतत बढ़ने को, बस रह गया तुम्हारा काम।

गंगा जी से प्यार था जिसको

—साहिल झांसवी

जिसकी हर तक़दीर में जादू जिसकी इक इक बात पयाम।
जिसका मरना देश की खातिर, जिसका जीना देश के नाम ॥
जो फूलों की सेज़ पे सोया, जिसको हर आराम मिला।
भारत माँ की गोद में लोगो ऐसा भी इक फूल खिला ॥
गंगा जी के तट पर जिसने जीवन का आगाज़ किया।
गंगा जी हो धन्य तुम्हारे 'मोती' को जो 'लाल' दिया ॥
गंगा जी ने 'लाल' में अपने वो मौजों का जोश दिया।
देश-भक्ति जागी तन में, 'लाल' में ऐसा होश दिया ॥
आजादी की खातिर दिल में दुःख के सौ अरमान लिए।
हँस हँस कर दुःख झेले उसने, भारत माँ का मान लिए ॥
आजादी की राह पे जिस दम देश का ये मेहमान चला।
जिसकी हर आवाज पे ए दिल देश का हर इन्सान चला ॥
उसने अमन की जंग से आखिर देश को यूँ आजाद किया।
आजादी दिलवा कर उसने भारत माँ को शाद किया ॥
दी शम्मे उम्मीदे बुझा इक रोज हवा के झोंकों ने।
सुनते ही उठा इक शोरे अलम और अश्क बहाये लोगों ने ॥
गंगा यमुना की मौजों में राख को ज्यों ही सौंप दिया।
मौजों की आवाज से ए दिल हलका-सा साज उठा।
गंगा जी का 'लाल' जो बचपन गंगा जी की गोद पला।
गंगा जी से प्यार था जिसको गंगा जी के पास चला ॥

अस्त हो गया !

—शिवकान्त पाण्डेय 'विचित्र'

सूर्य देश का अस्त हो गया !
निस्पन्दित हो गयी पावन गंगा, फटा धरा का पुष्पित अंचल।
काँप उठा गिरिराज हिमांचल, सर्व देश निस्तब्ध हो गया !
तूफानों में जो अडिग रहा, जिसने भारत को स्वर्ग बनाया।
सँभाला इतिहास बरसों का, वही आज हमसे रूठ गया ॥
सूर्य देश का अस्त हो गया !!

पंचतत्त्व और इतिहास

—उदयनारायण सिंह

पंचतत्व का रूप आज अपरूप हो गया !
तत्व तत्व में बिखरा,
निखर स्वरूप हो गया !
ओ गतिमय इतिहास, मौन क्यों ?
शून्य पृष्ठ है,
युग का पुरुष, युगों का स्रष्टा,
काल-वृत्त का केन्द्र,
परिधि का द्रष्टा !
अनुभव का अभियान न जाए व्यर्थ,
सजग हो ! रूप धरो !

सन्देश

—कांतिलाल साहू

मैं मर गया, फिर भी जिन्दा हूँ;
मैं साथ हूँ सदा तुम्हारे, भले मुर्दा हूँ !
तुम भूल जाओ लोगो मेरे कफ़न को;
अब याद करो अपने प्यारे वतन को !
कमी है अभी इस देश में उसे करो पूरा;
यों न सोचो कभी दूसरे का बुरा !
नौजवानों बढ़ो, दूर करो देश के अँधेरे को;
चमका दो देश में तरक्की के सितारों को !
तुम सब सदा रहे अगर एकता से मिलकर;
तो बन जायेगा भंखार में एक नया मंजर !
लोगो ! कुचल न देना मेरे इन अरमानों को;
पूरा कर ही देना, मेरे इन हृदय के सपनों को !